ओ३म्

THE JAIMINIYA OR TALAVAKARA UPANISHAD BRAHMANA.

DEVANAGARI TEXT WITH INDEXES.

PREPARED FROM THE EDITION, IN ROMAN SCRIPT

OF

SHRI HANNS OERTEL PH. D.

BY

PANDIT RAMA DEVA, B. A.

WITH

AN INTRODUCTION ON THE HISTORY OF SAMAVEDA LITERATURE.

BY

BHAGAVAD DATTA.

MEHARCHAND MUNSHIRAM
SANSKRIT & HINDI BOOK-SELLERS
NAI SARAK. DELHI-6.
FEBRUARY 1921.

FIRST EDITION, 1,000 Copies.

Price 6 Shillings.

ओ३म्

दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला।

अनेक विद्वानों की सहायता से।

भगवद्दत्त
संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान-विभाग
दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा
सम्पादित।

ग्रन्थाङ्क ३।

श्रीमद्दयानन्द महाविद्यालय संस्कृतग्रन्थमाला सं० ३

ओ३म्

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

अथवा

तलवकार-उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

पं० रामदेव बी० ए०

द्वारा

श्रीमान् हन्नस ओर्टेल, पी० एच० डी०

महाशयस्य

रोमनलिपि-संस्करणात् देवनागर्य्यां लिपिकृतम् ।

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक दयानन्दकालेज, लाहौर,

लिखित

भूमिका-सहितम् ।

आर्य्य सम्वत् १९६०८५३०२० ।

विक्रम सं० १९७७ । सन् १९२१ ई० ।

दयानन्दाब्द ३८ ।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति मूल्य ॥) रु०

पं० भैरवप्रसाद के प्रबन्धसे विद्याप्रकाश प्रेस चह्न डमहल्ला लाहौर मे छपा ।

Printed by Bhairo Prasada,
MANAGER, VIDYA PRAKASHA PRESS, LAHORE.
AND PUBLISHED BY
THE RESEARCH DEPARTMENT, D. A. V. COLLEGE, LAHORE.

The Publications of this series can also be had of—

1. MESSRS. LUZAC & Co.,
46 Great Russell Street,
London W. C.

2. Lala Moti Lal Banarsi Dass, The Punjab Sanskrit Book Depot, Said Mittha Bazar, Lahore.

3. Lala Mehr Chand Lachhman Dss, Sanskrit Booksellers, Said Mittha Bazar, Lahore.

4. Pt. Wazir Chand, Vedic Book Depot, Mohan Lal Road, Lahore.

॥ ओ३म् ॥

भूमिका ।

सामवेदीय वाङ्मय का इतिहास ।

परमात्मा से सौवेद का प्रादुर्भाव ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

ऋ० १०।९०।९॥ यजु: ३१।७॥ तै० आ० ३।१२।४॥

उस व्यापक सर्वपूज्य परब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद प्रादुर्भूत होते हैं। अथर्ववेद प्रसिद्ध होता है उस से, यजुर्वेद उस से प्रकट हुआ।

(पूर्वपक्ष) 'ऋचः' आदि पद बहुवचनान्त हैं, अतः इनका अर्थ ऋग्वेद आदि कैसे हुआ? इनका अर्थ तो यही है कि ऋचाएं, साममन्त्र और छन्द उत्पन्न हुए।

(उत्तरपक्ष) यह सत्य है, कि 'ऋचः, सामानि,' और 'छन्दाँसि' पद बहुवचनान्त हैं, पर साथ ही 'यजुः' पद एकवचन में भी है। यदि तुम्हारी बात मानी जावे तो 'यजुः' पद से तुम क्या अभिप्राय लोगे?

(पूर्वपक्ष) 'यजुः' पद यहां जात्यर्थ में एकवचन होता हुआ भी यजुर्मन्त्रों का बोधक है, यजुर्वेद का नहीं।

(उत्तरपक्ष) यह बात यहां न घटेगी क्योंकि 'छन्दाँसि' पद पर पूर्ण विचार किसी और परिणाम पर ले जाता है। देखो! 'छन्दाँसि' पद यहां किन्हीं मन्त्र-विशेषों का बोधक नहीं है। दयानन्द सरस्वती

में इसी पर विचार करते हुए लिखा है–'वेदानां गायत्र्यादिच्छन्दो ऽन्वितत्वात्पुनश्छन्दाँसीतिपदं चतुर्थस्याथर्ववेदस्योत्पत्तिं ज्ञापयतीत्यवधेयम्।' (ऋ० भाष्यभू० वेदोत्पत्तिवि०) अर्थात् 'वेदों में सब मन्त्र गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं, फिर (छन्दाँसि) इस पद के कहने से चौथा जो अथर्ववेद है उस की उत्पत्ति का प्रकाश होता है।' अन्यथा 'छन्दाँसि' का यहां कोई प्रयोजन नहीं। इस अर्थ में अन्य प्रमाण भी देखो।

(१) "ऋचाम्......................गायत्रं च्छन्दः।
यजुषां......................त्रैष्टुभं छन्दः।
साम्नाम्......................जागतं च्छन्दः।
अथर्वणां......................सर्वाणि छन्दांसि।"

गो० ब्रा० १।१।२६॥

वैदिक विचार में यह सुप्रसिद्ध है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द सम्बन्धी है [यद्यपि यह अनुसन्धेय है कि ऋग्वेद में गायत्री(२४५०) की अपेक्षा त्रिष्टुप् (४२५३) क्यों अधिक है ?] यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द सम्बन्धी और सामवेद जगती छन्द सम्बन्धी है। अब रहा अथर्ववेद, सो वह पूर्वोक्त गोपथब्राह्मण के प्रमाणानुसार सर्व-छन्द-सम्बन्धी है। उस का किसी एक छन्द से सम्बन्ध-विशेष नहीं। यही कारण है कि उपस्थित मन्त्र में 'छन्दाँसि' पद से अथर्ववेद का ग्रहण होता है।

(२) प्रस्तुत मन्त्र-सम्बन्धी एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य है। अथर्ववेद में यह मन्त्र निम्नलिखित प्रकार से आया है—

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दो ह जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत॥

अथर्व० १६।६।१३॥

यहां 'छन्दांसि' के स्थान में 'छन्दो ह' पाठ है। इस प्रकार पाठ में भेद कर देने से परमात्मा ने मन्त्रों द्वारा ही अन्य मन्त्रों का व्याख्यान कर दिया है। यह मन्त्र उन्नीसवें काण्ड का है, और यद्यपि पञ्चपटलिका की भूमिका में लिखे अनुसार हम अभी तक इस काण्ड के संहितान्तर्गत होने के विषय में कुछ नहीं कह सकते, फिर भी यह तो सब को स्वीकार करना पड़ेगा कि बहुवचनान्त 'छन्दाँसि' पद का अर्थ एकवचन 'छन्द' अर्थात् (पूर्व प्रमाणों की दृष्टि से) अथर्ववेद ही है। रहा क्रियापद 'जज्ञिरे'। सो वह व्यत्यय ही समझना चाहिये; यद्यपि ऐसे व्यत्ययों के उदाहरण सम्प्राप्त वैदिक ग्रन्थों में अत्यल्प मिले हैं।

पूर्वोद्धृत अथर्ववेद के मन्त्रों से निश्चय होता है कि 'छन्दांसि' आदि पदों का अर्थ एक वचन में ही है। ऐसी अवस्था में यजुः पद भी यजुः मन्त्रों का जाति-वाचक न रहेगा। इस विषय में अन्य प्रमाण देखो—

(३) यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्। सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥

अथर्व १०।७।२०॥

इस प्रमाण में 'यजुः' पद एक वचन में है, और अथर्वाङ्गिरस स्पष्ट ही ब्रह्मवेद का द्योतक है। अतएव 'ऋचः' और 'सामानि' पदों का अर्थ भी ऋग्वेद और सामवेद ही होना चाहिये।

विचारान्तर्गत "तस्माद्यज्ञात्" ऋ० १०।९०।९ मन्त्र की व्याख्या में सत्यव्रत सामाश्रमी त्रयीपरिचय तथा निरुक्तालोचन में लिखते हैं कि 'सामवेद छन्द और गान दो भागों वाला है। सो छन्द भाग का ग्रहण छन्दांसि पद से और गान भाग का ग्रहण सामानि पद से करना चाहिये।' इस का कुछ खण्डन तो हरिप्रसाद

जी ने वेदसर्वस्व के उपोद्घात पृ० १५ पर किया है। यद्यपि हम उनके विचार-क्रम से सहमत नहीं, तथापि उन के इस परिणाम के कि गान भाग तो मूलसंहिता का गेय-रूपान्तर ही है, अनुकूल सम्मति रखते हैं। इस गान भाग के लिये कहीं अन्यत्र मन्त्रों में 'सामानि' वा 'साम' पद प्रयुक्त हुआ होता तो सत्यव्रत जी का पक्ष कुछ ठहर सकता; पर ऐसा है नहीं, अतः उनका पक्ष निराधार होने से सम्मान योग्य नहीं।

सत्यव्रत जी के पक्ष को एक बात कुछ आश्रय दे सकती है, यद्यपि यह उन्हों ने स्वयं नहीं लिखी। अथर्ववेदीय पिप्पलाद शाखा में 'सामानि यस्य लोमानि' के स्थान में 'छन्दांसि यस्य लोमानि' पाठ आया है। ऐसी दशा में सत्यव्रत कह सकता था कि 'छन्दांसि' पद 'सामानि' का पर्यायवाची है, और सामवेद के छन्द भाग का द्योतक है। यह बात भी सत्य नहीं ठहरती क्योंकि 'सामानि' आदि पद जैसा आगे चल कर और भी विदित हो जायगा सामवेद वाचक हैं। वैसा कोई छन्द वेद है नहीं, और 'छन्द' पद अथर्ववेद वाची सिद्ध हो चुका है, अतः पिप्पलाद का पाठ जब तक कि उस शाखा के अन्य लिखित ग्रन्थ न मिलें (जो कि बहुत कम सम्भव है) अशुद्ध ही कहा जायगा।

विदेशीय (पारसीक) भाषा में छन्द का अर्थ।

भाषा-विज्ञानी जानते हैं कि छन्द शब्द ही पारसीक भाषा में ज़न्द बना है। यही ज़न्द पारसीकों का धर्मग्रन्थ है। इस में अथर्वन पुरोहितों का नाम भी कई वार आया है। हाग के मतानुसार तो इस में आया हुआ एक मन्त्र भी अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि ज़न्द का अथर्ववेद से सम्बन्ध-विशेष है, अतएव छन्द शब्द का अर्थ पूर्वोक्त मन्त्र में अथर्ववेद ही युक्तियुक्त है। ऐसी दशा में 'सामानि' आदि पद भी सामवेद आदि के वाचक हैं।

ब्राह्मणग्रन्थों में सामानि पद का अर्थ ।

(१) सामवेद आदित्यात् (ऐ० २५।७)

(२) आदित्यात्सामानि (कौशी० ६।१०)

(३) सूर्यात् सामवेदः (श० ११।५।८)

(४) सामान्यादित्यात् (छाँ० उ० ४।१७।२)

(५) सामवेद आदित्यात् (जै० उ० ब्रा० ३।१५।७)

(६) सामवेदोऽमुष्मात् (षड्विं० ४।१)

(७) आदित्यात् सामवेदम् (गो० १।६)

इन सात प्रमाणों में से दूसरे और चौथे प्रमाण में 'सामानि' पद आया है, अन्य पांच प्रमाणों में सामवेद । ये ब्राह्मणवाक्य एक प्रकार से पूर्वोक्त वेद मन्त्र की व्याख्या में ही कहे गये हैं। इन में अधिकांश स्थलों में सामवेद का प्रयोग बता रहा है कि प्राचीन ब्रह्मादि ऋषियों की दृष्टि में भी इन स्थलों में 'सामानि' पद से सामवेद का ही अभिप्राय होता था। अतएव "तस्माद्यज्ञात्" मन्त्र का इस लेख के आरम्भ में किया हुआ अर्थ ही सत्य है, और दूसरा नहीं। इस मन्त्र का यही अर्थ ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने अनेक ग्रन्थों में किया है। हम ने तो उसी का उद्धरणमात्र दिया है।

इस कल्पारम्भ में सामवेद सब से प्रथम किस को प्राप्त हुआ ?

पूर्व लेख से यह स्पष्ट होगया होगा कि सामवेदादि वेद उसी यज्ञ=स्कम्भ=परब्रह्म से प्राप्त हुए। यहां यह विवाद नहीं उठाया जायगा कि वेद-ज्ञान क्यों परमात्मा का है? इसे किसी अन्य अवसर पर लूंगा। यहां अब यही निर्णय करना है कि इस कल्पारम्भ में सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ था अनेकों को।

अनेकों को प्राप्त हुआ, ऐसा मानने वाले बहुत थोड़े हैं। उन के पक्ष में कोई प्रमाण भी नहीं है। जो यह मानते हैं कि सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ, वे दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक भाग वालों का मत है कि सामवेद अग्नि के अधिष्ठाता देव को प्राप्त हुआ। उसी से मन्त्र-द्रष्टा ऋषियों को प्राप्त हुआ। दूसरे भाग वालों का मत है कि मनुष्य-देह-धारी अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ जो इस कल्पारम्भ में अमैथुनि सृष्टि का एक सभासद् था। इस पर विचार—

(१) अग्नि आदि द्रव्यों का कोई चेतन जीव अधिष्ठाता है अर्थात् इनको स्व-शरीरवत् बनाये है, ऐसा वेद में कहीं नहीं आया। हां, अग्नि ईश्वरदेव का नाम तो सर्वत्र प्रसिद्ध है। इस का विशेष व्याख्यान भगवान् दयानन्द सरस्वती की ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका में मिल सकता है। इसी पक्ष के खण्डन में 'जड़ाग्नि से ऋग्वेद का प्रकाश हुआ' इस का खण्डन हो जाता है। कारण कि जड़ को ज्ञान होना असम्भव है।

(२) दूसरे मत में भी एक भारी आपत्ति आती है। पूर्वोक्त ब्राह्मणग्रन्थों के सात प्रमाणों में सूर्यात्=आदित्यात्=अमुष्मात् पद आये हैं। इस पर—

(पूर्वपक्ष) यदि सूर्यादि मनुष्य देहधारियों के नाम होते तो उन के पर्याय आदित्य आदि और 'वायु' का पर्याय "योऽयं पवते" शत० ११।५।८।२ न आते। ब्राह्मणग्रन्थों में "अमुष्मात्" प्रयोग स्पष्ट इसी सूर्य के लिये आया है। और वायु यदि कोई मानव समाज का सभासद था तो क्या वह "योऽयं पवते" अर्थात् "जो यह बहता है" ऐसा ही था? क्या मनुष्य भी पवन समान बहते हैं?

(उत्तर पक्ष) प्राचीन संस्कृत वाङ्मय के न जानने का ही कारण है कि ऐसे पूर्वपक्ष खड़े होते हैं। देखो महाभारत को—

(क) वहां कर्ण के समीप उस के पिता सूर्य का आना लिखा है। यह सूर्य कोई देवता न था, प्रत्युत मनुष्य देहधारी व्यक्ति ही था। उस के निम्नलिखित नाम महाभारत वनपर्व अध्याय ३०१ में आये हैं।

अभिप्रायमथो ज्ञात्वा महेन्द्रस्य विभावसुः।
कुण्डलार्थे महाराज सूर्यः कर्णमुपागतः ॥६॥
स्वप्नान्ते निशि राजेन्द्र दर्शयामास रश्मिवान्।
कृपया परयाऽऽविष्टः पुत्रस्नेहाच्च भारत ॥८॥
ब्राह्मणो वेदविद्भूत्वा सूर्यो योगर्द्धिरूपवान् ॥६॥
अहं तात सहस्रांशुः सौहृदात्त्वां निदर्शये ॥२२॥

इस का संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि योगसिद्धि-समन्वित सूर्य महात्मा ब्राह्मण वेष में रात्रि के अन्तिम प्रहर में कर्ण के जागने पर उसके समीप आया। उस सूर्य के वहां कई नाम आये हैं जो सूर्य शब्द के पर्याय हैं, यथा विभावसु=रश्मिवान्=सहस्रांशु। अब रामायण पर किञ्चित ध्यान दो—

(ख) वाल्मीकिरामायण में वानर जाति का सुविख्यात वर्णन है। वहां भी मुनि वाल्मीकि वानर शब्द के अनेक पर्याय उस जाति के लिये प्रयोग में लाते हैं। ध्यान रहे कि मिथ्या-कथा युक्त विवरण को छोड़ कर वानर जाति मानवेतर जाति सिद्ध नहीं हो सकती। और सत्य तो यह है कि (क) और (ख) स्थलों में सूर्य और वानर के क्रमशः पर्याय-प्रयोग को देख कर ही मध्यम कालीन लोगों ने इन्हें देवता वा पशु मान लिया था। अन्त में ब्राह्मण ग्रन्थों के वाक्य-प्रयोग पर भी ध्यान देना चाहिये—

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।११।८ में नचिकेता की कथा आई है। वहां उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम मृत्यु ही कहा है। कठोपनिषद् में भी यही कथा बड़े विस्तार से आई है। वहां मूल ऐतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कार भाग मिश्रित करके औपनिषद्-भाव अधिक खोला गया है। पर सब से अधिक विचारणीय यह है कि यहां मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम दिये गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं यथा "यम १।५ अन्तक १।२६"।

(घ) वेद के ऋषियों के तो कई ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी में आये हैं जैसे "अग्निः पावकः" ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तपसः ऋ० १०।१४१॥ यहां विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणों से यही निश्चित होता है कि बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति-विशेषों के नामों के यदि कोई पर्याय हों तो वे भी उसी के नाम के लिये प्रयुक्त हो जाते थे। और जैसे महाभारत में 'सूर्य' को 'रश्मिवान्' आदि कहा है वैसे ही शतपथ ब्राह्मण में 'वायु' को 'योऽयं पवते' कह दिया गया है। अतएव ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणों में "आदित्य" मनुष्य देहधारी ऋषिदेव है, कोई जड़ वा जड़ सूर्य का अधिष्ठाता देव नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ के समय सब से पहले परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया। उसी ने ब्रह्मा आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैलता गया। षड्विंशब्राह्मण में जो "अमुष्मात्" प्रयोग आया है उस का यही अभिप्राय है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य वा सूर्य सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाधिस्थ दशा में शिर की नाड़ियों में मन के जाने से इस वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग छ:

सामवेद की शाखाएं।

आर्यावर्त्त में सृष्टि के आरम्भ से लेकर दीर्घ कालपर्यन्त लौकिक और वैदिक भाषा का बहुत प्रचार रहा। उस समय वेदादि शास्त्र आज कल की अपेक्षा अल्पपरिश्रम से ही समझे जाते थे। तब प्रवचनकर्त्ता आचार्य वा ऋषि अपने शिष्यों के समझार्थ कठिन वैदिक शब्दों के स्थान में अन्य सरल वैदिक शब्द प्रयुक्त करके अथवा कुछ २ व्याख्या करके पढ़ाया करते थे। उतने से ही शिष्य यथार्थ अभिप्राय समझ लेते थे। तब किन्हीं विस्तृत भाष्यों की आवश्यकता न थी। यही ऋषि-प्रवचन था जो पीछे शाखा आदि नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसी प्रवचन के सम्बन्ध में भाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने लिखा है—

"न हि च्छन्दांसि क्रियन्ते। नित्यानि च्छन्दांसीति। यद्यप्यर्थो नित्यो या त्वसौ वर्णानुपूर्वी सानित्या। तद्भेदाच्चैतद्भवति काठकं कालापकं मौदकं पैप्पलादकमिति।" ४।३।१०१॥

अर्थात् वेद तो क्या, साधारण ग्रन्थों के समान शाखाएं भी बनाई नहीं गई। इनका शब्दार्थ नित्य है। हां, अर्थ के नित्य होते हुए भी वर्णानुपूर्वी अनित्य है। इसी के भेद से ऋषियों ने नित्य वेदार्थ खोला है। और इसी भेद से काठक आदि अनेक शाखाएं हुई हैं।

(प्रश्न) मूल सामवेद जिस की आगे शाखाएं बनीं अब कहां है? उस में ऋग्वेदीय ऋचाएं न होनी चाहियें। अब तो जितने ग्रन्थ सामवेद के नाम से मिलते हैं उन सब में ऋग् भाग सम्मिलित हैं।

(उत्तर) मूल सामवेद था तो अवश्य क्योंकि बिना इस के साम-शाखाएं बनतीं कैसे, और प्रवचन किस का होता? उसी मूल का वर्णन ऋग्वेदादि वेदों और ऐतरेय आदि ब्राह्मणों में आया है। वह मूल भी प्रतीत होता है, प्रवचन के बल से पीछे ऋषि-विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गया। ऋग्वेदीय ऋचायें सामवेद में न थीं

और न हैं। हम यह कह सकते हैं कि ऋग्वेद और सामवेद के अनेक मन्त्र सदृश हैं। उन्हीं मन्त्रों का पारिभाषिक नाम 'ऋक्' भी है। कर्त्ता परमात्मा ने प्रयोजन-विशेष के लिए ये समान मन्त्र दो वेदों में रक्खे हैं। मिथ्या-इतिहास-प्रचारक जो लेखक हमारे इस कथन को नहीं मानते उन्हें हम ऋग्वेद का एक मन्त्र बताते हैं—

गायत्रेण प्रति मिमीते अर्कमर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम्।
वाकेन वाकं द्विपदा चतुष्पदाक्षरेण मिमते सप्त वाणीः॥
ऋ० १। १६४। २४॥

सुप्रसिद्ध एकसौ चौसठवें सूक्त का यह चौबीसवां मन्त्र है। उन पूर्वपक्षी लेखकों के मतानुसार प्रथम मण्डलीय होने से यद्यपि यह मन्त्र अत्यन्त पुराना नहीं, तथापि बहुत नया भी नहीं है। इस मन्त्र में भी स्पष्ट ही साम में ऋचाओं का होना जताया गया है। अर्थ इस का अतीव सरल है। पूर्व लिखा जा चुका है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द प्रधान और यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द प्रधान है। अर्क पद मन्त्र वा ऋचा का भी पर्यायवाची है। अतएव मन्त्रार्थ यह है—

गायत्री छन्द से अर्क=ऋचा=ऋग्वेद का (जगदीश्वर) प्रतिमान करता है। ऋचाओं से सामवेद का। त्रिष्टुप् छन्द से वाक=यजुर्वेद का। यजु मन्त्रों से वाक=अथर्ववेद का। [जो ऐसी] सात छन्द युक्त वेद वाणी का मान करते हैं [वे कृतकृत्य होते हैं।] इस से पूर्वपक्षियों को भी मानना पड़ेगा कि ऋचाएं वा ऋग्वेदीय मन्त्रों जैसे मन्त्र बहुत पुराने काल से सामवेद में चले आते हैं। हम पूर्व बता चुके हैं कि आर्यैतिह्यानुसार सामवेद आरम्भ से ही संहितारूप में चला आ रहा है, अतः इस दृष्टि से जो सत्य ही है आदि सृष्टि से सामवेद में ऋचाएं चली आती हैं। जो व्यक्ति इन ऋचाओं को साम पाठ से पृथक् जानें, मानों, वह वैदिक वाङ्मय के इतिहास से अज्ञ है।

शाखा-विभाग ।

अब रहा शाखा-विभाग पर विचार। इस पर प्रकाश डालने वाला कोई अति प्राचीन ग्रन्थ हमारे पास विद्यमान नहीं। एक चरण-व्यूह ग्रन्थ ही रह गया है। यह विक्रम से पांच, छः सौ वर्ष पूर्व का ही प्रतीत होता है। इस में पाठभेद का बाहुल्य है। नीचे उसी की साक्षी उपस्थित की जाती है।

चरणव्यूह की साक्षी।

शौनकीय परिशिष्ट।

सामवेदस्य किल सहस्रभेदा भवन्ति। एष्वनध्यायेष्वधीयानास्ते शतक्रतुवज्रेणाभिहताः।

शेषान्व्याख्यास्याम.। तत्र राणायनीयानां सप्तभेदा भवन्ति। (१) राणायनीयाः (२) शाट्यमुग्राः*(३) कालोपा (४) महाकालोपा (५) लाङ्गलायनाः (६) शार्दूलाः (७) कौथुमाश्चेति।

अथर्व—परिशिष्ट।

तत्र सामवेदस्य शाखासहस्रमासीत्। अनध्यायेष्वधीयाना. सर्वे ते शक्रेण विनिहतः [प्रविलीना] तत्र केचिदवाशिष्टाः प्रचरन्ति। तद्यथा।

(१) राणायनीयाः (२) सात्यमुग्राः *(३) कालापाः (४) महा कालापाः (५) कौथुमाः (६) लाङ्गलिकाश्चेति।

महिदास-प्रदर्शित प्रकारान्तर।

तत्र कौथुमाना षड्भेदा भवन्ति। (१) कौथुमाः। (२) आसुरायणाः (३) वातायनाः (४) प्राञ्जलिद्वैनभृतः (५) प्राचीनयोग्याः (६) नैगमीयाः।

कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति। तद्यथा। (१) सारायणीयाः (२) वातरायणीया. (३) वैतधृताः (४) प्राचीनाः (५) तेजसाः (६) अनिष्टकाश्चेति।

* सात्यमुग्रा नाम अधिक युक्त है। महाभाष्य १।१।४॥ १।१।४८॥ पर ऐसा ही पाठ है।

जहां सैकड़ों साम-शाखाओं के नाम विलुप्त हो गये हैं वहां विद्यमान नामों में भी पाठ भेद के कारण एक बड़ा अन्तर पड़ गया है। पूर्वोक्त शाखा-नामों के पढ़ने से यह बात सुस्पष्ट हो जाती है। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने निज व्याख्या में कुछ अन्य नाम भी दिये हैं। उन्हीं का पाठभेद स्वामी हरिप्रसाद जी के वेदसर्वस्व के पृष्ठ १७२ पर मिलता है। पता नहीं उन्हों ने स्व-बुद्धि से पाठ संशोधन किया है अथवा किसी लिखित ग्रन्थ के आधार पर ये नाम दिये हैं। तथापि हम उनके पाठभेदों को कोष्ठों में रख कर महिदास के पाठ जो संवत् १९५१ के काशी-संस्करण में छपे हैं, नीचे देते हैं।

(१) आसुरायणीया (२) वासुरायणीया (३) वार्तान्तरेया [वार्तान्तवेयाः] (४) प्राञ्जल [प्राञ्जलाः] (५) ऋग्वैनविधाः [ऋग्वर्णभेदाः] (६) प्राचीनयोग्याः [७ ज्ञानयोग्याः] (७) राणायनीयाश्चेति। तत्र राणायनीयानां नव भेदा भवन्ति। (१) राणायनीयाः (२)शाट्यायनीयाः (३) शाख्यमुग्राः [सात्वलाः] (४) खल्वलाः (५) महाखल्वलाः (६) काङ्गलाः (७) कौथुमाः[1] (८) गौतमाः[1] (९) जैमिनीयाश्चेति।

पतञ्जलि मुनि कहते हैं "सहस्रवर्त्मा सामवेदः" (महाभाष्य कीलहार्न सं० भाग १, पृ० ९) अर्थात् 'सहस्र शाखा वाला साम वेद है।' उन्हीं सहस्र शाखाओं में से कुछेक का उल्लेख पूर्वोक्त चरणव्यूह के पाठों में है। चरणव्यूह के शाखा-नाश-इतिहास में तथ्य की किस अल्पमात्रा का होना सम्भव है। तदनुसार वर्षा वा किसी विद्युत्-प्रकोप वाले दिन किसी सामशाखीय अध्यापक ने अपनी शाखा का पाठ किया होगा। वह इन्द्र=सूर्य के वज्र=तड़ित की धारा से अपने प्राण नष्ट कर बैठा होगा। साथ ही

१—काशी-संस्करण में किसी अष्ट-पाठ को देखकर कौथुमी, गौतमी छपा है।

इस के ग्रन्थ विनष्ट हो गये होंगे*। परन्तु यह सब दूर की कल्पना प्रतीत होती है। वस्तुतः कालक्रम से ही ये सब शाखाएं लुप्त होती गई होंगी।

सम्प्राप्त तीन शाखाएं।

सम्प्रति सामवेद की तीन शाखाएं ही प्रसिद्ध हैं। चरणव्यूह में भी इन्हीं का उल्लेख है। 'गुर्जरदेशे कौथुमी प्रसिद्धा। कार्णाटके जैमिनी प्रसिद्धा। महाराष्ट्रदेशे राणायनीया प्रसिद्धेति।" अर्थात् गुजरात में कौथमी, कार्णाटक में जैमिनी और महाराष्ट्र में राणायनीय शाखा प्रसिद्ध हैं।

पूर्वोक्त तीन शाखाओं में से कौथुमी शाखा ही सम्प्रति मूल सामवेद माना जाता है। इस का एक कारण तो इस का समस्त भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध होना है। अन्य प्रबल कारणों की आगे खोज होनी चाहिये।

इस सामवेद के आठ ब्राह्मण हम तक पहुंचे हैं। (१) ताण्ड्य महा-ब्राह्मण अथवा पञ्चविंशब्राह्मण अथवा प्रौढ ब्राह्मण अथवा छान्दोग्य ब्राह्मण।(बिबलियोथीका इण्डिका संस्करण संवत् १९२७-३०)। (२) षड्विंशब्राह्मण (जीवानन्द सं० १८८१ सन् तथा "विज्ञापनभाष्य-सहितम," एच० एफ० ईलसिंह सम्पादित, लीडन १९०८)। (३) सामविधानब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पादित १८८० सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सामा० सम्पा० सं० १९५१)। (४) आर्षेय ब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७८ सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रतशा० सम्पा०

* अलबेरूनी लिखता है कि 'उस के काल से कुछ पूर्व ही कश्मीर के वसुक्र नामक ब्राह्मण ने वेदों को लिपिबद्ध करने की प्रथा चलाई थी।' (अलबेरूनी का भारत। भाग दूसरा। श्रीसंतरामकृत अनुवाद। सन् १९२७। पृ० ३१)। हमें इस बात पर विश्वास नहीं।

सं० १९४८) । (५) देवताध्याय वा दैवत ब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पा० सन् १८७३ तथा जीवानन्द सन् १८८१) । (६) उपनिषद् ब्राह्मण-(क) मन्त्रब्राह्मण (सत्यव्रतसा० सम्पा० सं० १९४७ तथा प्रथम प्रपाठकमात्र के० स्टोनर सम्पा० १९०१) (ख) छान्दोग्योपनिषद् (अनेक संस्करण निकल चुके हैं) । (७) संहितोपनिषद् ए० सी० बर्नेल सन् १८७१) । (८) वंशब्राह्मण (ए० सी. बर्नेल सम्पा. १८७३ तथा सत्यव्रत सा० सं० १९४९) ।

कई विद्वानों का मत है कि वस्तुतः सामब्राह्मण एक ही है । वह सम्प्रति चार भागों में विभक्त हो गया है । (१) पच्चीस अध्यायात्मक पञ्चविंशब्राह्मण (२) पञ्च अध्यायात्मक षड्विंशब्राह्मण (३) अष्ट अध्यायात्मक छान्दोग्योपनिषद् (४) दो अध्यात्मक गृह्यकर्म-प्रधान मन्त्रब्राह्मण । सारा ब्राह्मण चालीस अध्याय युक्त था । अन्य पांच ब्राह्मण अनुब्राह्मणमात्र हैं । जब तक सामवेद सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों के शुद्ध वैज्ञानिक संस्करण न छप जावें, तब तक इस विषय पर कुछ कहना हमारे लिये अयुक्त है । इस का विचार तभी होसकता है जब इन ब्राह्मण-ग्रन्थों का काल-निरूपण हो जावे ।

ताण्ड्यब्राह्मण की प्राचीनता ।

अष्टाध्यायी ४। २। १३८॥ पर एक वार्त्तिक है "चरण सम्बन्धेन निवास लक्षणोऽण् ।" इस पर लिखते हुए पतञ्जलिमुनि चरणसम्बन्धी जो (९) ऋषियों को निवास-विचार से तीन भागों में बांटते हैं । " त्रय प्राच्याः । त्रय उदीच्याः । त्रयो माध्यमाः । " काशिकाकार इसी वाक्य को ध्यान में रखकर अष्टा० ४ । ३ । १०४ ॥ पर लिखता है—" वैशम्पायनान्तेवासिनो नव । " आगे चलकर वह कुछ प्राचीन कारिकाएं उद्धृत करता है । उन में से एक का अर्ध भाग यह है —

ऋचाभारुणिताण्ड्याश्च मध्यमीयास्त्रयोऽपरे ॥

अर्थात् ऋचाभ, आरुणि और ताण्ड्य तीनों वैशम्पायन-शिष्य माध्यम=मध्यम भूमि निवासी थे। इन तीनों के अपने २ चरण थे। इन में से ताण्ड्यों की शाखा आरम्भ से कौथुमी ही चली आ रही है। इस का कुछ पता पाणिनीय गणपाठ से लगता है। वहां ६।२।३७ पर यह तीन गण भी दिये हैं। "कठकालापाः। कठकौथुमाः। कौथुमलौकाक्षाः।" हम कह चुके हैं कि कठ और ताण्ड्य आदि सतीर्थ्य=एक गुरु के शिष्य थे। उन में से कठों की अपनी शाखा थी, परन्तु ताण्ड्यों का अपना चरण ही था। इस लिये गण में कठ और ताण्ड्य दोनों की शाखाओं का परिचय देने के लिये "कठकौथुमाः" कहा है। इस कथन में एक बात ध्यान देने योग्य है। सामविधान ब्राह्मण के अन्त में जो ऋषि-परम्परा दी है वहां ताण्ड्य का गुरु प्राजापत्यविधि से बादरायण कहा है। यथा—

सोऽयं प्राजापत्यो विधिस्तामिमं प्रजापतिर्बृहस्पतये प्रोवाच। बृहस्पतिर्नारदाय। नारदो विष्वक्सेनाय। विष्वक्सेनो व्यासाय पाराशर्याय। व्यासः पाराशर्यो जैमिनये। जैमिनिः पौष्पिण्ड्याय। पौष्पिण्ड्यः पाराशर्यायणाय। पाराशर्यायणो बादरायणाय। बादरायणस्ताण्डिशाट्यायनिभ्याम्। ताण्डिशाट्यायनिनौ बहुभ्यः॥

एक ताण्ड्य का वर्णन शतपथब्राह्मण ६।१।२।२५ में आया है— "अथ ह स्माह ताण्ड्यः।" अतः इतना निश्चित है कि चाहे ताण्ड्य कोई भी हो, है वह अतिप्राचीन। तब उस की संहिता क्यों कौथुम हुई और मूल सामवेद क्यों कौथुम कहलाया? इस के विचार के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है।

सूत्रों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से है। (१) मशककल्पसूत्र

अथवा आर्षेयकल्प (डबल्यू० कालेण्ड सम्पा० सन् १९०८)। (२) क्षुद्रसूत्र आर्षेयकल्प का परिशिष्ट ही है (इसी के उत्तर भाग में छपा है)। (३) लाट्यायन श्रौतसूत्र (बिब० इण्डि० सं० १८२८)। (४) गोभिलीय गृह्यसूत्र (क्नापर सम्पा० १८८४ सन् तथा बिब० इण्डि०, द्वि० सं०, सन् १९०८)। (५) श्राद्धकल्प, परिशिष्ट, गोभिल अथवा वसिष्ठकृत (बिब० इण्डि० द्वि० सं० सन् १९०९)। (६) कर्म्मप्रदीप अथवा छन्दोगगृह्यपरिशिष्ट (धर्म्मशास्त्रसंग्रह, सन् १८७६,जीवानन्द संस्करण के पूर्वार्धे पृ० ६०३–६४४ तक,कात्यायन-स्मृति वा कात्यायनविरचित कर्म्मप्रदीप के नाम से छपा है। तथा प्रथम प्रपाठक फ्र० श्रेडर सम्पा०,हल्ले १८८९ सन् तथा बिब० इण्डि० में सन् १९०९और द्वि० प्रपाठक सू० होलस्टाइन सम्पा० हल्ले सन् १८९०)। (७) गृह्यासंग्रह, गोभिलपुत्रकृत (ब्लूमफील्ड द्वारा Z.D. M. G. Vol ३५ में सम्पा० तथा बिब० इण्डि० द्वि० सन् १९१०) । (८) पञ्च-विधसूत्र (सत्यव्रतसा० सम्पा० तथा रि० ज़ीमन सम्पादित १९१३ ब्रेसला)। शिक्षाग्रन्थों में तीन शिक्षा प्रसिद्ध हैं।

(१) नारदीय शिक्षा (सत्यव्रतसा० सं०, दत्तात्रेय सम्पा० लाहौर सन् १९०९ तथा शिक्षासंग्रह काशी में, सन् १८९३)। (२) लोमशीय शिक्षा (शिक्षा संग्रह सं०) (३) गौतमीयशिक्षा (शिक्षा संग्रह सं०)। प्रातिशाख्यों में निम्नलिखित ग्रन्थ हैं।

(१) ऋक्तन्त्र (ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७९)। (२) सामतन्त्र (दयानन्द महाविद्यालय के लालचन्द पुस्तकालय में इस की एक प्रतिलिपि है जो मद्रास गवर्नमेण्ट के संग्रह के एक ग्रन्थ से कराई गई थी)। (३) पुष्पसूत्र वा फुल्लसूत्र (रि० ज़ीमन सम्पादित)।

कुल चौदह (१४) ग्रन्थों का हम ने ऊपर उल्लेख किया है। इन के अतिरिक्त अठतीस (३८) और ग्रन्थ हैं। इन सब के नामादि

जैमिनीय संहिता (von Dr. W. Caland, Breslau, 1917) पृ० १३—१५ पर देखो ।

२. राणायनीय शाखा ।

इस शाखा की संहिता अभी तक नहीं छपी । इस के सूत्र ग्रन्थ निम्नलिखित हैं ।

(१) द्राह्यायण श्रौतसूत्र (कुछ भाग रियूटर सम्पादित लण्डन १९०४ सन्)। (२) खादिरगृह्यसूत्र अथवा द्राह्यायण गृह्यसूत्र (मैसूर राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला १९१३ सन् तथा आनन्दाश्रम पूना सन् १९१४)। (३) गौतमपितृमेधसूत्र (कालेण्ड सम्पा० लाईपज़िग १८९६ सन्) । (४) गौतमस्मृति (स्मृतिसमुच्चय, पूना) ।

राणायनीय-शाखा सम्बन्धी इतने ग्रन्थों का वर्णन करके डाक्टर कालेण्ड महाशय एक विचार उपस्थित करते हैं । वह इतना आवश्यक है कि हम उस का अनुवाद दिये विना नहीं रह सकते—

" परन्तु इन सब ग्रन्थों का राणायनीय-शाखा सम्बन्धी होना अनिश्चित ही है । कर्मप्रदीप पर आशार्क का भाष्य है । उस में वह बताता है कि गोभिलसूत्र कौथमों का ही गृह्यसूत्र नहीं प्रत्युत राणायनीयों का भी है । हेमाद्रि भी अपने श्राद्धकल्प में तीन बार (पृ० १४२४, १४९०, १४६८) गोभिल को राणायनीय-सूत्रकृत् कहता है । यदि यह बात मान ली जावे तो खादिरगृह्यसूत्र राणायनीयों का सूत्र नहीं रह सकता । अस्तु, दक्षिण भारत में शारदूलों के एक खादिर गृह्यसूत्र की विद्यमानता कही जाती है । (देखो Report on a search for Sanskrit mss. in the Bombay Presidency 1892-95, by A. V. Kathavate Bombay, 1901, No. 79) । शारदूल भी सामवेद की एक शाखा है । अब यही खादिर गृह्यसूत्र शारदूल सामगों के खादिर सूत्र से कुछ पाठभेदों को छोड़ के प्रायः मिलता

बताया जाता है। हेमाद्रि के काल में शार्दूल शाखा की ऐतिह्य शृङ्खला अटूट थी, यह भी श्राद्धकल्प से ज्ञात होता है। उस में (पृ० १०७८) पर, वह वेद के उन भागों का उल्लेख करता है जो ब्राह्मणों के भोजन-समय शार्दूल-शाखा वालों को गाने चाहियें। अतएव यह स्पष्ट है कि कम से कम खादिरगृह्यसूत्र में मूलतः शार्दूलों सम्बन्धी गृह्यकर्म थे। परन्तु एक और ऐतिह्य भी खादिर-सूत्र सम्बन्धी है। मैसूर में १८८१ सन् में कण्ठभूषण भाष्य सहित जो गृह्यरत्न छपा है उस में अनेक बार गौतमगृह्यसूत्र का उल्लेख है। उस में जितने भी वाक्य गौतम के नाम से दिये गये हैं, वे सब हमारे खादिरगृह्यसूत्र में मिलते हैं। इस के अतिरिक्त जैसा हम पूर्व कह चुके हैं, हमारे पास एक गौतम पितृमेधसूत्र है, एक गौतम धर्मसूत्र (स्टैनज़लर सम्पा० लण्डन १८७६) * और एक स्मृति भी है। ये सब गौतमों के ग्रन्थ भी हो सकते हैं कि जो सामवेद का गौण भाग है।"

हम ने विद्वान् पाठकों के विचारार्थ श्री कालेण्ड-प्रदर्शित ये सब पत्त उद्धृत कर दिये हैं। अपनी सम्मति किसी और समय पर प्रकाशित करेंगे॥

जैमिनीय शाखा।

इस शाखा के निम्नलिखित ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। (१) जैमिनीय संहिता (Dr. W. Caland's edition, Breslau, 1907.)। (२) जैमिनीय-ब्राह्मण (इस के अनेक खण्ड हन्स अर्टैल ने पाश्चात्य अनुसन्धान पत्रों में प्रकाशित किये हैं। अन्य उपयोगी खण्डों का अधिकांश भाग ग्रन्थरूप में छप गया है-Das Iaiminiya Brâhmana in Auswahal, Amsterdam, 1919) हस्तलिखित सामग्री के अपर्याप्त होने से यह बृहद्ब्राह्मण अभी पूरा नहीं छप सका)। (३) जैमिनीय-उपनिषद्ब्राह्मण (अर्थात् गायत्र्युपनिषद्,

* इसके दो भारतीय संस्करण निकल चुके हैं (१) मैसूर (२) मद्रास।

पूर्वोक्त ब्राह्मण का उत्तर भाग है। ड्रमल बर्नेल सम्पा० १८८४ सन्) (४) आर्षेय-ब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पा० मंगलोर १८७८)। (५) जैमिनीय श्रौतसूत्र अग्निष्टोम-प्रकरण (डी० गैस्ट्रा सम्पा० लाईडन सन् १९०६)*। (६) जैमिनीय-गृह्यसूत्र (edited by Dr. W. Caland, Amsterdam, 1905.)+

जैमिनीय-ब्राह्मण।

"शौनकादिभ्यश्छन्दसि।" ४।३।१०६ के गण में पाणिनि "तलवकार" शब्द पढ़ते हैं। इसी तलवकार ऋषि के नाम पर तलवकार शाखा प्रसिद्ध थी। उसी का अब जैमिनि-शाखा नाम हो गया है। इसका कारण अभी पूर्णतया ज्ञात नहीं। संहिता के समान ब्राह्मण को भी अब जैमिनीय ब्राह्मण कहते हैं।

श्री शङ्कराचार्य केनोपनिषद् भाष्य के प्रारम्भ में लिखते हैं– "केनेषितम्" इत्याद्योपनिषत्परब्रह्मविषया वक्तव्येति नवमस्याध्यायस्यारम्भः। प्रागेतस्मात्कर्माण्यशेषतः परिसमापितानि समस्तकर्माश्रयभूतस्य च प्राणस्योपासनान्युक्तानि कर्माङ्गसामविषयाणि च। अनन्तरं च गायत्रसामविषयं दर्शनं वंशान्तमुक्तम्।"

(अर्थ) "केनेषितम्" से आरम्भ होने वाली, परब्रह्मविषय के कहने वाली उपनिषद् कही जानी चाहिये। यह नवम अध्याय का आरम्भ है। इस से पूर्व (आठ) अध्यायों में यज्ञ कर्म पूरे कहे गये हैं। प्राणोपासना भी कही गई है। तत्पश्चात् गायत्रसाम और वंश कहा गया है।" तलवकार ब्राह्मण का यह वर्णन शङ्कर ने किया है।

जैमिनीयब्राह्मण जो सम्प्रति मिलता है उसका अध्यायक्रम

---

* जैमिनीय श्रौतसूत्र समग्र सभाष्य बड़ोदा राजकीय ग्रन्थमाला में शीघ्र ही छपेगा।

+ जैमिनीय गृह्यसूत्र का कालेण्ड सम्पादित भारतीय संस्करण ला० मोतीलाल बनारसीदास सैदमिट्ठा बाज़ार लाहौर द्वारा शीघ्र प्रकाशित किया जायगा।

शङ्कर-प्रदर्शित अध्यायक्रम से विभिन्न है। प्रथम तीन अध्याय हैं। पश्चात् उपनिषद् ब्राह्मण आरम्भ होता है। उस में चार अध्याय हैं। केन उपनिषद् चतुर्थाध्याय के अठारहवें खण्ड से आरम्भ होता है, और इक्कीसवें पर समाप्त हो जाता है। वंश इस से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। सात खण्ड इस से आगे और हैं। सो सारे मिल के ब्राह्मण के सात अध्याय होते हैं। यदि आर्षेय-ब्राह्मण भी मिला लिया जावे तो सारे आठ अध्याय होते हैं। सम्भव है और ग्रन्थ मिलने पर इस बात का निर्णय हो जावे।

उपनिषद् ब्राह्मण।

उपनिषद् ब्राह्मण को हन्स अर्टेल महाशय ने अमेरिकन ओरियेण्टल सोसायटी के जर्नल सं० १५ में रोमन-लिपि में सम्पादित किया था। मेरे कहने पर पण्डित रामदेव जी ने उसी से इस का देवनागरी संस्करण तय्यार किया था। वही अब यहां छापा गया है।

हस्तलिखित सामग्री।

जिस हस्तलिखित सामग्री से अर्टेल ने अपना संस्करण तय्यार किया था उस का उल्लेख उस ने अपनी भूमिका में इस प्रकार दिया है—

A. बर्नेल के नोटानुसार जो लपेटने वाले काग़ज़ पर है, यह हस्तलेख "मलाबार हस्तलेख से नकल किया गया," १८७८ सन् में। अन्त में वह लिखता है "मूल की तिथि, कुलम १०४०=१८६४ सन्। पलघट के हस्तलेख से।"

B. तालपत्रों पर लिखे ग्रन्थ से, लगभग ३०० वर्षपूर्व लिखा गया, तिरुवल्ली से प्राप्त, परन्तु पहले अलेप्पी से लाया गया था।" इस के पाठभेद ही दिये गये हैं।

C. बर्नेल के हाथ की रोमनलिपि में किया हुआ ग्रन्थ। वह १।५६ पर समाप्त हो जाता है।

A. ग्रन्थ का पाठ और B. के पाठभेद ग्रन्थाक्षरों में हरिबर्णीय कागज पर हैं। ये प्रो० ज्ञानअवेरे द्वारा रोमन में लिखे गये थे, और कापी प्रो० ह्विटने ने मूल से मिला ली थी। उन्हों ने C. के पाठभेद भी दे दिये थे। इसी कापी से यह संस्करण तय्यार किया गया है। मूल अब इण्डिया आफिस लण्डन के पुस्तकालय में है।

हस्तलेखों में ऐसा शीर्षक है —

तलवकारब्राह्मणे उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

अनुवाक, खण्ड और कण्डिकादि के विभाग विषय में श्रीअर्टेल ने यह लिखा है। "वाक्यों (कण्डिकाओं) के अङ्क देने में हस्तलेख असावधान और असङ्गत हैं। A. अनुवाक और खण्डविभाग नहीं देता, परन्तु प्रत्येक अध्याय की कण्डिकाओं पर क्रमशः अङ्क देता है। मैंने अनुवाक और खण्ड विभागों में B. और C. की अथवा कण्डिकाओं के अङ्कों में तीनों हस्तलेखों की साधारण अशुद्धियों और विलोपों का लिखना उपयोगी नहीं समझा। अध्याय २।१ से A. और B. अङ्कों का नया प्रकार (कण्डिकाओं की समाप्ति पर) आरम्भ करते हैं। तथापि तीन पहली कण्डिकाएं (२।१–३) छोड़ते हैं, और २।४ को २ लिखते हैं। पर इस के पश्चात् नियमपूर्वक अर्थात् २।५=५ इत्यादि, लिखकर तृतीय अध्याय के अन्त तक जाते हैं, ३।४=५७। B. में अङ्क देने के एक और क्रम के भी अवशेष हैं। यहां तीसरे अध्याय की प्रथम तीन कण्डिकाओं पर और अङ्कों के साथ क्रमशः ५६, ५७ और ५८ लिखा है। B. में ३।१८ पर ७०, ३।२२ पर ७३, ३।३२ पर ७६ के अङ्क अधिक हैं। इन अन्तिम तीन अनुवाकों की गणना स्पष्ट ही इस अध्याय के प्रथम तीन से विभिन्न है। साथ ही मूल की कण्डिकाओं के क्रम से भी भिन्न है।

"तीनों हस्तलेख एकही सदोष मूल से आए हैं। तीनों में बहुत सामान्य अष्टपाठ हैं। विराम, अक्षर-विन्यास और सन्धि-सम्बन्धी

बातों में भी वे असावधानी से लिखे गए हैं। मैंने इन बातों के ठीक करने में स्वतन्त्रता वर्ती है। सब स्थलों में, जो केवल अक्षर-विन्यास सम्बन्धी नहीं हैं, मैंने हस्तलेखों के पाठ-भेद पृष्ठ के नीचे दिये हैं। निर्देशों की सरलता के लिये मैंने प्रत्येक अध्याय में निरर्थक अनुवाक विभाग का ध्यान न करते हुए क्रमशः खण्डाङ्क देदिया है। हस्त लेखों में कण्डिकाओं पर कोई अङ्क नहीं तथापि मैंने यह दे दिया है।

अमेरेकन संस्करण के अन्त में गर्टेल महाशय ने चार सूचियां दी हैं। [१] आवश्यक शब्दों और ऋषि नामों आदि की सूची। [२] निर्वचनों की सूची। [३] व्याकरण सम्बन्धी प्रयोजनीय स्थल। [४] उद्धरणों की सूची। हमने प्रथम सूची में से ऋषि नाम पृथक् करके उनकी सूची देदी है। अन्य शब्दों को इस लिए नहीं दिया कि दयानन्द महाविद्यालय के अनुसन्धान विभाग की ओर से उपलब्ध ब्राह्मणों आदि की एक विस्तृत सूची तय्यार हो रही है। इसमें ये शब्द और अन्य शब्द भी आवेंगे, अतः उनको यहां छापना आवश्यक नहीं समझा। सूचियां (२) और (४) भी हमने देदी हैं। तीसरी को हम आर्य्यावर्त्तीय पण्डितों के लिए अनावश्यक समझते हैं।

पं० रामदेव ने पाठभेदों को देने के लिये A.B.C. के हवाले नहीं दिये। सो आवश्यक होने पर भी यह रह गये हैं। पहले फार्मों में उन्हों ने Omitted के स्थान में "ओम्" दिया था। मैंने आगे चल कर उस के स्थान में संस्कृत शब्द "नास्ति" कर दिया है। यह संस्कृत शब्द होने से एतद्देशीय जनों के लिये अधिक उपयोगी है। गर्टेल ने प्रत्येक स्वर सन्धि पर 'कामे' का चिह्न दिया हुआ था। रामदेव जी ने उस के स्थान में 'ऽ' चिह्न दे दिया था। संस्कृत में यह अनावश्यक है, अतः दूसरे फार्म से मैंने इसे भी हटा दिया है॥

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य ।

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, यह ब्राह्मण, बृहद् जैमिनीय ब्राह्मण का एक भागमात्र है । इस का मूल नाम "गायत्र उपनिषद्" है । जै० उ० ब्रा० ४। ७ के अन्त में यही नाम आया है । यह नाम है भी सार्थक, क्योंकि इन सारे अध्यायों में गायत्र साम का ही वर्णन है । उसी से अमृत अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति जताई गई है । जै० उ० ब्रा० ३।४० के आरम्भ में यही कहा गया है—

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन देवा एतेनर्षयः ॥१॥

अर्थात् वह यही अमृत गायत्र (साम) है । इसी से प्रजापति मुक्त हुआ, इसी से (अन्य) विद्वान्, इसी से मन्त्रार्थ द्रष्टा (ऋषि) ।

इस ब्राह्मण में दो स्थलों पर अर्थात् ३।४०-४२॥ और ४।१६,१७॥ पर दो वंश परम्पराएं आई हैं । अन्तिम वंश परम्परा पहली से कुछ ही अन्य नाम रखती है । यह है भी छोटी । पहली का आरम्भ "ब्रह्म" से होता है । (१) ब्रह्म ने (२) प्रजापति के लिये । उसने (३) परमेष्ठी के लिये । उसने (४) देवसविता के लिये इत्यादि ।

शतपथब्राह्मण (माध्यन्दिन) में भी दशम काण्ड की समाप्ति पर और चौदहवें काण्ड के अन्त से कुछ पहले दो ऋषि वंशावलियां आई हैं । पूर्वली में बताया गया है कि स्वयम्भु ब्रह्म ने प्रजापति को विद्या पढ़ाई, और उत्तरली में कहा है कि परमेष्ठी को । जै० उ० ब्रा० में एक रूप से इन दोनों का मेल है । अर्थात् ब्रह्म, प्रजापति, और परमेष्ठी यद्यपि समकालीन थे, तथापि गायत्र साम का रहस्य ब्रह्म ने स्वयं परमेष्ठी को नहीं बताया, प्रत्युत वह उस तक प्रजापति द्वारा आया ।

जैमिनीय ब्राह्मण कोई नया ब्राह्मण नहीं।

शतपथ ब्रा० के द्वि० वंश में ब्रह्म से लेकर अपने आप (वयं) तक ६८ नाम हैं। जै० उ० ब्रा० के प्रथम वंश में ब्रह्म से लेकर वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य तक ५० नाम हैं। प्रत्येक ब्राह्मण के सब वंशों को मिला कर और यदि कुछ नाम छूट गये हैं तो उनका स्थान छोड़ कर भी ब्रह्म से ऋषियों की एक जैसी संख्या होजायगी। इस से प्रतीत होता है कि आर्य्यावर्त्त के इतिहास में ब्राह्मणों के संकलन का समय प्रायः एक ही था। ब्रह्मा से जो अनेक विद्यायें अनेकों कुलों में चली आई थीं, वही इतिहासयुक्त करके प्रायः एक काल में एकत्र कर ली गई। जैमिनीय ब्राह्मण भी उसी समय संकलित हुआ।

जब यह ग्रन्थ छप रहा था, तब श्रीमान् कालेण्ड महाशय ने मुझे पत्र लिखा कि वे अर्टैल के कई पाठ शुद्ध कर देंगे। तब मैंने उन्हें मुद्रित ७२ पृष्ठ भेज दिये थे। उन्होंने उनके हाशिये पर संशोधन कर दिया है। वह भूमिका के अन्त में छाप दिया गया है। अगले पृष्ठों का संशोधन फिर कभी छापा जायगा। इस परिश्रम के लिए जो उन्होंने स्वयं मेरा, ध्यान उधर खैंच कर किया है, मैं उन का अत्यन्त अनुगृहीत हूं।

इस ग्रन्थ के प्रूफ पं० विश्वबन्धु एम० ए० शास्त्री, तथा पं० हंसराज पुस्तकाध्यक्ष लालचन्द पुस्तकालय ने देखे हैं। इन दोनों महाशयों का भी मैं कृतज्ञ हूं।

परमदयामय भगवान् अपनी कृपा से इन हृदय-पावक ग्रन्थों के प्रचार में मेरी सहायता करें। इत्योम्

दयानन्द महाविद्यालय
लालचन्द पुस्तकालय लाहौर
माघ, संक्रान्ति सं० १९७७

भगवद्दत्त

श्री कालण्ड-प्रदर्शित सटिप्पण पाठ संशोधन ।

पृ०	पंक्ति	प्रकाशित पाठ	संशोधित पाठ
३,	१२	०त्सिच्याद्देवमे०	सिच्येतैवमे०
५,	१	हैऽषा खला	हैषाखला
५,	७	उतैषां खला	उतैषाखला
५,	११	०प्रति यस्य	प्रत्यस्य
			हस्त ले० पाठ शुद्ध है। देखो पाठ भेद।
७,	६	लोष्टो	लोष्टो
८,	१	ळयित्वा पनि०	ळयित्वापनि०
६,	६	ववर्जे	ववृजे*
६,	६	बहुर्भू०	बहोर्भू०
११,	१२	वं वेद०	वावेद०
१६,	४	यदमृते	यदनृचे
१७,	८	देवा	देवाः
१७,	८	कस्माद्ु	कस्मा उ
२०,	६	०सप्ताहोरात्राः	सप्त होत्राः
३४,	१५	अभिपर्यक्त	अभिपर्यस्त
३७,	३	उच्चा	[उच्चा]
३७,	८	ह चै०	ह [स्म] चै०
४०,	२	तद्यद्दै	यद्यद्दै
४६,	१	प्रजापतिर्वा वेद अग्र	प्रजापतिर्वावेदमग्र
४६,	१२	सुनोति	सनोति
५३.	२	०सर्क	०सर्क्
५३,	४	०ायतन	०ायतना †
५८,	३	०पुनीध्वं न पूता वै	०पुनीध्वमपूता वै
६०,	१५	ययाच ‡	पपाच or पपर्च

* The mss. (Grantha) have ववृज or वव्रज which nearly is the same in Grantha. If the Sandhi is effaced we ought to return ववृजे ।

† इदमायतना is a bahuvrîhi compound. पाठभेद जो नीचे दिया है, वह ठीक है ।

‡ Must be corrupt.

शुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
भू० ४	५	सिहि०	संहि०
,, ६	४, ६, ६, ११	अग्नि	सूर्य
१६	१३	०सा	०सा—
२४	१	यत्पर तद०	यत्परतद०
३८	३	शामूल प०	शामूलप०
५४	१३	श्रेय स	श्रेयस
६३	२	एवं वि०	एवंवि०
१००	१५	०भ्य	०भ्य—
१०६	१४	वाङ	वाङ्
१०७	१५	० पाणौ	० पानौ
१११	७	युष्यासु	युष्मासु
११३	११	रतो	रेतो
१३६	३	०सपृणाति	स्पृणाति
१४२	६	स्वगस्य	स्वर्गस्य
१४६	६	च्कुरुं	च्छुरुं

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

ओ३म्

जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणम्

प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेना[1]ऽजयद्[2] यदस्येऽदं जितं तत् ॥ १ ॥ स ऐक्षतेऽत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन[3] यक्ष्यन्त इमां वाव ते जितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम । हन्त[4] त्रयस्य वेदस्य रसमाददा इति ॥ २ ॥ स भूरित्येवर्ग्वेदस्य रसमादत्त । सेऽयम्पृथिव्यभवत् तस्य यो रसः[5] प्राणेदत् सोऽग्निरभवद्रसस्य रसः ॥ ३ ॥ भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त । तदिदमन्तरिक्षमभवत् । तस्य यो रसः प्राणेदत् स वायुरभवद्रसस्य रसः ॥ ४ ॥ स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त । सो[6]ऽसौ द्यौरभवत् । तस्य यो रसः प्राणेदत् स आदित्योऽभवद्रसस्य रसः ॥ ५ ॥ अथैऽकस्यैऽवाऽक्षरस्य रसं नाऽशक्नोदादातुम् ओमित्येतस्यैऽव ॥ ६ ॥ सेऽयं वागभवत् । ओमेव नामैऽषा । तस्या उ प्राण एव रसः ॥ ७ ॥ तान्येतान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तदु उ ब्रह्माऽभिसंपद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥ ८ ॥ १, १

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१, १ वेदेन । २ वाजयद् । ३ पदेन । ४ हन्ता । ५ 'द' अधिक । ६ सा ।

स यद् ओमिति सोऽग्निर्वागिति पृथिव्योमिति वायुर्वा-
मित्यन्तरिक्ष[1]मोमित्यादित्यो वागिति द्यौरोमिति प्राणो वागित्येव
वाक् ॥ १ ॥ स य एवं विद्वानुद्गायत्योमित्येवाऽग्निमादाय पृथि-
व्याम्प्रतिष्ठापयत्योमित्येव वायुमादायाऽन्तरिक्षे प्रतिष्ठापयत्यो-
मित्येवा[2]ऽऽदित्यमादाय दिवि प्रतिष्ठापयत्योमित्येव प्राणमादाय
वाचि[3] प्रतिष्ठापयति ॥ २ ॥ तद्धैतच्छैल[4]ना गायत्रं गायन्त्यो-
वा ३ च् ओवा ३ च्[5] ओवा ३ च् हुम्भा ओवा इति ॥ ३ ॥ तदु ह
तत्पराङ् इवाऽनायुष्यम इव। तद्वायोश्चाऽपां चानुवर्त्म गेयम ॥४॥
यद्वै[6] वायुः पराङ् एव पवेत क्षीयेत (स)। स पुरस्ताद्वाति स
दक्षिणतस्स पश्चात्स उत्तरतस्स उपरि[7]ष्टात्स सर्वा दिशोऽनुसं-
वाति ॥ ५ ॥ तदेतदाहुरिदानीं वा अयमितोऽत्यासीद[8]थेऽत्याद्वाती
ऽति। स यद्वेष्माणं[9] जनमानो निवेष्टमानो वाति क्षयादेव बिभ्यत्
॥६॥ यदु ह वा[10] आपः पराचीरेव प्रस्रतास्स्यन्देरन् क्षीयेरँस्ताः।
यद[11]ङ्कांसि[12] कुर्वाणा निवेष्टमाना आवर्तान् सृजमाना यन्ति क्षयादेव
बिभ्यतीः। तदेतद्वायोश्चैऽवाऽपां चाऽनु वर्त्म गेयम ॥७॥१,२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

२, १ अन्तरीक्ष० । २ आपा । ३ वाची । ४ छेल्०, क्षील्० । ५ च । ६ परांद्, पुराद् । ७ रिष्ठात् । ८ सीत् । ९ यजमानो, जमानो । १० अम् ११ वृयद्, यद् १२ अङ्कासि ।

ओवा[1] ओवा ओवा हुम्भा ओवा इति करोत्येव[2]। एताभ्यां सर्वमायुरेति ॥ १ ॥ स यथा वृत्तमाक्रमैण[3]ऽऽक्रममाण इयादेवमेवैऽते द्वे-द्वे देवते संधायेऽमां लोकान् रोहन्[4]ति ॥२॥ एक उ एव मृत्युरन्वेत्यशनयैऽव ॥ ३ ॥ अथ हिङ्करोति । चन्द्रमा वै हिङ्कारोऽन्नमु वै चन्द्रमाः । अन्नेनाऽशनयां घ्नन्ति ॥ ४ ॥ तां-तामशनयामन्नेन हत्वोऽमित्येतमेवाऽऽदित्यं[5] समयाऽतिमुच्यते । एतदेव दिवश्छिद्रम्[6] ॥ ५ ॥ यथा खं वाऽनसस्स्याद्रथस्य[7] वैऽवमेतद्दिवश्छिद्रम् । तद्रश्मिभिस्संछन्नं[8] दृश्यते ॥ ६ ॥ यद्वायत्रस्योऽऽर्ध्वं हिङ्कारात्तदमृतम् तदात्मानं दध्यादथो यजमानम् । अथ यदितरात्[9] सामोऽऽर्ध्वं तस्य प्रातिहारात् ॥ ७ ॥ स यथाऽद्भिरापस्संसृज्येरन्[10] यथा ऽग्निनाऽग्निस्संसृज्येत यथा क्षीरे क्षीरमासिच्यादेवमेवै ऽतदक्षरमेताभिर्देवताभिस्संसृज्यते ॥ ८ ॥ १, ३ ॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं वा एतं हिङ्कारं हिम्भा इति हिङ्कुर्वन्ति । श्रीर्वै भाः । असौ वा[1] आदित्यो भा इति ॥ १ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गभे[2]

३. १ ओव २ येव् ३ अक्रम ४ इति ५ त्यां, त्य ६ मस ७ रसस्य ८ म ९ त्वद्, तद् (?) १० रान् ।

४. १ ओम २ गंभ ।

इति । यद्ग इति स्त्रीणाम्[३] प्रजननं निगच्छति तस्मात्ततो ब्राह्मण ऋषिकल्पो जायतेऽतिव्याधी[४] राजन्यश्शूरः ॥ २ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु वृषभ इति । यद्ग[५] इति निगच्छति तस्मात्ततः पुण्यो[६] बलीवर्दो दुहाना धेनुरुत्ता दशधा[७]गी जायन्ते ॥ ३ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गर्दभ इति । यद्ग इति निगच्छति तस्मात्स पापीयाञ्छ्रेयसीषु चरति तस्मादस्य पापीयसश्श्रेयो जायतेऽश्वतरो वाऽश्वतरी वा ॥ ४ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु कुभ्र इति । यद्ग इति निगच्छति तस्मात्[८] सोऽनार्यस्सन्नपिराज्ञः प्राप्नोति ॥ ५ ॥ तं हैतमेके हिङ्कारं हिम्भा ओवा इति बहिर्धे[९]व हिङ्कुर्वन्ति । बहिर्धेऽ[१०]व वै श्रीः । श्रीर्वै साम्नो हिङ्कार इति ॥ ६ ॥ स य एनं तत्र ब्रूयाद्बहिर्धान्वा अयं श्रियमधित पापीयान् भविष्यति[११] ।

स यदा वै म्रियतेऽथाऽसौ भ्रास्तो भवाति ।

"क्षिप्रे बत मरिष्यत्यग्नौ वैनम्प्रासिष्यन्ति" इति तथा हैऽव स्यात् ॥ ७ ॥ तस्माद् हैतं हिङ्कारं हिं वो इत्यन्तरिवैऽवाऽऽत्मन्नर्जयेत् । तथा ह न बहिर्धा श्रियं कुरुते सर्वमायुरेति ॥ ८ ॥ १,४

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

---

४. ३ स्त्रिया ४ जायत इतिव्य ५ यषत् ६ य ७ 'ऽनि' अधिक ८ नाकथ्यरस, नार्थ्यस ६ ओम् । बहिर्धेऽव......तत्र ब्रूयाद् १० बहिर्द्धवे, ओम् । व ११ यतीऽति ।

सा हैऽषा खला देवताऽपसेधन्ती[1]ऽतिष्ठति । इदं वै त्वमत्र पापमकर्णोऽहैऽऽष्यासि । यो वै पुण्यकृत् स्यात् स इहेऽयादिति ॥१॥ स ब्रूयादपश्यो वै त्वं तद्यदहं त[2]दकरवं त[3]द्वै मा त्वं नाऽकारयिष्यस्त्वं वै तस्य कर्ताऽसीति ॥२॥ सा[4] ह वेद सत्यम्माऽऽहे[5]ऽति । सत्यं हैऽषा देवता । सा[6] ह तस्य नेऽऽशे यदेनमपसेधेत् सत्यमु[6]पेऽवह्वयते ॥ ३ ॥ अथ हो[7]ऽवाचैऽऽह्वाको वा वार्ष्णोऽनुवक्ता वा सात्यकीर्त[8] उतै[9]षा खला देवताऽपसेद्धुमेव ध्रियते[10]ऽस्यै दिशः ॥ ४ ॥ [तद्] दिवोऽन्तः । तदिमे द्यावापृथिवी संश्लिष्यतः । यावती वै वेदिस्तावतीऽयम्पृथिवी । तद्यत्रैऽतच्चात्वालं खातं तत्सम्प्रति स दिव आकाशः ॥ ५ ॥ तद्बहिष्पवमाने स्तूयमाने मनसोऽद्गृह्णीयात् ॥ ६ ॥ स यथोऽच्छ्रायम्प्रति य[11]स्य प्रपद्येतैऽवमेवैतया[12] देवतयेदममृतमभिपर्येति यत्राऽयमिदं तपतीति ॥ ७ ॥ अथ होवाच—॥ ८, १, ५ ॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

गोबलो वार्ष्णः क एतमादित्यमर्हति समयैऽतुम् । दूराद्वा एष एतत् तपति न्यङ् । तेन वा एतम्पूर्वेण सामपथस्तदेव मनसा-

---

५. १ 'ऽति' अधिक २ त्वदू ३ भ्रर्क ४ स ५ सत्यम्महे ६ मवम् ७ त्वको ८ सत्यकीर्ते ९ भ्र १० धूयं ११ प्रत्यस्य १२ ऽततय ।

इत्योऽपरिष्टा देतस्यैऽतस्मिन्नमृते निदध्यादिति ॥ १ ॥ तदु ह
होवाच शाट्यायनिस्समयैऽवाऽतदेनं कस्तद्वेद । यद्येता आपो वा
अभितो यद्वायुं वा एष उपहृवयते रश्मीन्वा एष तदेतस्मै व्यूह-
तीति ॥ २ ॥ अथ होऽवाचोऽलुक्यो जानश्रुतेयो यत्र वा एष
एतत् तपत्येतदेवामृतम् । एतचेद्वै माप्नोति ततो मृत्युना पाप्मना
व्यावर्तते ॥ ३ ॥ कस्तद्वेद यत्परेणाऽऽदित्यमन्तारिक्षमिदमना-
लयनमवरेण ॥ ४ ॥ अथैऽतदेवाऽमृतम् । एतदेव मां यूयम्भाप-
यिष्यथ । एतदेवाहं नातिमन्य इति ॥ ५ ॥ तान्येतान्यष्टौ ।
अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्मा-
भिसम्पद्यते अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥५॥ १, ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

ता एता अष्टौ देवताः । एतावदिदं सर्वम । बे [......]
करोति ॥ १ ॥ स नैषु लोकेषु पाप्मने भ्रातृव्यायावकाशं
कुर्यात् । मनसैनं निर्भजेत् ॥ २ ॥ तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते ।

"चत्वारि वाक् परिमिता पदानि
तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ।

६, १ वाऽयं २ तप, त ३ स्यै ४ अथो ५ ओम ६ ऽवाचा (!) उलुक्यो, लुक्यो ७ मृत ८ परोक्ष ९ अन्विलय १० त, प्रापिष्य ११ यत ।

गुहा त्रीणि नि[१]हिता ने[२]ऽङ्गयन्ति[३]

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति" इति ॥३॥

तद् यानि तानि गुहात्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ती (ऽती) ऽम एव ते लोकाः ॥४॥ तुरीयं वाचो मनुष्या वद[५]न्तीति । चतुर्भाग ह वै तुरीयं वाचः । सर्वयास्य वाचा सर्वैरेभिर्लोकैस्सर्वेणास्य कृतम्भवाति य एवं वेद ॥ ५ ॥ स यथाऽश्मानमाखणमृत्[६]वा लोष्ठो विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्वाँसमुपवदति ॥ ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद्यदस्येदं जितं तत् ॥१॥ स ऐक्षतेत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वे[१]देन यक्ष्यन्त इमां वाव ते जितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम ॥ २ ॥ हन्तेऽमं त्रयं वेद[२]म्पीळयानीति ॥ ३ ॥ स इमं त्रयं वेदमपीळयत् । तस्य पीळयन्नेकमेवाक्षरं नाशक्नोत्[३] पीळयितुमोमिति यदेतत् ॥ ४ ॥ एष उ ह वाव सरसः । सरसा ह वा एवंविदस्त्रयीविद्या भवति ॥ ५ ॥ स इमं रसम्पी-

७. १ तानि २ नो. ओम ३ गयन्ति ४ तानि ५ ओम् ६ कृत्वा ७ लोष्टो ८ ओम एवम विध्वंसते ९ स एषो...उपवदन्ति ।

१. ने २—द्या, द ३,—क्नो ४. द्रुं ।

ळयित्वा पनिधायोऽऽर्ध्वोऽद्रवत् ॥ ६ ॥ तं द्रवन्तं चत्वारो देवाना-
मन्वपश्यन्निन्द्रश्चन्द्रो रुद्रस्समुद्रः । तस्मादेते श्रेष्ठा देवानाम् [5]एते [6]ह-
[7]नमन्वपश्यन् ॥ ७ ॥ स योऽयं रस आसीत्तदेव तपोऽभवत् ॥८॥
त इमं रसं देवा [8]अन्वैक्षन्त । तेऽभ्यपश्यन्त्[9] स [10]तपो वा अभूदिति
॥ ९ ॥ इममु वै त्रयं वेदम्मरीमृशित्वा तस्मिन्नेतदेवाक्षरमपीळित-
[11]मविन्दन्नोमिति यदेतत् ॥ १० ॥ एष उ ह वाव [12]सरसः । तेनै-
[13]नम्प्रायुवन् । यथा मधुना लाजान् प्रयुयादेवम् ॥ ११ ॥ तेऽभ्य-
तप्यन्त । तेषां तप्यमानानामाप्यायत वेदः । तेऽनेन च तपसाऽपीनेन
च वेदेन तामु एव जितिमजयन्[16] याम्प्रजापतिरजयत्[17] । त एते सर्व
एव प्रजापतिमात्रा [18]अया३म [19]अय३म इति ॥ १२ ॥ तस्मात्तप्यमा-
नस्य भूयसी कीर्तिर्भवति भूयो यशः । स य एतदेवं वेदैवमेवा-
ऽपीनेन वेदेन [19]यजते । यदो याजयत्येवमेवा[20]ऽपीनेन वेदेन[21] याजयति
॥ १३ ॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽर्तिरस्ति य एवं वेद । स
य एवैनमुपवदति[22] सार्तिमृच्छति[23] ॥ १४ ॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

---

५. होते ६. ओम् ७ सेनं ८ अन्, ऐक्ष ९ तेभ्यप १०--द्यस्त--११ पीळितं, ता १२ वा १३ प्राय १४ ययाद् १५. तेन, ते एन, तेनैन १६. यत् १७--यन् १८ अ३याम १९ ओम् यजते यदो--वेदेन २० एव अपि २१ असि २२ उपवनि उवदति २३ अच्छति, अर--

तदाहुर्यदोवा[1] ओवा इति गीयते कात्र[3]भवति क सामेति ॥१॥ ओम इति वै साम वागित्यृक्। ओमिति मनो वागिति वाक्। ओमिति प्राणो वागित्येव वाक्। ओमितीन्द्रो वागिति सर्वे देवाः। तदेतदिन्द्रमेव सर्वे देवा अनुयन्ति ॥२॥ ओमित्येतदेवाक्षरम्। एतेन वै संसत्र परस्येन्द्रं[4] वृञ्जीत। एतेन ह वै तद्बको दाल्भ्य आजकेशिनामिन्द्रं[5] ववर्ज[6]। ओमित्येतेनैवाऽऽनिनाय[7] ॥३॥ तान्येतान्यष्टौ। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रं साम। ब्रह्म उ गायत्री। तदु ब्रह्माभिसम्पद्यते। अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥४॥ तस्यैतानि नामानीन्द्रः कर्माक्षितिरमृतं[8] व्योमान्तो वाचः[9]। बहुर्भूयस्सर्वं सर्वस्मादुत्तरं ज्योतिः। ऋतं सत्यं विज्ञानं[10] विवाचनमप्रतिवाच्यम्[11]। पूर्वं सर्वं सर्वा वाक्। सर्वमिदमपि धेनुः पिन्वते परागर्वाक् ॥५॥१।६॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

गा[1] पृथक्सलिलं कामदुघाक्षिति प्राणसहितं चक्षुश्श्रोत्रं[2] वाकमृतम्मनसा व्याप्तं हृदयाग्र[3] म्ब्राह्मणभक्त[4] मसशुभं वर्षपवित्रं

१. यदा। २. ओवाल (=ओ वा १?) ३. भृग्।
४. अवृञ्ज्-।५-शीन्-,शीन-।६. यव्रज।
७. यनिनाय।८-ह; क्षीति। ९-हिर।१०. विजिज्ञा-।११-मः।
१ सा। २-त्तुश्रोत्र्-।३-दयोग्र्-।४. म्रक्तम, भ्रतम, भृतम।

गोभग म्पृथिव्युपरं तपस्तनु वरुणपरियतनमिन्द्रश्रेष्ठं[5] सहस्राक्षर-मयुतधारममृतं दुहाना[6] सर्वान् इमाँल्लोकानभिविक्षरतीऽति[7] ॥१॥ तदेतत् सत्य मक्षरं यदोम् इति । तस्मिन्नापः प्रतिष्ठिता अप्सु[8] पृथिवी पृथिव्यामिमे लोकाः ॥२॥ यथा सूच्या पलाशानि सन्तृण्णानि स्युरेवमेतेनाक्षरेणेमे लोकास्संतृण्णाः ॥३॥ तदिदामिमान्[9] अतिविध्य दशधा क्षराति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा (नियुतधा) ऽर्बुदधा[10] न्यर्बुदधा[11] निखर्वधा पद्ममक्षितिनि-व्योमान्तः ॥४॥ यथौघो विष्यन्दमानः[12] परः-परोवरीयान् भव-स्येवमेवैतदक्षरम्परः-परोवरीयो[13] भवति ॥५॥ ते हैते[14] लोका ऊर्ध्वा एव श्रिताः । इम एवं त्रयोदशमासाः ॥६॥ स य एवं विद्वानुद्गायाति स एवमेवैताँल्लोकानतिवहाति । ओमित्येतेनाक्षरेणा-मुमादित्यम्मुख आधत्ते । एष ह वा एतदक्षरम् ॥७॥ तस्य[15] सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितं न हाऽस्य कश्चन[16] कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥८॥ तद्ध पृथुर्वैन्यो[17] दिव्यान् व्रात्यान् पप्रच्छ ।

५. पर्य्येत्-। ६–नाः । ७ ओमिति । ८–प्सुः । ९ श्राम, 'इदं' और दशधा के मध्य स्थान रिक्त है । १० निर्बु–। ११ निखर्वाच, निखर्वद्वाच् । १२–नान् । १३ श्रोम् । परः परो । १४ तै । १५ तस्मि । १६ कश्च । १७ वै ।

स्थूणां दिवस्तम्भनीं सूर्यं माहुरन्तरिक्षे सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमी[१८]शिश्रि[१९]यरे भूरिभाराः किं स्विन्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ ९ ॥ ते ह प्रत्यूचुस्

स्थूणामेव दिवस्तम्भनीं सूर्यं माहुरन्तरिक्षे सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमी[१८]शिश्रि[१९]यरे भूरिभारास्सत्यम्महीरधितिष्ठ[२०]न्त्याप इति ॥ १० ॥

ओमित्येतदेवाक्षरं सत्यम् । तदेतदापोऽधितिष्ठन्ति॥१.१॥१.१०॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

प्रजापतिः प्रजा असृजत । ता एनं सृष्टा अन्नकाशिनीरभितस्समन्तम्पर्यविशन् ॥१॥ ता अब्रवीत् किंकामास्स्थेति । अन्नाद्यकामा इत्यब्रुवन्॥२॥सोऽब्रवीदेकं वै वेदमन्नाद्यमसृक्षि सामैव । तद्वः प्रयच्छा[३]नीति । तन्नः प्रयच्छेत्यब्रुवन्॥३॥ सोऽब्रवीदिमान्वै पशून् भूयिष्ठमुपजीवामः । एभ्यः प्रथमम्प्रदास्यामीति ॥४॥ तेभ्यो हिङ्कारम्प्रायच्छत । तस्मात्पशवो हिङ्करि[४]क्रतो विजिज्ञास-

१८–मिश्र । १९ शिशिरे । २० अधित ।

१. वा । २. पाम– । ३ पृय– । ४ –कृतो ।

माना इव चरन्ति ॥५॥ प्रस्तावम्मनुष्येभ्यः । तस्माद्धु ते स्तुवत इवेदम्मे भविष्यत्यदो मे भविष्यतीऽति ॥६॥ आदिं वयोभ्यः । तस्मात् तान्याददानान्युपापपातमिव चरन्ति ॥७॥ उद्गीथं देवेभ्योऽमृतम् । तस्मात्तेऽमृताः ॥८॥ प्रतिहारमारण्येभ्यः पशुभ्यः । तस्मात्ते प्रतिहृताः[६]स्तन्तस्यमाना[७] इव चरन्ति ॥९॥ १ । १५ ॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

उपद्रवं गन्धर्वाप्सरोभ्यः[१] । तस्मात्त उपद्रवं गृह्णान्त इव चरन्ति ॥१॥ निधनम्पितृभ्यः । तस्माद्धु ते निधनसंस्थाः ॥२॥ तद्यदेभ्यस्तत् साम प्रायच्छदेतमेवैभ्यस्तदादित्यम्प्रायच्छत ॥३॥ स यदनुदितस्सहिङ्कारोऽर्धोदितः[२] प्रस्ताव आसंगवमादिर्[३]माध्यन्दिन उद्गीथोऽपराह्णः प्रतिहारो यदुपास्तमयं लोहितायाति स उपद्रवोऽस्तमित एव निधनम् ॥४॥ स एष सर्वैर्लोकैस्समः । तद्यदेष सर्वैर्लोकैस्समस्तस्मादेष एव साम । स ह वै सामवित् स साम वेद[४] य एवं वेद ॥५॥ ते ऽब्रुवन् दूरं वा इदमस्मत् । तत्रेदं कुरु

५. स्तुवतेव । ६. प्रतिहतास्त् । ७. तास्तृ (?) स्त (!) यमाना; तातास्यमाना ।

१–आपसरेभ्यः । २ अर्धोदित्- । ३ आदित्यः । ४ हिवार 'स सामवेद' बेला है ।

यत्रोपजीवामेति[५] ॥६॥ तदृतूनभ्यत्यनयत् । स वसन्तमेव हिङ्कार-मकरोद्[६]ग्रीष्मम्प्रस्तावं[७] वर्षामुद्गीथं शरदम्प्रतिहारं हेमन्तं निधनम् । मासार्धमासावेव सप्तमावकरोत् ॥७॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति[५] ॥८॥ तत् पर्जन्यमभ्यत्यनयत् । स पुरोवातमेव हिङ्कारमकरोत् ॥९॥ १ । १२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

जीमूतान् प्रस्तावं[१] स्तनयित्नुमुद्गीथं विद्युतम्प्रतिहारं[२] वृष्टिं निधनम् । यदृग्रशत्म[३]जाश्चौषधयश्च जायन्ते ते सप्तम्यावकरोत् ॥१॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति[४] ॥२॥ तद्यज्ञमभ्यत्यनयत् । स यजूंष्येव हिङ्कारमकरोदृचः प्रस्तावं सामान्युद्गीथं स्तोमम्प्रतिहारं छन्दो निधनम् । स्वाहाकारवषट्-कारावेव सप्तमावकरोत् ॥३॥ तेऽब्रुवन् नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति[४] ॥४॥ तत्पुरुषमभ्यत्यनयत्[५] । स मन एव हिङ्कारमकरोद्वाचम्प्रस्तावम्प्राणमुद्गीथं चक्षुः प्रतिहारं श्रोत्रंनिधनम् रेवश्चेव प्रजां च सप्तमावकरोत् ॥५॥ तेऽब्रुवन्नत्र वा एनत्तद्-

५–म इति । ६ कर्–। ७ प्रस्तावः । वर्षा उद्गीथः, शरत्प्रतिहारः, ओम् शरदम्प्रतिहारम् ।

१. प्रस्तात्रैवम् ।२–तिर् । ३सपतम्–।४म इति । ५ अभ्यत्यत्यन–।

कर्यत्रोपजीविष्याम इति ॥६॥ स विद्यादहमेव सामास्मि मय्येता देवता इति ॥७॥ १ । १३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

न ह दूरे देवतस्स्यात्[1] । यावद्ध वा आत्मना देवानुपास्ते तावदस्मै देवा भवन्ति ॥ १ ॥ अथ य एतदेवं वेदाऽहमेव सामाऽस्मि मय्येतास्सर्वा[2] देवता इत्येवं[3] हाऽस्मिन्नेतास्सर्वा देवता भवन्ति ॥२॥ तदेतदेवश्रुत्साम । सर्वा ह वै देवताश्शृण्वन्त्येवं-विदम्पुण्याय साधवे । ता एनम्पुण्यमेव साधु कारयन्ति ॥ ३ ॥ स ह स्माऽऽह सुचित्तश्शैलनो[5] यो यज्ञकामो मामेव स वृणीताम् । तत एवैऽनं यज्ञ उपनंस्यति । एवंविदं ह्युद्गायन्तं सर्वा देवता अनुसंतृप्यन्ति । ता अस्मै तृप्तास्तथा करिष्यन्ति यथैऽनं यज्ञ उपनंस्यतीऽति ॥४॥ १ । १४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै स्वर्गं लोकमैप्सन् । तं न शयाना नाऽऽसीना[1] न तिष्ठन्तो[2] न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽप्नुवन् ॥ १ ॥ ते देवाः प्रजापतिमुपाधावन्[3] स्वर्गं वै लोक मैप्सिष्म । तं न शयाना

---

१ देवत । २ ओम् । ३ एस्म । ४ देवश्रेत् । देवश्रुत् । एवश्रुत् । ५–नं ।

१–ऽऽशीना । २–स्थो । ३ उपाय– ।

नाऽऽसीना न तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽपाम ।
तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गं लोकमाप्नुयामे[४]ऽति ॥२॥ तानब्रवीत
साम्नाऽनूचेन स्वर्गं लोकम्प्रयाते[५]ऽति । ते साम्नाऽनूचेन स्वर्गं
लोकम्प्रायन्[६] ॥ ३ ॥ प्र वा इमे साम्नाऽगुरिति । तस्मात्प्रसाम
तस्मादु प्रसाम्यक्षमत्ति[७] ॥४॥ देवा वै स्वर्गं लोकमायन् । त एता-
न्यृक्पदानि[८] शरीराणि धून्वन्त आयन् । ते स्वर्गं लोकमजयन् ॥५॥
तान्या दिवः प्रकीर्णान्यशेरन् । अथेऽमानि प्रजापतिर्ऋक्पदानि
शरीराणि सञ्चित्याऽभ्यर्चत्[१०] । यदभ्यर्चत्[११] ता एवर्चोऽभवन् ॥६॥
१ । १५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सेऽवर्गभवदियमेव श्रीः । अतो देवा अभवन् ॥१॥
अथैऽषामिमाममुराश्[१]श्रियमविन्दन्त । तदेवाऽऽसुरमभवत् ॥२॥
ते[२] देवा[३] अब्रुवन् या वै नश्श्रीरभूदविदन्त[४] तामसुरः । कथं न्वेषा-
मिमांश्रियम्पुनरेव[५] ज्येमेऽति ॥३॥ तेऽब्रुवन्नृच्येव साम गायामेति ।

---

४ प्रयामे । ५ प्रयाते, प्रधामे, प्रयामे । ६ लोकंमप्रावत्त । ७ इसके बाद कुछ गड़ बड़ है । ५ के पूर्व यह सब में लिखा है 'त एतान्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् (न्त्ययन्)। ते स्वर्गं लोकमजयन् (–अत)। अथेऽमानि प्रजापतिर् ...ता एवर्चोऽभवन् । ८ यत् । ९ ओम् । ते स्वर्गं अजयन्, यहां अधिक है । १० ओम् । यद्...... । ११ ओम् । ता एव ।

१ आस्–। २ तद् । ३ एवा । ४ विन्दन्त । ५ अव ।

-ते पुनः प्रत्याद्रुत्यार्चं सामाऽगायन् । तेनाऽस्माल्लोकाद-सुराननुदन्त ॥४॥ तद्वै माध्यन्दिने च सवने तृतीयसवने च नर्चोऽपराधोऽस्ति । स य ऋचि गायति तेनाऽस्माल्लोकाद् द्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते । अथ यदमृते केवनासु प्रातस्सवनं गायति तेन स्वर्गं लोकमेति ॥५॥ प्रजापतिर्वै साम्नेऽमां जितिमजयद्याऽस्ये-ऽयं जितिस्ताम् । स स्वर्गं लोकमारोहत् ॥६॥ ते देवाः प्रजापति-मुपेत्याऽब्रुवन्नस्मभ्यमपीऽदं साम प्रयच्छेति । तथेति । तदेभ्य-स्साम प्रायच्छत् ॥७॥ तदेनानिदं साम स्वर्गं लोकं नाऽकामयत वोढुम् ॥८॥ ते देवाः प्रजापति मुपेत्याऽब्रुवन् यद्वै नस्साम प्रादा इदं वै नस्तत्स्वर्गं लोकं न कामयते वोढुमिति ॥९॥ तद्वै पाप्मना संसृजतेति । कोऽस्य पाप्मेति । ऋगिति । तदृचा समसृजन् ॥१०॥ तदिदम्प्रजापतेर्गर्हयमाणमतिष्ठदिदं वै मा तत्पाप्मना सम-स्राक्षुरिति । सोऽब्रवीद्य एवैतेन व्यावर्तयाद्व्येव स पाप्मना वर्तात इति ॥११॥ स य एतदृचा प्रातस्सवने व्यावर्तयति व्येव स पाप्मना वर्तते ॥१२॥ १ । १६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

६–दुच्यत्य । ७ औत्–। ८–पराधो । ९–र्चि । १०–मृते । ११ तम् । १२ अद्–। १३ न कामायते, न कामयते । १४ कामाय्–, मामय् । १५संस्र– । १६ एव ।

तदाहुर्यद्दोवा प्रोव। इति गीयते कान्नर्भवति क सामेति ॥१॥ प्रस्तुवन्नेवाष्टाभिरक्षरैः प्रस्तौति । अष्टाक्षरा गायत्री । अक्षरमक्षरं त्र्यक्षरम् । तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री ॥२॥ तामेताम्प्रस्तावेन[1]र्चमाप्त्वा या श्रीर्याऽपचितिर्यस्स्वर्गो[2] लोको यद्यशो यदन्नाद्यं तान्यागायमान आस्ते ॥३॥ १।१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

प्रजापतिर्देवानसृजत । तान्[1] मृत्युः पाप्मान्वसृज्यत ॥१॥ ते देवा प्रजापतिमुपेत्याब्रुवन् कस्माद्[2] नोऽसृष्ठा[3] मृत्युं चेन्नः पाप्मानमन्ववस्रक्ष्यन्नासि[4]थेति ॥२॥ तानब्रवीच्छन्दांसि सम्भरत । तानि यथायतनम्प्रविशत[5] ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्त्स्य[6]थेति ॥३॥ वसवो गायत्रीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत् ॥४॥ रुद्रास्त्रिष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत्[7] ॥५॥ आदित्या जगतीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत् ॥६॥ विश्वेदेवा अनुष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत् ॥७॥ तान् अस्यामृच्यस्वरायाम्[7]मृत्युर्निरजा-

१. प्रस्तावेप्रस्तवेन । २-र्गे ।

१. ता, ताः । २ कस्मा । ३-ष्टा । ४-सृक्ष्यन् । ५-शत ६-वर्त्स्य, वर्त्स्य- । ७ च्छाद्, याम ।

नान्यथा मणौ मणिसूत्रम्परिपश्येदेवम् ॥८॥ ते स्वरम्प्राविशन् ।
तान् स्वरे सतो न निरजानात् । स्वरस्य तु घोषेणाऽन्वैत् ॥९॥
त ओमित्येतदेवाक्षरं समारोहन् । एतदेवाक्षरं त्रयीविद्या । यददो
ऽमृतं तपति तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्त ॥१०॥
एवमेवैवं विद्वान् ओमित्येतदेवाक्षरं समारुह्य यददोऽमृतं तपति
तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तनेऽथो यस्यैवं विद्वानुद्गा-
यति ॥११॥ १।१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

-:०:—

अथैतदेकविंशं साम ॥१॥ तस्य त्र्य्येव विद्या हिङ्कारः ।
अग्निर्वायुरसावादित्य एष प्रस्तावः । इम एव लोका आदिः ।
तेषु हीदं लोकेषु सर्वमाहितम् । श्रद्धा यज्ञो दक्षिणा एष उद्गीथः ।
दिशोऽवान्तरदिश आकाश एष प्रतिहारः । आपः प्रजा ओषधय
एष उपद्रवः । चन्द्रमा नक्षत्राणि पितर एतन्निधनम् ॥२॥
तदेतदेकविंशं साम । स य एवमेतदेकविंशं साम वेदैतेन हास्य

८—पेद्र । ९ नास्ति । १० ओ । ११—पेद्र । १२ पश्यो, ओ ।

१. त्रै । २ वायायुर । ३ येषु । ४—ज्ञा ।

सर्वेणोद्गीतम्भवस्येतस्माद्ध्येव[5] सर्वस्मादात्मच्यते[6] य एवं विद्वांसमुपवदाति ॥३॥ १।१.८॥

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः।

इदमेवेदमग्रेऽन्तरिक्षमासीत्[1]। तद्धैवाप्येतर्हि ॥१॥ तद्यदेतदन्तरिक्षं[2][3] य एवाऽयम्पवत[3] एतदेवान्तरिक्षम्[4]। एष ह वा अन्तरिक्षनाम[1][5]॥२॥ एष उ एवैष विततः तद्यथा काष्ठेन पलाशे विष्कब्धे स्यातामक्षेण वा चक्रावेवमेतेनेमौ[6][7] लोकौ विष्कब्धौ ॥३॥ तस्मिन्निदं सर्वमन्तः। तद्यदस्मिन्निदं[8] सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम्[9]। अन्तर्यक्षं ह वै नामैतत्। तदन्तरिक्षमिति परोक्षमाचक्षते ॥४॥ तद्यथा भूताः प्रबद्धाः प्रलम्बेरन्नेवं[10] हैतस्मिन्सर्वे लोकाः प्रबद्धाः प्रलम्बन्ते ॥५॥ तस्यैतस्य साम्नस्तिस्र[11] आगास्त्रीण्यागीतानि[12] पङ्क्तिभूतयश्चतस्रः प्रतिष्ठा दश प्रगास्सप्त संस्था द्वौ स्तोभावेकं रूपम्[13] ॥६॥ तद्यास्तिस्र आगा इम एव ते[14] लोकाः ॥७॥ अथ यानि (त्रीण्य्) आगीतान्यग्निर्वायुरसा

५–प्रस । ६ आवृच्योते ।

१–रीक्ष–। २ अधिक है 'एष ह वा अन्तरीक्षम्। ३ पवम। ४ नास्ति। ५–क्षोना–। ६ नवम। ७ एतेँन । ८ नास्ति। तद्……… अन्तस्। ९ नास्ति। १०–बन्द–। ११–नंस्र। १२ अगमाः। १३ एकरैपम, एकरूपम्। १४ तो।

वादित्र एतान्यागीतानि । न ह वै कांचनश्रियमपराप्नोति य एवं वेद ॥८॥ १।२०॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ याः षड्विभूतय ऋतवस्ते ॥१॥ अथ याश्चतस्रः प्रतिष्ठा इमा एव ताश्चतस्रो दिशः ॥२॥ अथ ये दश मगा इम एव ते दश प्राणाः ॥३॥ अथ यास्सप्त संस्था या एवैतास्सप्ताहोरात्राः प्राचीर्वषट्कुर्वन्ति ता एव ताः ॥४॥ अथ यौ द्वौ स्तोमावहोरात्रे एव ते ॥५॥ अथ यदेकंरूपं कर्मैव तत् । कर्मणा हीदं सर्वं विक्रियते ॥६॥ तस्यैतस्य साम्नो देवा आजिमायन । स प्रजापतिर्हरसा हिङ्कारमुदजयदग्निस्तेजसा प्रस्तावं रूपेण बृहस्पतिरुद्गीथं स्वधया पितरः प्रतिहारं वीर्येणेन्द्रो निधनम् ॥७॥ अथेतरे देवा अन्तरिता इवासन् । त इन्द्रमब्रुवन् तव वै वयं स्मोऽनुन एतस्मिन् सामन्या-भजेति ॥८॥ तेभ्यस्स्वरम्प्रायच्छत् । तम्प्रजापतिरब्रवीत्कथेत्थमकः । सर्वं वा एभ्यस्साम प्रादाः । एतावद्वाव साम यावान् स्वरः ऋग्वा एषर्ते स्वराद्भवतीति ॥९॥ सोऽब्रवीत् पुनर्वा अहमेषामेतं रसमादास्य इति । तानब्रवीऽदुप मा गायत । अभि मा स्वरतेति । तथेति

१ वादित्र । वास ········ एतान्य । २–श्रा । ३ सर्व– । ४ वधू ।
५ रैविं । ६–र्ता । ७ तावत्र । ८–रम । ९ स्वर्– । १० एषो, एषोम ।

॥१०॥ तमुपागायन् । तमभ्यस्वरन् । तेषाम्पुनारसमादत्त ॥११॥
१।२१॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यथा मधुधाने[1] मधुनाळीभिर्मख्यासिञ्चादेवमेव तत्सामन्
पुना रसमासिञ्चत् ॥१॥ तस्माद्ध ह नोऽपगायेत् । इन्द्र एष
यदुद्गाता । स यथा सात्रमीर्षा[2] रसमादत्त एवमेष तेषां रसमादत्ते
॥२॥ कामं ह तु यजमान उपगायेद्यजमानस्य हि तद्भवत्यथो ब्रह्म-
चार्याचार्योक्तः ॥३॥ तदु वा आहुर्नैव गायेत् । दिशो ह्युपागा-
यन्[3] दिशामेवं[4] सलोकतां जयतीति ॥४॥ ते य[5] एवेमे[6] मुख्याः
प्राणा एत एवोद्गातारश्चोऽपगातारश्च । इमे ह त्रय उद्गातार इम
उ चत्वार उपगातारः ॥५॥ तस्मादु चतुर एवोऽपगातॄन्[7] कुर्वीत ।
तस्मादुहोऽपगातॄन्[8] प्रत्यभिमृशेद्दिशस्स्थश्रोत्रं मे माहिंसिष्टेति ॥६॥
स यस्स रस आसीद्य एवायम्पवत एष एव स रसः ॥७॥ स यथा
मध्वालोपमद्यादिति ह स्माह सुचित्तश्शैलन एवमेतस्य रसस्यात्मान-
म्पूरयेत । स एवोद्गातात्मानं च यजमानं चामृतत्वं गमयतीति ॥८॥१।२२

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ।

———:०:———

११—त्ता ।

१—धुवने । २ 'स' अधिक पढ़ो । ३—यन् । ४—शाम । ५ एवं । ६ व । ७ ग्रा—,—तॄन् । ८—तॄन् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स यस्स आकाशो वागेव सा । तस्मादाकाशाद्वाग्वदति ॥२॥ [1]तामेतां वाचम्प्रजापतिरभ्यपीळयत् । तस्या अभिपीळितायै [2]रसः [3]प्राणेदत् । त एवेमे लोका अभवन् ॥३॥ [4]स इमाँ लोकानभ्यपीळयत् । तेषामभिपीळितानां रसः प्राणेदत् । ता एवैता देवता अभवन्नग्नि-र्वायुरसावादित्य[5] इति ॥४॥ स एता देवता अभ्यपीळयत् । तासामभिपीळितानां रसः प्राणेदत् । सा त्रयीविद्याभवत् ॥५॥ [6]स त्रयीं विद्यामभ्यपीळयत् । तस्या अभिपीळितायै रसः प्राणेदत् । ता एवैता व्याहृतयो ऽभवन् भूर्भुवस्स्वरिति ॥६॥ स एता व्याहृतीरभ्यपीळयत् । तासामभिपीळितानां रसः प्राणेदत् । तदेतद-क्षरमभवदोमिति यदेतद् ॥७॥ स एतदक्षरमभ्यपीळयत् । तस्या-[7]ऽभिपीळितस्य रसः प्राणेदत् ॥८॥ १।२३॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तदक्षरदेव । यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् ॥१॥ [1]यद्वेवाक्षरं ना-क्षीयत तस्मादक्षयम् । अक्षयं ह वै नामैतत् । तदक्षरमिति

१. एतां वा । २. रसम् । ३. 'स त्रयीम् ········ रसम् (!) प्राणेदत्' अधिक है । ४. नास्ति । ५–आ । [illegible] नास्ति । स त्रयीम ········ प्राणेदत् । ७–आ ।

१–वा ।

परोक्षमाचक्षते ॥२॥ तद्धैतदेक ओमिति गायन्ति । तत्तथा न गायेत । ईश्वरो हैनदेतेन रसेनान्तर्धातोः[२] । अथो[३] द्वे[४] इवैवम्भवत ओमिति । ओ इत्यु हैके गायन्ति । तदु[५] ह[६] तन्न गीतम् । नैव[७] तथा गायेत् । ओं[८] इत्येव गायेत् । तदेनदेतेन रसेन सन्दधाति ॥३॥ तदेतं रसं तर्पयति । रसस्तृप्तोऽक्षरं[९] तर्पयति । अक्षरं तृप्तं व्याहृती स्तर्पयाति । व्याहृतयस्तृप्तावेदाँस्तर्पयन्ति । वेदास्तृप्ता देवतास्तर्पयन्ति । देवतास्तृप्ता लोकाँस्तर्पयन्ति। लोकास्तृप्ता अक्षरं तर्पयन्ति। अक्षरं तृप्तं वाचं तपर्यति[१०] । वाक्[११] तृप्ताकाशं तर्पयति । आकाशस्तृप्तः प्रजास्तर्पयाति । तृप्याति प्रजया पशुभिर्य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति[१२] ॥४॥ १।२४॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

——:०:——

अयमेवेदमग्र[१] आकाश आसीत् स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स यस्स आकाश आदित्य एव स । एतस्मिन् (ह्य) उदिते[२] सर्वमिदमाकाशते ॥२॥ तस्य मर्त्यामृतयोर्वै[३] तीराणि[४] समुद्र एव ।

२ या–। ३–थे। ४ कै, द्वै । ५ नास्ति । ६ नि–। ७ नै वम्र । ८ धो । ९ अक्षरं .... वाचं तर्पयति यह पाठ नहीं । १०–यन्ति । ११ वाकेस्त । १२ गाय ते ।

१ दय (!) । २ सुदिते । ३ वैर्व । ४ तरणी ।

तयत्समुद्रेणं[5] परिस्तृतं तन्मृत्योराप्तमथ यत्पर तदमृतम् ॥३॥ स यो ह स समुद्रो य एवायम्पवत एष एव स समुद्रः । एते हि संद्रवन्तं[6] सर्वाणि भूतान्यनुसंद्रवन्ति[7] ॥४॥ तस्य[8] द्यावापृथिवी एव रोधसी । अथ यथा नद्यां[9] कंसानि[10] वा मर्हाणानि[11] स्युस्सराँसि वैवं मस्यायम्पार्थिवस्समुद्रः[12] ॥५॥ स एष पार एव समुद्रस्योदेति । स उद्यन्नेव वायोः पृष्ठ आक्रमते । सोऽमृतादेवोदेति । अमृतमनुसंचरति । अमृते प्रतिष्ठितः[13] ॥६॥ तस्यैतत् त्रिवृद्रूपम्मृत्योरनाप्तं शुक्लं कृष्णम्पुरुषः ॥७॥ तद्यच्छुक्लं तद्वाचोरूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या सा वाक्[14] सा[15] । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥८॥ अथ यत्कृष्णं तदपां रूपमन्नस्य[16] मनसोयजुषः । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत्[17] । अथ यन्मनो यजुस्तत् ॥९॥ अथ यः पुरुषस्स प्राणास्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥१०॥ १।२५॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्तिच्छुक्लं कृष्णम्पुरुषः ॥१॥ तद्यच्छुक्लं तद्वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या सा वाक्[1] सा[2] ।

५—स्तृतं—। ६—द्रे—। ७ मनुद्र—। ८—या । ९—याम् । १० कसानि । ११ महीयश्रीनि । १२ अधिक है 'सस्'. सं । १३ प्रतिस्तिष्ठतः । १४ वाक्चम्, वाग्ब् । १५ सत् । १६ ययमस्य । १७ नास्ति, तथाः—चः शुक्ल्वत् ॥ १ ऋक् । २ अधिक 'ऽस्मा'।

अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥२॥ अथ यत्कृष्णं तदपां रूपमन्नस्य मनसो यजुषः । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो यजुस्तत् ॥३॥ अथ यः पुरुषस्य प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥४॥ सैषोऽत्क्रान्तिर्ब्रह्मणः । अथातः पराक्रान्तिः ॥५॥ सा या साऽऽक्रान्तिर्विद्युदेव सा । स यदेव विद्युतो विद्योतमानायै श्येतं रूपम्भवति तद्वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः ॥६॥ यद्वेव विद्युतस्संद्रवन्त्यै नीलं रूपम्भवति तदपां रूपमन्नस्य मनसो यजुषः ॥७॥ य एवैष विद्युति पुरुषस्स प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥८॥ १।२६॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स हैषोऽमृतेन परिवृढो मृत्युमध्यास्तेऽन्नं कृत्वा ॥१॥ अथैषऽप एव पुरुषो योऽयं चक्षुषि । य आदित्ये सोऽतिपुरुषः । यो विद्युति स परमपुरुषः ॥२॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हास्यैते जायन्ते ॥३॥ स योऽयं चक्षुष्येषोऽनुरूपो नाम । अन्वङ् ह्येष

३—षो । स्र (!) । ४—त् । ५ नास्ति । ६ श्वेतं । ७—द्रु— । ८—षे । ९—आ ।

१—सी । २—यो । ३—णो.मा.ण । ४—ञ्ज । ५ ह ।

सर्वाणि रूपाणि । तमनुरूप इत्युपासीत । अन्वञ्चि[6] हैनं सर्वाणि रूपाणि भवन्ति ॥४॥ य आदित्ये स प्रतिरूपः । प्रत्यङ्[7] ह्येष सर्वाणि रूपाणि । तम्प्रतिरूप इत्युपासीत । प्रत्यञ्चि हैनं सर्वाणि रूपाणि भवन्ति ॥५॥ यो विद्युति स सर्वरूपः । सर्वाणि ह्येतस्मिन्[8] रूपाणि । तं[10] सर्वरूप इत्युपासीत । सर्वाणि हाऽस्मिन् रूपाणि[10] भवन्ति ॥६॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हाऽस्यैते जायन्ते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥७॥ १।२७॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकः समाप्तः ।

—— :o: ——

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष एव[1] तपति । स एष सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् ॥२॥ तस्य वागेवायो रश्मिः प्राङ् प्रतिष्ठितः । सा या सा वागग्निस्सः । स दशधा भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधा[2] न्यर्बुदधा निखर्वधा[3] पद्मधा[4]ऽक्षितिर्व्योमान्तः[5] ॥ ३ ॥ स एष एतस्य रश्मिर्वा-

६—त्रञ्ची,-वञ्ची,-वं । ७ ह्येनम् । ८ प्रस्यं । ९ अधिक है रूपाणि:' नास्ति—तं .... रूपाणि ।

१ नास्ति । २ अर— । ३ निखर्वाचं । ४—ति । ५—त, स्तोम— ।

म्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च वदत्येतस्यैव[6] रश्मिना वदति[7] ॥४॥ अथ[8] मनोमयो दक्षिणा[9] प्रतिष्ठितः । तद्य-त्तन्मनश्चन्द्रमास्सः[10] । स दशधा भवति ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिर्मनो भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च मनुत एतस्यैव रश्मिना मनुते ॥६॥ अथ चक्षुर्मयः[11] प्रत्यङ्[12] प्रतिष्ठितः[13] । तद्यत्तच्चक्षु-[14] रादित्यस्सः । स दशधा भवति ॥७॥ स एष एतस्य रश्मिश्चक्षु-र्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च पश्यत्येतस्यैव रश्मिना पश्यति ॥८॥ अथ श्रोत्रमय उदङ्प्रतिष्ठितः[15] । तद्यत्तच्छ्रोत्रं दिशस्ताः । स दशधा भवति ॥९॥ स एष एतस्य रश्मिश्श्रोत्र-म्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च शृणोत्येतस्यैव रश्मिना शृणोति ॥१०॥ १।२८॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ प्राणमय ऊर्ध्वः प्रतिष्ठितः[1] । स यस्स प्राणो वायुस्सः । स[2] दशधाभवति ॥१॥ स एष एतस्य रश्मिः प्राणोभूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च प्राणित्येतस्यैव रश्मिना प्राणिति

६ पश्यति । ७ पश्यति । ८ नास्ति । ९ दक्षिणा । १० मन्वश्च । ११ चक्षुम- । १२-थ । १३ वस्थितः । १४ स, नास्ति । १५ प्रत्यवस्थितः ॥

१-स्थ- । २ नास्ति ।

॥२॥ अथाऽसुमयस्तिर्यङ् प्रतिष्ठितः । स ह[3] स ईशानो नाम । स दशधा भवति[4] ॥३॥ स एष एतस्य रश्मिरसुर्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्चाऽसुमानेतस्यैव रश्मिनाऽसुमान् ॥४॥ अथाऽन्नमयोऽर्वाङ् प्रतिष्ठितः । तद्[5]यत्[6]तदन्नमापस्ताः[7] । स दशधा भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधान्यर्बुदधा निखर्वधा[8] पद्ममक्षितिर्व्योमान्तः[9] ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिरन्नम्भूत्वा सर्वास्वासु[10] प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्चाभ्नात्येतस्यैव रश्मिना-भ्नाति ॥६॥ स एष सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । तदे[11]तदृचाऽभ्यनूच्यते

यस्सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्तसिन्धून् ।
योरौहिण[12]मस्फुरद्वज्रबाहु[13]र्द्यामारोहन्तं[14] स जनास इंद्र इति

॥७॥ यस्सप्तरश्मिरिति । सप्त ह्येत आदित्यस्य रश्मयः । वृषभ इति । एष ह्येवाऽऽसाम्प्रजानामृषभः । तुविष्मानिति । महीयैऽवा[15] स्यैषा ॥८॥ अवासृजत् सर्तवे सप्तसिन्धूनिति । सप्तह्येते सिन्धवः ।

---

३ स्थान खाली है 'स……ई' । ४-वन्ति । ५ 'यत्' के पश्चात् 'तत्खलु नाम' पाठ है, 'तदन्नम……स' नहीं है । ६ अँवन्नम । ७ सैद्रा, ख । ८ निखर्वाचम्, निखर्वधाश्च । ९ वं म- । १० सामास्व् ११ नास्ति तदेतद्……वृषभस्तुविष्मान् । १२ रोहन्न १३-हु । १४-वा । १५ महयै ।

तैरिदं सर्वं सितम् । तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तस्मात्सिन्धवः ॥९॥ यो रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुरिति । एष (हि) रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुः ॥१०॥ द्यामारोहन्[16] स जनास इन्द्र इति । एष हीन्द्रः ॥११॥ १।२९॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

तद्यथा गिरिम्पन्थानस्समुदियुरिति हस्माऽऽह शाट्यायनि-रेवमेत आदित्यस्य रश्मय एतमा[1]दित्यं सर्वतो[2]ऽपियन्ति । स हैवं विद्वानोमित्याददान एतैरेतस्य रश्मिभिरेतमादित्यं सर्वतोऽप्येति॥१॥ तदेतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं[3] साम । अन्यतोद्वारं[4] हैऽ[5]नदे[6]क एवा-[7]ऽभ्र[8]ङ्गमुपासते । अतो[9]ऽन्यथा[10]विदुः ॥२॥ अथ य एतदेवं वेद स एवैतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं सामवेद ॥३॥ सा एषा विद्युत् । (यद्) एतन्मण्डलं समन्तम्परिपतति तत्साम । अथ यत्परमतिभाति स पुण्यकृत्यायै रसः । तमभ्यतिमुच्यते ॥४॥ तदेतदभ्रातृव्यं[11] साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥५॥ १।३०॥

नवमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः। नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१६ स्थान खाली है–हनु–वाखा,–हस्तं ।

१ एवम् । २ तिमतिवियन्ति । ३ मनुष्– । ४ नास्ति । ५ नत, त । ६ नास्ति । ७ एताव, एता । ८ गम ''' । ९ एतो । १० विदुः । ११–सुर्वि ॥

अथवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाऽप्येतर्हि । स यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्रस्सामैवतत् ॥१॥ तस्यै-तस्य साम्न इयमेव प्राची दिग्घिङ्कार इयम्प्रस्ताव इयमादिरियमुद्गी-थोऽसौ प्रतिहारोऽन्तरिक्षमुपद्रव इयमेवनिधनम् ॥२॥ तदेतत्सप्त-विधं साम । स य एवमेतत्सप्तविधं साम वेद यत्किञ्च प्राच्यांदिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं हिङ्कारेणाप्नोति ॥३॥ अथ यद्दक्षिणायां दिशि तत्सर्वं प्रस्तावेनाप्नोति ॥ ४ ॥ अथ यत्प्रतीच्यां दिशि तत्सर्वमादिनाप्नोति ॥५॥ अथ यदुदीच्यांदिशि तत्सर्वमुद्गीथेनाप्नोति ॥६॥ अथ यदमुष्यां दिशि तत्सर्वम्प्रतिहारेणा-प्नोति ॥७॥ अथ यदन्तरिक्षे तत्सर्वमुपद्रवेणाप्नोति ॥८॥ अथ यदस्यां दिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं निधनेनाप्नोति ॥९॥ सर्वं हैवाऽस्याऽऽप्तम्भवति सर्वं जितं न हा-ऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥१०॥ स यद्धकिञ्च किञ्चैवं विद्वानेषु लोकेषु कुरुते स्वस्य हैव तत्स्वतः कुरुते । तदे-तदृचाऽभ्यनूच्यते ॥११॥ १।११॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

---

१ हिं । २—र्द्रू । ३ पत् । ४ 'मनुष्या' अधिक है । ५—वा । ६ यहाँ चौथा श्लोक (मन्त्र) अधिक है और साम की प्रतिहारेण 'प्रतिहारेण' के स्थान में । ७ 'अन्यात्' अधिक है । ८ 'दक्षिणायांदिशि' ।

यद्[1] द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमिरुत स्युः । न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या[2] अनु न[3] जातमष्ट रोदसी इति ॥१॥ यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुतस्युरिति । यच्छतं द्यावस्स्युश्शतम्भूम्यस्ताभ्य एष एवाऽऽकाशो ज्यायान्[4] ॥२॥ न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अन्विति । न ह्येतं सहस्रं चन सूर्या अनु ॥३॥ न[5] जातमष्ट रोदसी इति । न ह्येतं जातं रोदन्ति । इमे ह वाव रोदसी ताभ्यामेष एवाकाशो ज्यायान् । एतस्मिन् ह्येवैते अन्तः ॥४॥ स यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष तपति ॥५॥ स एषोऽन्नाण्[6]यतिमु[7]च्यमान[6] एति । तद्यथैषोऽन्नाण्यतिमुच्यमान एवमेव स सर्वस्मात्पाप्मनोऽतिमुच्यमान एति य एवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।३२॥

दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

त्रिवृत्साम चतुष्पात् । ब्रह्म तृतीयमिन्द्रस्तृतीयम्प्रजापतिस्तृतीयमन्नमेव[1] चतुर्थः पादः ॥१॥ तं यद्ध ब्रह्म स प्राणोऽथ य इन्द्र-

---

१ नास्ति । २—र्यां । ३ नास्ति । ४—यन् । ५ नास्ति, स—स ।
६ स्थान खाली 'ष्ट' तक । ७—मानय,—यमानय ॥

१ त्रित्—

स्सा वागथ यः प्रजापतिस्तन्मनोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥२॥ मन एव हिङ्कारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥३॥ करोत्येव वाचा नयति प्राणेन गमयति मनसा। तदेतन्निरुद्धं यन्मनः। तेन यत्र कामयते तदात्मानं च यजमानं च दधाति ॥४॥ अथाधि-दैवतम्। चन्द्रमा एव हिङ्कारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य उद्गीथ आप एव चतुर्थः पादः। तद्धि प्रसत्तममन्नम ॥५॥ ता वा एता देवता अमावास्यां रात्रिं संयन्ति। चन्द्रमा अमावास्यां रात्रिमादित्यम्प्र-विशत्यादित्योऽग्निम् ॥ ६ ॥ तद्यत्संयन्ति तस्मात्साम। स ह वै सामवित्स साम वेद य एवं वेद ॥७॥ तासां वा एतासां देवतानामे-कैकैव देवता साम भवति ॥८॥ एष एवादित्यस्त्रिवृच्चतुष्पाद्रश्मयो मण्डलम्पुरुषः। रश्मय एव हिङ्कारः। तस्मात्ते प्रथमत एवोद्यत-स्तायन्ते। मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्तस्स एव चतुर्थः पादः ॥९॥ एवमेव चन्द्रमसो रश्मयो मण्डलम्पुरुषः। रश्मय एव हिङ्कारो मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्त स्स एव चतुर्थः पादः ॥१०॥ चत्वार्यन्यानि चत्वार्यन्यानि। तान्यष्टौ। अष्टाक्षरा गायत्री गायत्रं साम ब्रह्म उ गायत्री। तदु ब्रह्माऽभि-सम्पद्यते। अष्टाशफाः पशवस्तेनोपशम्यम ॥११॥ १।३२ ॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः।

१—दैवत—। ३—प्रस—। ४—मा। ५ सय—। ६—मं। ७ नाप्नि। ८ जुष्टा। ९—नी, न॥

अथाऽध्यात्मम्। इदमेव चक्षुस्त्रिवृच्चतुष्पाच्छुक्लं कृष्णम्पुरुषः।
शुक्लमेव हिङ्कारः कृष्णम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या इमा आपोऽन्तस्स
एव चतुर्थः पादः॥१॥ इदमादित्यस्यायनमिदं चन्द्रमसः। चत्वारीमानि
चत्वारीमानि। तान्यष्टौ। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रं साम ब्रह्म उ गा-
यत्री। तदु ब्रह्माभिसम्पद्यते[1]। अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम्॥२॥
स यो ऽयम्पवते स[2] एष एव[2] प्रजापतिः। तद्देव साम। तस्यायं देवो
योऽयं चक्षुषि पुरुषः। स एष आहुतिमतिमत्योत्क्रान्तः॥३॥ अथ
यावेतौ चन्द्रमाश्चादित्यश्च यावेतावप्सु दृश्येते[3] एतावेतयोर्देवौ[4]॥४॥
यद्ध वा इदमाहुर्देवानां देवा इत्येते ह ते। त एत आहुतिमतिमत्यो-
त्क्रान्ताः॥५॥ तद्ध पृथुर्वैन्यो दिव्यान्व्रात्यान्पप्रच्छ[5] येभिर्वात[6]
इषितः प्रवाति ये ददन्ते पञ्च दिशस्समीचीः[7]। य
आहुतीरत्यमन्यन्त[8] देवा[9] अपां[10] नेतारः कतमे त आ-
सन्निति॥६॥ ते ह प्रत्यूचु रिमामेषाम्पृथिवीं वस्त एको-
ऽन्तरिक्षम्पर्येको[11] बभूव। दिवमेको ददते यो विधर्ता[12]
विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्त्यन्य[13] इति॥७॥ इमामेषाम्पृथिवीं

१—पाद्—। २ नास्ति। ३—यते। ४ एता उ। ५ तान्। ६ एभिर्।
७ दयाल, दया। ८—ईर्। ९ त्यम—। १० पताङ्। ११—ईम्—। १२—धर्ता।
१३ मन्य्।

मस्त एक इत्यभिहेसः ॥८॥ अन्तरिक्षम्पर्येको बभूवेति वायुर्ह सः॥९॥ दिवमेको ददते यो विधर्ते्ऽस्यादित्यो ह सः ॥१०॥ विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्त्यन्य इति । एता ह वै देवता विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्ति चन्द्रमा नक्षत्राणीति । ता एतास्सामैव सतो व्यूढोऽस्याद्याय ॥११॥

१ । ३४ ॥

एकादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

-:०:-

अथैतत्साम । तदाहुस्संवत्सर एव सामेति ॥१॥ तस्य वसन्त एव हिङ्कारः । तस्मात्पशवो वसन्ता हिङ्करिक्रतस्ससमुदायन्ति ॥२॥ ग्रीष्मः प्रस्तावः । अनिरुक्तो वै प्रस्तावोऽनिरुक्त ऋतूनां ग्रीष्मः ॥३॥ वर्षा उद्गीथः । उदिव वै वर्षं गायति ॥४॥ शरत्प्रतिहारः । शरदि ह खलु वै भूयिष्ठा ओषधयः पच्यन्ते ॥५॥ हेमन्तो निधनम् । निधनकृता इव वै हेमन्प्रजा भवन्ति ॥६॥ तावेतावन्तौ संधत्तः । एतदन्वनन्तस्संवत्सरः । तस्यैतावन्तौ यद्धेमन्तश्च वसन्तश्च । एतदनु ग्रामस्यान्तौ समेतः । एतदनु निष्कस्यान्तौ समेतः । एतदन्वहिर्भोगान्पर्याहृत्यास्ते ॥७॥ तद्यथा ह वै निष्कस्समन्तं ग्रीवा अभिपर्यक्त

१, विधत्ते । १५ अन्न्-, 'न्तू-'-पाया ।

१-हिङ्करिकृतास्,-कपिञ्जलस् । २ नास्ति । ३-सन्तू । ४ सवत्-
५ श्री- ६-यत्तः ।

एवमनन्तं साम । स य एवमेतदनन्तं साम वेदानन्ततामेव जयति ॥८॥ १।३५॥

द्वादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथैतत्पर्जन्ये साम । तस्य पुरोवात एव हिङ्कारः । अथ यदभ्राणि सम्प्लावयति स प्रस्तावः । अथ यत् स्तनयति स उद्गीथः । अथ यद्विद्योतते स प्रतिहारः । अथ यद्वर्षति तन्निधनम् ॥१॥ तदेतत्पर्जन्ये साम । स य एवमेतत्पर्जन्ये साम वेद वर्षुको[1] हास्मै पर्जन्यो भवति ॥२॥ अथैतत् पुरुषे[2] साम । तस्यायमेव हिङ्कारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ॥३॥ तदेतत्पुरुषे साम । स य एवमेतत्पुरुषे साम वेदोऽऽर्ध्व एव प्रजया[3] पशुभिरारोहन्नेति ॥४॥ य उ एनत्प्रत्यग्वेद[4] ये प्रत्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति । तस्यायमेव हिङ्कारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथो[5]ऽयम्प्रतिहार[5] इदं निधनम् । ये प्रत्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥५॥ य उ एनत्तिर्यग्वेद[6] ये तिर्यञ्चो[7] लोकास्ताञ्जयति । तस्य लोमैव[8] हिङ्कारस्त्वक्प्रस्तावो मांसमुद्गीथोऽस्थि प्रतिहारो मज्जानिधनम् ॥६॥ तस्य त्रीण्या विगायति प्रस्तावम्प्रतिहारं[9]

७ ञ्ननन्ताम् ।

१—वर्षुक्—। २—षो । ३ प्रजा । ४—ञ्चं । ५ नास्ति । ६ प्रत्न, प्रत्नं । ७—ञ्चः—, 'म' अधिक है । ८ लोक्—। ९ हिंकारं ॥

त्रिधनम् । तस्मात्पुरुषस्य श्रीयस्तीन्याविर्दन्ताश्च दृष्टाश्चनखाः । ये तिर्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥७॥ य उ एनत्संपन्वेद ये सम्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति । तस्य मन एव हिङ्कारो वाक्प्रस्तावः प्राणा उद्गीथ-श्चक्षुः प्रतिहार श्श्रोत्रं निधनम् । ये सम्यञ्चो लोकास्ताञ्जति ॥८॥ अथैतद्देवतासु साम । तस्य वायुरेव हिङ्कारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य उद्गीथश्चन्द्रमा प्रतिहारो दिश एव निधनम् ॥६॥ तदेतद्देवतासु साम । स य एवमेतद्देवतासु साम वेद देवतानामेव सलोकतां जयति ॥१०॥ १।३६॥

द्वादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्यैतास्तिस्र भागा आग्नेय्ये[1]कैन्द्र्ये[2]का वैश्वदेव्येका ॥१॥ सा या मन्द्रा[3] साऽऽग्नेयी[4] । तया प्रातस्सवनस्योद्गेयम् । आग्नेयं वै प्रातस्स-वनमाग्नेयोऽयं लोकः। स्वयाऽऽगया प्रातस्सवनस्योऽद्गायत्यृध्नोतीमं लोकम् ॥२॥ अथ[5] या घोषिण्युपब्दिमती[6] सैऽऽन्द्री । तया माध्य-न्दिनस्य[7] सवनस्योद्गेयम् । ऐन्द्रं वै माध्यन्दिनं सवन मैन्द्रोऽसौ लोकः । स्वयाऽऽगया माध्यन्दिनस्य सवनस्योद्गायत्यृध्नोसमुंलोकम्[8] ॥३॥ अथ यां[9] वीङ्ख्यन्निव प्रथयन्निव गायति सा वैश्वदेवी । तया

---

१ येक्-। २ ऽऽन्द्र । ३ नास्ति, सा············ऽद्र । ४ मैनधी । ५ नास्ति अथ············लोकम । ६–अब्दी–के लिये स्थान खाली है। ७–न्दिन । ८–तिऽमं । ९ या, ' घोषिणयु ', भी लिखा है ।

तृतीयसवनस्योद्गेयम् । वैश्वदेवं वै तृतीयसवनं वैश्वदेवोऽयमन्तरा-
लोकः । स्वयाऽऽगया तृतीयसवनस्योद्गायत्यृ[10]ध्नोतीममन्तरालोकम्
॥४॥ अथो उचा खल्वाहु रेकयैवाऽऽगयोद्गेयं यदेवास्य मध्यं वाच
इति । तद्यया वै वाचा व्यायच्छमान उद्गायति तदेवास्यमध्यं वाचः ।
तया[11] वा एतया वाचा सर्वा वाच उपगच्छति। अव्यासिक्तामेकस्थां
श्रियमृध्नोति य एवं वेद ॥५॥ अथ या क्रौञ्चा सा बार्हस्पत्या । स
यो ब्रह्मवर्चसकामस्स्यात्स[12] तयोद्गायेत् । तद्ब्रह्म वै बृहस्पतिः । तद्वै
ब्रह्मवर्चसमृध्नोति तथा ह ब्रह्मवर्चसीभवति ॥६॥ अथ ह चैकिता-
नेय एकस्यैव साम्न आगां गायति गायत्रस्यैव । तदनवानं गेयम्[13] ।
तत्[14] साम्न एवा प्रतिहारादनवानं गेयम् । तत्प्राणो वै गायत्रम् ।
तद्वै प्राणमृध्नोति । तथा ह सर्वमायुरेति ॥७॥ १।३७॥

द्वादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तं[1] चैकितानेयमुद्गायन्तं कुरव उपोदुरुज्जहि[2]हि
साम दाल्भ्येऽति ॥१॥ स होऽपोद्यमानो नितरां जगौ । तं होचुः
किमुपोद्यमानो नितरामगासीरिति ॥२॥ स होवाचेदं वै लोमे[3]ऽसे-

१०–यन्ति । ११ ताया । १२ स्त, नास्ति । १३ 'वै गायत्रम्'
नीचे से ले के अधिक लिखा है । १४ 'साम्नस्' अधिक है ॥

१ तत्रा । २ उजिहिहि । ३ लोमे ।

तदेवैतत्प्रत्युपश्रृण्मः । तस्मादु ये न एतदुपावादिषु[५]र्लोमशानीऽव तेषां
श्मशानानि भवितारः । अथ वयमुदेव गाता[६]रस्स्म इति ॥३॥ अथ
ह राजा जैवलिर्गलून[७]समार्त्तकायणं शामूल पर्णाभ्यामुत्थितम्पप्र-
च्छार्चा[८]ऽऽगाता शालावत्या३ साम्ना३ इति ॥४॥ नैव राजन्नृचेति
होवाच न साम्नेऽति । तद्यूयं तर्हि सर्वे एव पर्णाय्या[९] भविष्यथ य
एवं विद्वाँसोऽगायतेति ॥५॥ अथ यद्वाऽवत्स्यदृचा च साम्ना चाऽऽगामे[१०]-
ति धीतेन वै तथा तथाम्नाऽमलाकाण्डेनाऽऽगातेऽति हैनाँस्तदवत्स्यत् ।
तद्ध तदुवाच स्वरेण चैव हिङ्कारेण चाऽऽगामेति ॥६॥ १।३८॥

द्वादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अथ ह सत्याधिवाकश्चैत्ररथिस्सत्ययज्ञम्पौलुषितमुवाच प्राचीन-
योग्येति मम[१] चेद्वै त्वं साम विद्वान् साम्नाऽऽर्त्विज्यं करिष्यसि नैव
तर्हि पुनर्दीक्षामभिध्यातासीति । मुहुर्दीक्षी[२] आस[३] ॥१॥ स होवाच
यो वै साम्नश्श्रियं विद्वान्साम्नाऽऽर्त्विज्यं करोति श्रीमानेव भवति ।
मनो वाव साम्नश्श्रीरिति ॥२॥ यो वै साम्नः प्रतिष्ठां विद्वान्साम्ना-
ऽऽर्त्विज्यं करोति प्रत्येव तिष्ठति । वाग्वाव साम्नः प्रतिष्ठेति ॥३॥

४—उपावाद्— । ५—सुर् । ६—सार । ७ गलूनसम्, गुल्गिनसम
८—स । ९ पर्णार्ष्या । १०—च आगामे ॥

१ मम । २—त दि । ३ आ ।

यो वै साम्नस्सुवर्णं विद्वान् साम्नाऽऽर्त्विज्यं करोत्यध्यस्य सुवे सुवर्णं गम्यते। प्राणो वाव साम्नस्सुवर्णमिति ॥४॥ यो वै साम्नोऽपचितिं विद्वान्साम्नाऽऽर्त्विज्यं करोत्यपचितिमानेव भवति। चक्षुर्वाव साम्नोऽपचितिरिति ॥५॥ यो वै साम्नश्श्रुतिं विद्वान्साम्नाऽऽर्त्विज्यं करोति श्रुतिमानेव भवति। श्रोत्रं वाव साम्नश्श्रुतिरिति ॥६॥ १।३६॥

द्वादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः। द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः।

:०:

चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः। गुहा त्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीऽति ॥ १ ॥

वागेव साम। वाचा हि साम गायति। वागेवोऽक्थम्। वाचा ह्युक्थं शंसति। वागेव यजुः। वाचा हि यजुरनुवर्तते ॥२॥ तद्यत्किंचार्वाचीनम्ब्रह्मणस्तद्वागेव सर्वम्। अथ यदन्यत्र ब्रह्मोपदिश्यते। नैव हि तेनाऽऽर्त्विज्यं करोति। परोक्षेणैव तु कृतम्भवति ॥३॥

४-ह्यो।

१-हाणि। २-हितानी। ३ नास्ति। ४-कू-५ वार्थ। ६ ने।
७ नास्ति।

तस्या एतस्यै वाचो मनः पादश्चक्षुः पादश्श्रोत्रम्पादो वागेव चतुर्थः[८] पादः[९] ॥४॥ तद्यद्वै मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति। यच्चक्षुषा पश्यति तद्वाचा वदति। यच्छ्रोत्रेण शृणोति[१०] तद्वाचा वदति ॥५॥ तद्यदे-तत्सर्वं वाचमेवाऽभिसमयति[११] तस्माद्वागेव साम। स ह वै सामवित्स साम वेद य एवं वेद ॥६॥ तस्या एतस्यै वाचः प्राणा[१२] एवाऽसुः। एषु हीदं सर्वमसूतेति[१३] ॥७॥ १।४०॥

त्रयोदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः।

तेन हैतेनाऽसुना[१] देवा जीवन्ति पितरो जीवन्ति मनुष्या जी-वन्ति पशवो जीवन्ति गन्धर्वाप्सरसो जीवन्ति सर्वमिदं जीवति ॥१॥ तदाहुर्यदसुनेदं[२ ३ ४] सर्वं जीवाति कस्साम्नोऽसुरिति। प्राण इति ब्रूयात्। प्राणो ह वाव साम्नोऽसुः ॥२॥ स एष प्राणो वाचि प्रतिष्ठितो वाग्घ प्राणे प्रतिष्ठिता। तावेतावेवमन्योऽन्यस्मिन्प्रतिष्ठितौ[५]। प्रतितिष्ठति[६] य एवं वेद ॥३॥ तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते—

८ 'चतुर्थः' अधिक है। ९ स्यात्। १० शृणोति। ११ ऽहिसम— १२—णा। १३ 'असूते' के परे 'एषु हीऽदं सर्वं सूतेऽति' सब में लिखा है ('नास्ति' ति)॥

१—नीऽति। २ यथा। ३ येने। ४ 'इदं' अधिक है। ५—ते।

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः । विश्वे देवा अदितिः[10] पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ इति ॥४॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति[8] । एषा वै[11] द्यौरेषाऽन्तरिक्षम्[11] ॥५॥ अदितिर्माता स पिता स पुत्र इति । एषा वै[12] मातैषा पितैषा पुत्रः ॥६॥ विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना इति । येदेवा असुरेभ्यः पूर्वे पञ्चजना आसन् य एवासावादित्ये पुरुषो यश्चन्द्रमसि यो विद्युति योऽप्सु योऽयमक्षन्[13]अन्तरेष एव ते । तदेषैव ॥७॥ अदितिर्जातमदितिर्जनित्वमिति[14] । एषा ह्येव जातमेषा जनित्वम् ॥८॥१।४१॥

त्रयोदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । त्रयोदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

-:o:-

आरुणिर्ह वासिष्ठं चैकितानेयम्ब्रह्मचर्यमुपेयाय । तं होवाचा- ऽऽजानासि[1] सौम्य गौतम यदिदं वयं[2] चैकितानेयास्सामैवोपास्महे[3] । कां त्वं देवतामुपास्स[4] इति । सामैव भगवन्त[5] इति होऽवाच ॥१॥ तं[6] ह पप्रच्छ यदग्नौ तद्वेत्था३ इति । ज्योतिर्वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं

८—रीक्स्—। ९ नास्ति, अदितिर्माता······अदितिरन्तरिक्षम् ।
१०—वैं । ११—वो । १२—वैर् । १३—क्ष । १४ इतिर्, इति ॥
१ (पाचा) आज । २ वं । ३—माह—इति । ४—स नहीं । ५—न्त । ६ ता ।

सामोऽपास्महे इति[7] ॥२॥ यत्पृथिव्यां तद्वेत्था३ इति । प्रतिष्ठा वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्महे इति ॥३॥ यदप्सु तद्वेत्था३ इति[8] । शान्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्महे इति ॥४॥ [9]यदन्तरिक्षे तद्वेत्था३ इति । आत्मा वा एष तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्महे इति ॥५॥ यद्वायौ तद्वेत्था३ इति । श्रीर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोऽपास्महे इति ॥६॥ यद्दिक्षु तद्वेत्था३ इति । व्याप्तिर्वा एषा तस्य साम्नो[10] यद्वयं सामोपास्महे इति[11] ॥७॥ यद्दिवि तद्वेत्था३ इति । विभूतिर्वा[12] एषा तस्य साम्नो यद् वयं सामोपा-स्महे[13] इति ॥८॥ १।४२॥

चतुर्दशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदादित्ये तद्वेत्था३ इति । तेजो वा एतत्तस्य[1] साम्नो यद्वयं सामोपास्महे इति ॥१॥ यच्चन्द्रमसि तद्वेत्था३ इति । भा वा एषा[1] तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्महे इति ॥२॥ यन्नक्षत्रेषु तद्वेत्था३ इति । प्रज्ञा[2] वा एषा तस्य[1] साम्नो यद्वयं सामोपास्महे इति ॥३॥ यदभ्रे तद्वेत्था३ इति । रेतो वा एतत्तस्य[3][1] साम्नो यद्वयं सामोपास्महे

---

७ हाशिया पर लिखा है । ८ एतस्य । ९ नास्ति यद्……इति । १० नास्ति साम्नो……प्य । ११–हा । १२ नास्ति व……स्महे ॥ १ नास्ति । २ प्रजा । ३ नास्ति, 'एतत्' में 'तत्' ।

इति ॥४॥ यत्पशुषु[४] तद्वेत्था३ इति । यशो वा एतत्तस्य साम्नो[५] यद्वयं सामोपास्महइ इति ॥५॥ यदृचि तद्वेत्था३ इति । स्तोमो[६] वा एष तस्य[१] साम्नो यद्वयं सामोपास्महइ इति ॥६॥ यद्यजुषि तद्वेत्था३ इति । कर्म वा एतत्तस्य[१] साम्नो यद्वयं सामोपास्महइ इति ॥७॥ अथ किं उपास्स[७] इति । अक्षरमिति । कतमत्तदक्षरमिति । यत्क्षरन्नाऽक्षीयतेति । कतमत्तत्[८] क्षरन्[९]नाऽक्षीयतेति । इन्द्र इति ॥८॥ कतमस्स इन्द्र इति । यो[१०]ऽक्षन्[११]रमत इति । कतमस्स[१२] यो[१३]ऽक्षन्रमत इति । इयं देवतेति होवाच ॥९॥ योऽयं चक्षुषि[१४] पुरुष एष इन्द्र एष प्रजापतिः ।(स) समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवा समस्सर्वेण भूतेन । एष परो दिवो[१५] दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासितव्यः[१६] ॥१०॥ स य एवमेवं वेद ज्योतिष्मान् प्रतिष्ठावान्क्षान्तिमानात्मवाञ्छ्रीमान् व्याप्तिमान् विभूतिमांस्तेजस्वी[१७] भावान् प्रज्ञावान्त्रेतस्वी यशस्वी स्तोमवान्[१८] कर्मवानक्षरवानिन्द्रियवान् सामन्वीभवति ॥११॥ तद्वे-[१९] तदृचाऽभ्यनूच्यते ॥१२॥ १।४३॥

चतुर्दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

---

४ नास्ति । ५ यो । ६ स्तो– । ७······'स्स' के लिये स्थान छोड़ा है । ८–क्षू । ९ यक्षरँ । १०–क्ष । ११ इन्द्रमत । १२ स्तो । १३ नास्ति । १४–र्षं । १५ दिव्य– । १६–सीतव्यं । १७–वी । १८ स्तोमात्र । १९ ऋक्षू ॥

रूपं-रूपम्प्रति रूपोबभूव तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणाय।
इन्द्रोमायाभिः पुरुरूप[1] ईयते[2] युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादश॥

इति ॥१॥ रूपं-रूपम्प्रतिरूपो बभूवेति । रूपं-रूपं ह्येष प्रतिरूपो बभूव ॥२॥ तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणायेति । प्रतिचक्षणाय[3] ह्यस्यैतद्रूपम् ॥३॥ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप[4] ईयत[2] इति । मायाभिर्ह्येष एतत्पुरुरूप[5] ईयते[6] ॥४॥ युक्ता ह्यस्य हरयश्शता दशेति[7] । सहस्रं हैत आदित्यस्य रश्मयः । तेऽस्य युक्तास्तैरिदं सर्वं हरति । तद्यदेतैरिदं सर्वं हरति तस्माद्धरयः ॥५॥

रूपं रूपम्मघवा[8] बोभवीति
मायाः कृण्वानः परितन्वं स्वाम् । त्रिर्यद्दिवः
परि मुहूर्त[9]मागात् स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति ॥६॥

रूपं-रूपम्मघवा बोभवीतीति[10] । रूपं-रूपं[11] ह्येष मघवा बोभवीति ॥७॥ मायाः कृण्वानः[12] परि तन्वं स्वामिति । मायाभिर्[13]ह्ये[14]ष एतत्स्वां[15] तनुं गोपायति ॥८॥ त्रिर्यद्दिवः परिमुहूर्तमागादिति[16] । त्रिर्ह वा एष एतस्य मुहूर्तस्येमाम्पृथिवीं समन्तः पर्येतीमाः प्रजास्संचक्षाणः ॥९॥ स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा[17] ऋतावेति । अनृतुपा ह्येष एतदृतावा[18] ॥१०॥१।४४

चतुर्दशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

---

१ पुरुरूप, पुरुरूपं । २ ईयते । ३—णा । ४—पम् । ५—पम् । ६ ईयते । ७ नास्ति, हरयश्......तेऽस्य । ८ 'म' अधिक है । ९ मुहू—१० नास्ति, इति । ११ पुनः लिखा है 'रूपंरूपं......वीतीऽति (!) । १२ कृण्वा । १३—भि । १४ ह्या । १५ नास्ति । १६ ऽति । १७ नृत—१८ ऋता ॥

तद्ध पृथुर्वैन्यो दिव्यान्व्रात्यान्पप्रच्छ—

इन्द्रमुक्थमृचमुद्गीथमाहुर्ब्रह्म साम प्राणं व्यानम् ।
मनो वाचञ्चक्षुरपानमाहुश्श्रोत्रं श्रोत्रिया बहुधा वदन्ती-
ति ॥१॥ ते प्रत्यूचुः—

ऋषय एते मन्त्रकृतः पुराजाः पुनराजायन्ते वेदानां गुप्त्यैकम् ।
ते वै विद्वांसो वैन्य तद्वदन्ति समानम्पुरुषम्बहुधा निविष्टम्, इति ॥२॥

इमां ह वा तद्देवतां त्रय्यां विद्यायामिमां समानामभ्येक आप-यन्ति नैके । यो ह वावैतदेवं वेद स एवैतां देवतां सम्प्रति वेद ॥३॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति नैवोद्गातुश्चोपगातॄणां च विज्ञायते । इत एवोऽऽर्ध्वस्स्वरुदेति । स उपरि मूर्ध्नो लेलायति ॥४॥ स विद्यादगमदिन्द्रो नेह कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशेक्ष्यत इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशिष्यते ॥५॥ तदेतद्भ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।४५॥

चतुर्दशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्दशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

———:०:———

१—स्वम् । २ नो । ३ त्रय्यां, तृय्यां । ४ ईमां । ५—नां । ६ न्य् । ७ हवे । ८ व वै । ९—गातॄ— १० 'ति' अधिक करो । ११ र्ध्वो । १२ स्वर । १३ परिषे—।

प्रजापतिर्वा वेद अग्र आसीत् । सोऽकामयत बहुः स्याम्प्रजायेय भूयान्स्याम् प्रजेयमिति ॥१॥ स षोडशधाऽऽत्मानं व्यकुरुत भद्रं च समाप्तिश्चाऽऽभूतिश्च[1] सम्भूतिश्च भूतं च सर्वं च रूपं चाऽपरिमितं च श्रीश्च यशश्च नाम चाऽग्रं च सजाताश्च पयश्च महीया[2] च रसश्च ॥२॥ तद्यद्भद्रं हृदयमस्य तत् । ततस्संवत्सरमसृजत । तदस्य संवत्सरोऽनूपतिष्ठते[3] ॥३॥ समाप्तिः कर्मास्य तत् । कर्मणा हि समाप्नोति । तत ऋतूनसृजत । तदस्यर्तवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ आभूतिरन्नमस्य[4] तत्[5] । (तच्) चतुर्धा[6] भवति । ततो मासानर्धमासानहोरात्राण्युषसोऽसृजत । तदस्य मासा अर्धमासा अहोरात्राण्युषसोऽनूपतिष्ठन्ते ॥५॥ सम्भूती[7] रेतो[8]ऽस्य तद् । रेतसो हि सम्भवति ॥६॥ २।७६॥

पञ्चदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

ततश्चन्द्रमसमसृजत । तदस्य चन्द्रमा अनूपतिष्ठते । तस्मात्स रेतसः प्रतिरूपः ॥१॥ भूतम्प्राणो[1]ऽस्य[2] सः । ततो वायुमसृजत । तदस्य वायुरनूपतिष्ठते ॥२॥ सर्वमपानोऽस्य सः । ततः पशूनसृजत । तदस्य पशवो[3]ऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ रूपं व्यानोऽस्य सः । ततः प्रजा

। २–थों । ३–ष्ठन्ते । ४ 'त' अधिक है । ५ तत् ।
। ६–[illegible] र्धा । ७–ति,–ता, त ।
१–त । २–[illegible] । ३ [illegible] ।

असृजत। तदस्य प्रजा अनूपतिष्ठन्ते। तस्मादासु प्रजासु रूपाण्यधिगम्यन्ते ॥४॥ अपरिमितम्मनोऽस्य तत्। ततो दिशोऽसृजत। तदस्य दिशोऽनूपतिष्ठन्ते। तस्मात्ता अपरिमिताः। अपरिमितमिव हि मनः ॥५॥ श्रीर्वागस्य सा। ततस्समुद्रमसृजत। तदस्य समुद्रोऽनूपतिष्ठते ॥६॥ यशस्तपोऽस्य तत्। ततोऽग्निमसृजत। तद[6]स्या[7]ऽग्निरनूपतिष्ठते। तस्मात्स मथितादि[8]व सन्तप्तादिव जायते ॥७॥ नाम चक्षुरस्य तत् ॥८॥ १।४७॥

पञ्चदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

तत आदित्यमसृजत। तदस्यादित्योऽनूपतिष्ठते ॥१॥ अग्न्मूर्धास्य सः। ततो दिवमसृजत। तदस्य द्यौरनूपतिष्ठते ॥२॥ सजाता अङ्गा[1]न्यस्य ता[2]नि। अङ्गैर्हि[3] सह जायते। ततो वनस्पतीनसृजत। तदस्य वनस्पतयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ पयो[4] लोमान्यस्य तानि। तत ओषधीरसृजत। तदस्यौषधयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ महीया[5] मांसान्यस्य तानि। मांसैर्हि सह[6] महीयते। ततो वयांस्यसृजत। तदस्य वयांस्यनूपतिष्ठन्ते। तस्मात्तानि प्रपतिष्णूनि। प्रपतिष्णूनी-

४—यते। ५ नास्ति, ततो .... तस्मात्। ६ नास्ति। ७ तस्या। ८ मथितामिव, मथितिताद्॥

१ संस्थान्य, संगीहान्य, संजीवन्। २ ता। ३ गैद्। ४ नास्ति, पयो .... अनूपतिष्ठन्ते। ५ महीयसा, महिया। ६ स।

प्र महामांसानि[7] ॥५॥ रसो मज्जा[8]ऽस्य सः । ततः पृथिवीमसृजत ।
तदस्य पृथिव्यनूपतिष्ठते[9] ॥६॥ स हैवं षोडशधाऽऽत्मानं विकृत्य
सार्धं समैत् । तद्यत्सार्धं समैतत्[10] तत्साम्नस्सामत्वम् ॥७॥ स एवैष
हिरण्मयः पुरुष उदतिष्ठत्प्रजानां जनिता[11] ॥८॥ १।४८॥

पञ्चदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवाः प्रजापतिमुपाधावाञ्जयामाऽसु-
रानिति ॥१॥ सोऽब्रवीन्न[1] वै मां यूयं वित्थ नाऽसुराः । यद्वै मां यूयं
विद्यात[2] ततो वै यूयमेव स्यात पराऽसुराभवेयुरिति ॥२॥ तद्वै
ब्रूहीत्य[3]ब्रुवन् । सोऽब्रवीत्पुरुषः प्रजापतिस्सामेति मोऽपाद्धवम् ।
ततो वै यूयमेव भविष्यथ पराऽसुरा भविष्यन्तीति ॥३॥ तम्पुरुषः
प्रजापतिस्सामेऽत्युपासत । ततो वै देवा अभवन् पराऽसुराः । स
यो हैवं विद्वान्पुरुषः प्रजापतिस्सामेऽत्युपास्ते भवत्यात्मना पराऽस्य
द्विषन् भ्रातृव्यो भवति ॥४॥ १।४९॥

पञ्चदशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

-:o:-

७ महीम– । ८ मज्ज्या । ९–न्ते । १० समैत; तत्पश्चात्, 'तत्सार्धं समैतत्' (!) पुनः है । ११ जयिता ॥

१ नन्न । २–थात । ३–हिं ॥

देवा वै विजिग्याना[1] अब्रुवन्द्वितीयं करवामहै । माऽद्वितीया भूमेति । तेऽब्रुवन् सामैव[2] द्वितीयं करवामहै । सामैव नो द्वितीयमस्त्विति ॥१॥ त इमे द्यावापृथिवी अब्रुवन् सयेतं साम प्रजनयत-मिति ॥२॥ सो[3]ऽसावस्या अब्रवीभत्सत[4] । सो[3]ऽब्रवीद्बहु वा एतस्यां किं च किं च कुर्वन्त्यभिष्ठीवन्त्यधि[5]चरन्त्यध्यासते । पुनीतन्वेनामपूता वा इति ॥३॥ ते गाथामब्रुवन्त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनि[6]स्स्या इति । तथेति । ते गाथयाऽपुनन् । तस्मादुत गाथया शतं सुनोति ॥४॥ ते कुम्ब्यामब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते[7] कुम्ब्यया-ऽपुनन् । तस्मादुत कुम्ब्यया[7] शतं सुनोति[8] ॥५॥ ते[9] नाराशँसीमब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या[10] इति । तथेति । ते नाराशँस्याऽपुनन् । तस्मादुत नाराशँस्या शतं सुनोति ॥६॥ ते रैभीमब्रुवन्[11] त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति[12] । शतसनिस्स्या[10] इति । तथेति । ते रैभ्याऽपुनन् । तस्मादुत रैभ्या शतं

---

१. विजिग्यानाः । २ वा । ३ सा । ४ अबीभत्सत- । ५-ष्ठिव- । ६-नि,-नी । ७-म्ब्य- । ८ '५' पुनः लिखा है । ९ तेन । १० शतसनिः । ११-भिम । १२ त ॥

पुनोति ॥७॥ सेयम्पूता । अथाऽमुमब्रवीद्बहु वै किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति ॥८॥ १।५०॥

षोडशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स ऐलबेनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः पूतानि यजूँषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥१॥ ते समेत्य साम प्राजनयताम् । तद्यत्समेत्य साम प्राजनयतां तत्सा-म्नस्सामत्वम् ॥२॥ तदिदं साम सृष्टमद उत्क्रम्य लेलायदतिष्ठत् । तस्य सर्वे देवा ममत्विन आसन्मम ममेति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वीद-म्भजामहा इति । तस्य विभागे न समपादयन् । तान्प्रजापतिर-ब्रवीदपेत । मम वा एतत् । अहमेव वो विभक्ष्यामीति ॥४॥ सोऽग्निमब्रवीत्त्वं वै मे ज्येष्ठः पुत्राणामसि । त्वम्प्रथमो वृणीष्वेति ॥५॥ सोऽब्रवीन्मन्द्रं साम्नो वृणेऽन्नाद्यमिति । स य एतद्गायाद-न्नाद एव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्त-मुपवदादिति ॥६॥ अथेन्द्रमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्र-

१३ तम् ।

१—अव्—।, ऐलबैनां । २—साम् । ३ प्रज्—। ४—मत् । ५ मे । ६ 'वीदम्' के लिये स्थान खाली है, वीदं । ७ भविष्य्—। ८ प्रथम । ९ माधनाय । १० ह्रीमान् । ११ अथ । १२ सोमम ।

वीदुग्रं[13] साम्नो[14] वृणे[15] श्रियमिति। स[16] य एतद्गायाच्छ्रीमानेव सोऽस-
न्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥८॥
अथ सोममब्रवीत्त्वमनुवृणीश्वेति ॥९॥ सोऽब्रवीद्वल्गु[15] साम्नो वृणे
प्रियमिति। स य एतद्गायात्प्रिय एव स कीर्तेः प्रियश्चक्षुषः प्रिय-
स्सर्वेषामसन् मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुप-
वदादिति ॥१०॥ अथ बृहस्पतिमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति[17][18] ॥११॥
सोऽब्रवीत्क्रौञ्चं साम्नो वृणे ब्रह्मवर्चसमिति। स य एतद्गायाद्ब्रह्म-
वर्चस्येव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुप-
वदादिति ॥१२॥ १।५१॥

षोडशोऽनुवाकः द्वितीयः खण्डः।

अथ विश्वान्देवानब्रवीद्यूयमनुवृणीध्वमिति ॥१॥ तेऽब्रुवन्वैश्व-
देवं साम्नो वृणीमहे प्रजननमिति। स य एतद्गायात्प्रजावानेव सोऽस-
दस्मानु[1] देवानामृच्छाद्य[2] एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥२॥
अथ पशूनब्रवीद्यूयमनुवृणीध्वमिति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वायुर्वा अस्माक-
मीशे। स एव नो वरिष्यत[3] इति। ते वायुश्च पशवश्चाब्रुवन्निरुक्तं[4] साम्नो

१३ वल्गु। १४ प्रियम। १५ नास्ति, स य······सोऽब्रवीद् ६ में।
१६ गायत्रंच। १७ नास्ति। १८ नुवृ—।

१ 'म' अधिक है। २ नीचे से 'च स वायुं' अधिक लेता है।
३ वरिष्ठ। ४ अनिर—।

वृणीमहे पशव्यमिति। स य एतद्गायात्पशुमानेव सोऽसदस्मानु च
स वायुं[5] च देवाना[6]मृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥४॥
अथ प्रजापतिरब्रवीदहमनुवरिष्य इति[7] ॥५॥ सोऽब्रवीदानिरुक्तं
साम्नो वृणे स्व[8]र्ग्यमिति । स य एतद्गायात्स्वर्गलोक एव सोऽसन्प्रा[9]मु
स देवाना[6]मृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥६॥
अथ वरुणमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्रवीद्यद्वो न कश्चना-
ऽवृत तदहम्परिहारि[10]ष्य इति। किमिति। अ[11]पध्वान्तं साम्नो वृणेऽपश-
व्यमिति । स य एतद्गायादप[12]शुरेव सोऽसन्प्रामु स देवानामृच्छा[13]द्य
एतद्गायन्तदिति ॥८॥ तानि वा एतान्यष्टौ गीतागीतानि साम्नः ।
इमान्यु ह वै सप्तगीतानि । अ[14]थेयमेव वारुण्यागाऽगीता ॥९॥ स
यो ह वा[15] चैवं विद्वानेतासां सप्तानामागानां गायति गीतमेवास्य
भवत्येतान्[16] कामान्वा[17]प्नोति य एतासु कामाः । अथेमामेव वारुणी-
मागां न गायेत् ॥१०॥ १।५२॥

षोडशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षोडशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

———:०:———

५—वृण्यु । ६ 'इति' तक शेष नहीं लिखा । ७ ति । ८ स्वर्गम् । ९ समुत् । १०—हृण्य्—क—, यत । ११ अपध्वमातम्, अपध्मातम् । १२ पशू— । १३ अकरांदु । १४—प, रथ । १५—वा । १६ कामा । १७ नी.त्क्ष—, निर्वाप्तेति ॥

द्वयं वावेदमग्र आसीत्सच्चैवासच्च ॥१॥ तयोर्यत् सच्च तत्साम तन्मनस्स प्राणः[1]। अथ यदसत्सर्क् सा वाक् सोऽपानः ॥२॥ तद्यन्मनश्च प्राणश्च तत्समानम्। अथ या वाक् चापानश्च तत्समानम्। इदमायतनम्मनश्च प्राणश्चेदमायतनं[2] वाक् चापानश्च। तस्मात्पुमान्दक्षिणतो योषामुपशेते[3] ॥३॥ सेयमृगस्मिन् सामन्[4] मिथुनमैच्छत। तामपृच्छत् का त्वमसीति। साहमस्मीत्यब्रवीत्। अथ वा अहममोऽस्मीति ॥४॥ तद्यत्सा चाऽमश्चतत्सामाऽभवत् तत्साम्नस्सामत्वम् ॥५॥ तौ वै सम्भवावेति। नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमस्यन्यत्र मिथुनमिच्छस्वेति ॥६॥ साऽब्रवीन्न वै तं विन्दामि येन सम्भवेयम्[5]। त्वयैव सम्भवानीति। सा वै पुनीष्वेत्यब्रवीत्। अपूता वा असीति[6] ॥७॥ साऽपुनीत यदिदं विप्रा[7] वदन्ति तेन। साऽब्रवीत्क्वेदम्[8] भविष्यतीति। प्रत्यूहेत्यब्रवीत्[9]। धीवा एषा। प्रजानां जीवनं वा एतद्भविष्यतीति। तथेति। तत्प्रत्यौहत। तस्मादेषा धीरेव प्रजानां जीवनमेव ॥८॥ पुनीष्वेत्यब्रवीत्। साऽपुनीत गाथया साऽपुनीत कुम्भ्यया[10] साऽपुनीत नाराशँस्या साऽपुनीत पुराणेति-

---

१ न्यक-अस्त्यत्र्य भवितेऽसि, (अस्त्य) भवितेति। २-ना। ३ उपवशेते। ४-म। ५ सम्भवेत। यम। ६ 'आ' अधिक है। ७ आ, रिप्रा। ८ त्वे। ९ त्यव। १०-म्भ-, 'वा' अधिक है।

हासेम साऽपुनीत यदिद[11]मादाय नाऽऽ[12]गायन्ति तेन ॥९॥ साऽब्रवीत्केदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां जीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यौहत् । तस्मादेषा धीर्वेव प्रजानां जीवनम्वेव ॥१०॥ पुनीष्वैवेत्यब्रवीत् ॥११॥१५३॥

सप्तदशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा मधुना[1]ऽपुनीत । तस्मादुत ब्रह्मचारी मधु नाऽश्नीयाद्वेदस्य पलाव[2] इति । कामं ह त्वाचार्यदत्तमश्नीयात् ॥१॥ अथर्क् सामाब्रवीद्रहु वै किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स भरण्डके[3]ष्णोनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः पूतानि यजूंषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥२॥ ताभ्यां सदो मिथुनाय पर्य[4]श्रयन्[5] । तस्मादुपवसथीयां[6] रात्रिं सदसि न [7]शयीत । अत्र ह्येता[8]वृक्सामे उपवसथीयां रात्रिं सदसि सम्भवतः । स यथा श्रेय स उपद्रष्टैवं [9]हि शश्वदीश्वरोऽनुलब्ध[10]ः पराभवितोः ॥३॥ अथो आहुरुद्गातुर्मुखे सम्भवतः । उद्गातुरेव मुखं नेक्ष[11]-

11. इमम् । 12 मादायना, आदायना ॥

१. सारे पद का पुनर्बोल है । २ स 'कामम्' के स्थान में । मा सर्वत्र है । ३ ह्रण्डकेष्णोना; भरण्ड, भण्डकोष्णोना । ४—वन् । ५—श्रीयान्,—श्रीयान् । ६—ई । ७ शीत, येत । ८—वृ—। ९ अहू । १० शुश्रुवान्, अनुलुब्ध—।

तेति ॥४॥ तदु वा आहुः काममेवोद्गातुर्मुखमीक्षेत । उपवसथीयामे-
वैतां[11] रात्रिं सदसि न शयीत । अत्र ह्येवैतमृक्सामे उपवसथीयां[12]
रात्रिं सदसि सम्भवत इति ॥५॥ तां सम्भविष्यन्नाहा[13]ऽमोऽहम-
स्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽहम्[14] । सा मामनुव्रता भूत्वा प्रजाः प्रज-
नयावहै । एहि सम्भवावहा[15] इति ॥६॥ तां सम्भवन्नत्यरिच्यत[16]
सोऽब्रवीन्न वै त्वाऽनुभवामि । विराड् भूत्वा प्रजनयावेति ।
तथेति ॥७॥ तौ विराड्भूत्वा प्राजनयताम् । हिङ्कारश्चाऽऽहावश्च[17]
प्रस्तावश्च प्रथमा चोद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनं
च वषट्कारश्चैवं[18] विराड् भूत्वा प्राजनयताम्[19] । ते अमुमजनयतां
योऽसौ तपति । ते व्यद्रवताम्[20] ॥८॥ १।५४॥

सप्तदशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

मद[1]ध्यभू३न्मदध्यभू३दिति । तस्मादाहुर्मधुपुत्र इति ॥१॥
तस्माद्धतास्त्रियो मधु नाऽश्नन्ति पुत्राणामिदं व्रतं चराम इति वदन्तीः
॥२॥ तदयं तृचोऽनुदश्रयत । इयमेव[2] गायत्र्यन्तरिक्षं[3] त्रिष्टुबसौ
जगती । तस्यैतत्तृचः ॥३॥ स उपरिष्टात्सामाऽभ्याहितं तपति ।

---

११ न । १२-थी- । १३ 'रणा' अधिक है । १४-म्- । १५ संभवत ।
१६ आत्यरिच्यते । १७ हैं- । १८ च । पवम । १९ प्रज्-
२० व्यद्रप्ताम, भ्यद्रवताम, व्यद्रपताम (?)॥

१-मा । २ इदम । ३-र्ह्ण-

सोऽध्रुव इवासीदस्थेलायदिव । स नोर्ध्वो[4]ऽतपत् ॥४॥ स देवा-
नब्रवीदनु मा गायतेति । किं ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् ।
मामिह[5] हँहेतेति ॥५॥ तथेति । तमुद[6]गायन् । तमेतदत्राऽहँहन्[7] ।
तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा देवानां श्रीः ॥६॥ तत एतदूर्ध्वस्तपति ।
स नार्वाङ्[8]तपत् ॥७॥ स ऋषीनब्रवीदनु मा गायतेति । किं
ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह[5]हँहेतेति ॥८॥ तथेति ।
तमन्वगायन् । तमेतदत्राहँहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा ऋषीणां
श्रीः ॥९॥ तत एतदर्वाङ् तपति । स न तिर्यङ्[9] अतपत् ॥१०॥
स गन्धर्वाप्सरसोऽब्रवीदामा गायतेति । किं [10]ततस्स्यादिति ।
श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह[5]हँहेतेति ॥११॥ तथेति । तमागायन् ।
तमेतदत्राऽहँहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा गन्धर्वाप्सरसां
श्रीः ॥१२॥ तत एतत् तिर्यङ्[11] तपति ॥१३॥ तानि वा एतानि
श्रीणि साम्न उद्गीतमनुगीतमागीतम् । तद्यथेदं वयमागायो[12]द्गायाम
एतदुद्गीतम्[13] । अथ यद्यथागीतं तदनुगीतम् । अथ यत्किंचेति सा-
म्नस्तदागीतम् । एतानि ह्येव श्रीणि साम्नः ॥१४॥ १।५५॥

सप्तमोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । सप्तदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

-:o:

४ ध्रु-,ध्रु- । ५ हुंहेते । ६ उदगात् । ७ -हन् । ८ तप- । ९ तिर्य्यङ् ।
१० न । ११ तिर्यँङ् । १२ आगायो, आगेयो- । १३ -यम् ॥

आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् । स ऊर्मिरूर्मिमस्कन्दत्[1] । ततो हिरण्मयौ कुच्यौ[2] समभवतां ते[3] एवर्क्सामे[4] ।।१।। सेयमृगिदं सामाऽभ्यप्लवत[5] । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् । अथ वा अहममोऽस्मीति । तद्यत्सा चाऽमश्च तत्साम्नस्सामत्वम् ।।२।। तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमसि । अन्यत्र मिथुनमिच्छस्वेति ।।३।। सा पराप्लवत[6] मिथुनमिच्छमाना । सा सप्तास्सहस्रं सप्ततीः पर्यप्लवत ।।४।। तदेष श्लोकः—

स्त्री सैवाऽग्रे संचरतीच्छन्ती[7] सलिले पतिम्[8] ।
समास्सहस्रं सप्तती स्ततोऽजायत पश्यत, इति ।।५।।

असौ वा आदित्यः पश्यतः[9] । एष एव तदजायत[10] । एतेन हि पश्यति ।।६।। साऽविन्त्वा[11] न्यप्लवत । साऽब्रवीन्न[12] वै तं विन्दामि येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति ।।७।। सा वै द्वितीयामिच्छस्वेत्यब्रवीन्न वै मैकोऽयंस्यसीति[13] । सा द्वितीयां[14] विन्त्वा न्यप्लवत ।।८।। (तृतीयाम्) इच्छस्वेत्यब्रवीन्नो[14] वात्र[15] मा[16] द्वे[17] उद्यंस्यथ इति । सा तृतीयां[13] विन्त्वा न्यप्लवत । सोऽब्रवीदत्र[17] वै मोऽयंस्यथेति[18]

१—त् । २ कुद्यौ । ३ येप । ४ र्कसा— । ५ ह्यप्लु— । ६ पपरा— । ७ सप्ती । ८—ति । ९ पश्यः । १० तम् । ११ पित्वा । १२ नास्ति सा.........न्यप्लवत । १३—यम् । १४ वै । १५ वा । १६ स्थान छोड़ा हुआ है, च्वे । १७ मध्र— १८—स्यसी ।

॥६॥ स यदेकयाऽग्रे समवदत[19] तस्मादेकर्चे साम। अथ यद्वे अपा-सेधत्तस्माद्वयोर्न कुर्वन्ति। अथ यत् तिसृभिस्[20]समपादयत्[21] तस्मादु तृचेसाम॥१०॥ ता अब्रवीत्पुनीध्वं न पूता वै स्थेति॥११॥ १।५६॥

अष्टादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः।

स[1] गायत्री गाथयाऽपुनीत नाराशँस्यात्रिष्टुब्रैभ्या जगती। भीमन्वत[2] मलमपावधिषतेति। तस्माद्भीमलाधियो वा एताः। धियो वा इमा मलमपावधिषतेति[3]। तस्मादु भीमलाः[4]। तस्मादु गायतां नाऽश्नीयात्[5]। मलेन ह्येते जीवन्ति॥१॥ अथर्क्[6] सामाऽब्रवीद्वद्दु वै किं च किं च पुमाँश्चरति। त्वमनुपुनीष्वेति। स ऊर्ध्वगणेना-ऽपुनीत॥२॥ पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता[7] ऋचः पूतानि यजूँषि पूतमनूक्त[8]म्पूतं[9] सर्वम्भवति य एवं वेद॥३॥ ताभ्यां दिशो मिथुनाय पर्यौहन्। तां सम्भाविष्य[10]न्नह्वयता[11]ऽमोऽहमस्मि सा त्वं[12] सा त्वमस्यमोऽहमिति॥४॥ तामेतदुभयतो[13] वाचाऽत्यरिच्यत[14] हिङ्कारेण पुरस्तात्स्तोभेन मध्यतो निधनेनोपरिष्टात्। अतितिस्रो ब्राह्मणायनीस्सदृशी रिच्यते य एवं वेद॥५॥ तयोर्यस्सम्भवतो-

---

१९—पदू—। २० तिस्र—। २१ सम्पू—॥

१—स्येत्। २ व। ३—थे। ४—ला। ५ ऽश्री—। ६ र्के। ७—तानी। ८—ता। ९ नूक्—। १०—ष्यन्य्। ११ प्रवचयत, प्रह्वयन्त। १२ साम १३—मे। १४ त्यरूच्यते।

रूर्ध्वस्शूषोऽद्रवत् (प्राणास्) ते । ते प्राणा एवोर्ध्वा अद्रवन् ॥६॥
सोऽसावादित्यस्स एष एव उदग्निरेव गी चन्द्रमा एव थम् ।
सामान्येव उद्दच एव गी यजूँष्येव थमित्यधिदेवतम् ॥७॥ अथा-
ऽध्यात्मम् । प्राण एव उद्वागेव गी मन एव थम् । स एषोऽधिदेवतं
चाऽध्यात्मं चोद्गीथः ॥८॥ स य एवमेतदधिदेवतं चाऽध्यात्मं
चोद्गीथं वेदैतेन हास्य सर्वेणोद्गीतम्भवत्येतस्मादु एव सर्वस्मादा-
त्मच्यते य एवं विद्वाँसमुपवदति ॥९॥ १।५७॥

अष्टादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यदिदमाहुः क उदगासीरिति क एतमादित्यमगासीरिति
ह वा एतत्पृच्छन्ति ॥१॥ एतं ह वा एतं त्रय्या विद्यया गायन्ति।
यथा वीणागाथिनो गापयेयुरेवम् ॥२॥ स एष ह्रदः कामानाम्पूर्णो
यन्मनः । तस्यैषा कुल्या यद्वाक् ॥३॥ तद्यथा वा अपो ह्रदात्कु-
ल्ययोऽपरामुपनयन्त्येवमेवैतन्मनसोऽधि वाचोद्गाता यजमानम्
यस्य कामान् प्रयच्छति ॥४॥ स य उद्गातारं दक्षिणाभिराराधयति

---

१५ चु-। १६ द्र-। १७ ऽद्रा-। १८ गाथ्-। १९-गीथ्-।
२० भवत्येति, भवन्ति ॥

१-सी । २ प्रच्छँन्त्य् । ३ तृय्या । ४-गायिनो, गायय्-। ५ ह्रदू-।
६ कूल्-। ७ यत् । ८ वात् । ९-ग्र । १० अदो । ११-यँन्य,-यन्ते,
-यन्त्य् । १२-ना । १३ दक्षिणाभि । १४ राध्-।

वं सा कुल्यो[१४]ऽपधावति । य उ एनं नाऽऽराधयति स उ तामपि-हन्ति ॥५॥ अथ वा अतः[१५] प्रत्तिश्चैव[१६] प्रतिग्रहश्च । तद्भूमामिति[१७] वै प्रदीयते । तद्वाचा यजमानाय प्रदेयम्मनसाऽऽत्मने[१८] । तथा ह सर्वं न प्रयच्छति ॥६॥ तद्यदिदं सम्भवतो रेतोऽसिच्यत[१९] तदशयत्[२०] । यथा हिरण्यमविकृतं[२१] लेलायदेवम् ॥७॥ तस्य सर्वे देवा ममात्विन आसन्मम ममेति । तेऽब्रुवन्वीदं करवामहा इति । तेऽब्रुवञ्छ्रेयो[२२] वा इदमस्मत् । आत्मभिरेवैनाद्विकरवामहा इति ॥८॥ तदात्मभिरेव व्यकुर्वत । तेषां वायुरेव हिङ्कार आसाऽग्निः प्रस्ताव इन्द्र आदि-स्सोमबृहस्पती[२३] उद्गीथोऽश्विनौ प्रतिहारो विश्वे देवा उपद्रवः प्रजापतिरेव निधनम् ॥९॥ एता वै सर्वा देवता एता हिरण्यम्[२४] । अस्य सर्वाभिर्देवताभिस्स्तुतम्भवति य एवं वेद । एताभ्य उ एव स सर्वाभ्यो देवताभ्य आवृश्च्यते य एवं विद्वांसमुपवदति ॥१०॥ १।५८॥

अष्टादशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तश्चैकितानेयः कुरू[१]ञ्जगामाऽभिप्रतारिणं[२] काक्ष-सेनिम् । स हाऽस्मै मधुपर्कं ययाच ॥१॥ अथ हास्य वै[३] प्रपद्य पुरो-

---

१५ अधः । १६ प्रतिश् । १७ धुं– । १८ आत्– । १९ सिच्य्– । २० वृश्– । २१ अपि–,अपिवृतं । २२ या । २३ सोमाबृ–इ । २४ हिरण्य् ॥

१ कु–, आरैन् । २ एक में यहां हि समाप्ति है । ३–य ।

हितोऽन्ते निषसाद शौनकः। तं हाऽनामन्त्र्य[४] मधुपर्कम्पपौ ॥२॥ तं होवाच किं विद्वान्सो दाल्भ्याऽनामन्त्र्य मधुपर्कम्पिबसीति। सामवैर्यम्प्रपद्येति[५] होवाच ॥३॥ तं ह तत्रैव[६] पप्रच्छ यद्वा यौ तद्वेत्था३इति। हिङ्कारो वा अस्य स इति ॥४॥ यदग्नौ तद्वेत्था३-इति। प्रस्तावो वा अस्य स इति ॥५॥ यदिन्द्रे तद्वेत्था३इति। आदिर्वा अस्य स इति ॥६॥ यत्सोमबृहस्पत्योस्तद्वेत्था[७]३इति। उद्-गीथो वा अस्य स इति ॥७॥ यदश्विनोस्तद्वेत्था३इति। प्रतिहारो वा अस्य स इति ॥८॥ यद्विश्वेषु देवेषु[८] तद्वेत्था[९]३इति। उपद्रवो वा अस्य स इति ॥९॥ यत्प्रजापतौ तद्वेत्था३इति। निधनं वा अस्य तदिति होवाच। आर्षेयं वा अस्य तद्बन्धुता वा अस्य[१०] सेति ॥१०॥ स होवाच नमस्तेऽस्तु भगवो विद्वानपा मधुपर्कमिति ॥११॥ अथ हेतरः पप्रच्छ किं देवसं[११] सामवैर्यम्प्रपद्येति[१२]। यद्देवसा-सु स्तुवत इति होवाच तद्देवसमिति ॥१२॥ तदेतत् साध्वेव प्रत्युक्तम्[१३]। व्याप्तिर्वा अस्यैषेति होवाच ब्रूह्येवेति। मेदं ते नमो-ऽकर्मेति होवाच। मैव नोऽतिप्राप्तीरिति ॥१३॥ स होवाचाप्रच्छ्यं

४-मन्त्रः। ५ सामवैर्य्या, 'र' रहित। ६ तत। ७ सोमाबृ-। ८ 'द्-' का पुनर्लेख। ९ नास्ति। १० अस्य। ११-वस्या। १२ साम्वैय्या। १३-उत्तम।

वाव त्वा देवताममरूयं वाव त्वा देवतायै देवताः । वाग्देवत्यं साम वाचो मनो देवता मनसः पशवः पशूनामोषधय ओषधीनामापः । तदेतदद्भ्यो[14] जातं सामाऽप्सु प्रतिष्ठितमिति ॥१४॥ १।५८॥

अष्टादशेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवा मनसोद्गायन्[1] । तदेषामसुरा अभिद्रुत्य[2] पाप्मना समसृजन्[3] । तस्माद्धहु किं च किं च मनसा ध्यायति । पुण्यं चैनेन ध्यायति पापं च ॥१॥ ते वाचोद्गायन्। तां तथैवा[4]ऽकुर्वन्[5] । तस्माद्धहु किं च किं च वाचा वदति । सत्यं[6] चैनया[7] वदत्यनृतं च ॥२॥ ते चक्षुषोद्गायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन् तस्माद्धहु किं च किं च चक्षुषा पश्यति । दर्शनीयं चैनेन पश्यत्य दर्शनीयं च ॥३॥ ते श्रोत्रेणोद्गायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्धहु किं च[8] किं च[8] श्रोत्रेण शृणोति । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं च ॥४॥ तेऽपानेनोद्गायन् । तं तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्धहु किं च किं चाऽपानेन जिघ्रति । सुरभि चैनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥५॥ ते प्राणेनोद्गायन्[9] । अथासुरा आद्रवँस्तथा करिष्याम इति मन्यमानाः ॥६॥ स यथाऽश्मानमृत्वा लोष्टो विध्वँसेतैवमेवाऽसुरा

---

१४ भ्यो ।

१ ऽगाय्- । २-द्रुत्य अथवा-द्रुत्य । ३-सृज्- । ४ वा । ५ कुर्- । ६-त्य । ७ वै । ८ नास्ति । ९-गात् ।

व्यध्वँसन्त[10] । स एषोऽश्माऽऽखणं[11] यत्प्राणः ॥७॥ स यथाऽश्मान-
[12]माखणमृत्वा लोष्टो विध्वँसत एवमेव स विध्वँसते य एवं विद्वाँ-
समुपवदति ॥८॥ १।६०॥

अष्टादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

[इति प्रथमोऽध्यायः ।]

---

१० सते, पन्ता । ११–णाँ । १२ आखणम् ।

[अथ द्वितीयोऽध्यायः ।]

देवानां वै षडुद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च श्रोत्रं चाऽपानश्च प्राणश्च ॥१॥ तेऽध्रियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येनाऽपहत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन् वाचोद्गात्रा दीक्षामहा इति । ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव वाचा वदति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥३॥ [1] ताम्पाप्माऽन्वसृज्यन । [2] स यदेव वाचा पापं वदति स एव स पाप्मा ॥४॥ तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम् [3] मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत् । मनसोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥५॥ ते मनसोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव मनसा ध्यायति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥६॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स पाप्मा ॥७॥ तेऽब्रुवन् [4] नो [5] न्वाव नोऽयम् [3] मृत्युं न पाप्मानम[6]त्यवाक्षीत् । चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥८॥ ते चक्षुषोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव चक्षुषा पश्यति तदात्[7]मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥९॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापम्पश्यति (स एव स पाप्मा) ॥१०॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव

१–म । २ 'य' अधिक है । ३–त्यु । ४ अब्रवीन् । ५ न्व । ६ अवत्यव्– । ७–मान्– ।

नोऽयम्मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥११॥ ते श्रोत्रेणोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव श्रोत्रेण शृणोति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१२॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१३॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽयम् मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत् । अपानेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१४॥ तेऽपानेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेवाऽपानेनाऽपानिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१५॥ तम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेवाऽपानेन पापं गन्धमपानिति स एव स पाप्मा ॥१६॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽयम्मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत् । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१७॥ ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव प्राणेन प्राणिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१८॥ तम्पाप्मा नाऽन्वसृज्यत । न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं शृणोति न पापं गन्धमपानिति ॥१९॥ तेनाऽपहत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् । अपहत्य हैव मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥२०॥ २।१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

८ अपानिति ।

सा या सा वागासीत्सोऽग्निरभवत् ॥१॥ अथ यत्तन्मन आसीत् स चन्द्रमा अभवत् ॥२॥ अथ यत्तच्चक्षुरासीत् स आदित्योऽभवत् ॥३॥ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् । ता उ एव विश्वेदेवाः ॥४॥ अथ यस्सोऽपान आसीत्स बृहस्पतिरभवत् । यदस्यै वाचो बृहते पतिस्तस्माद्बृहस्पतिः ॥५॥ अथ यस्स प्राण आसीत्स प्रजापतिरभवत् । स एष पुत्री प्रजावाननुद्धि[1]यो यः प्राणः । तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्भवति य एवं वेद ॥६॥ तं हैतमेके प्रसत्वमेव गायन्ति प्राणा३प्राणा३प्राणा३ हुम्भा ओवा इति ॥७॥ तदु होवाच शाट्यायनिस्तत एतमर्हति प्रसत्तं गातुम् । यद्वाव वाचा करोति तदेतद्देवाऽस्य कृतम्भवतीति ॥८॥ अथ वा अत[2] अस्साम्नोरेव प्रजातिः । स यद्धिङ्करोत्यभ्येव तेन क्रन्दति[3] । अथ यत्प्रस्तौ[4]त्येव तेन ह्वते । अथ यदादिमादत्ते रेत एव तेन सिञ्चति । अथ यदुद्गायति रेत एव तेन सिक्तं सम्भावयति[5] । अथ यत्प्रति-हरति रेत एव तेन सम्भूतम्प्रवर्धयति । अथ यदुपद्रवति रेत एव तेन प्रवृद्धं विकरोति । अथ यन्निधनमुपैति रेत एव तेन विकृतम्प्रज-

---

१ यत् । २ प्रतम, प्रथ । ३ क्रुर्वति । ४ प । ५-भव-. नास्ति श्वि । प्रथ यत्प्रतिहरति ।

नयति । सैषश्साम्नोः प्रजातिः ॥९॥ स य एवमेतामृक्साम्नोः प्रजातिं वेद प्र हैनमृक्सामनी जनयतः ॥१०॥ २।२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

---:०:---

प्रजापतिरेवेदमग्र आसीत्[1] एष तपति । स एष सर्वेषाम्भूतानां[2] तेजो हर इन्द्रियं वीर्यमादायोर्ध्व उदक्रामत ॥१॥ सोऽकामयत-कमेनाऽन्नं स्वादु मृदु[3] देवानां वनामीति[4][5] ॥२॥ स तपोऽतप्यत । स तपस्तप्त्वैकमेवाऽन्नमभवत्[6][7] ॥३॥ तं देवाश्चर्षयश्चोपसमैप्सन् । अथैषोऽसुरान्भूतहनोऽसृजतैतस्य पाप्मनोऽनन्वागमाय ॥४॥ तं वाचोपसमैप्सन् । ते वाचं समारोहन् । तेषां वाचम्पर्यादत्त । तस्मात्पर्यादत्ता वाक् । सत्यं च ह्येनया वदत्यनृतं च ॥५॥ तम्मनसोपसमैप्सन् । ते मनस्समारोहन् । तेषाम्मनः पर्यादत्त । तस्मात्पर्यादत्तम्मन[ः]म् । पुण्यं च ह्येनेन ध्यायति पापं च ॥६॥ तं चक्षुषोपसमैप्सन् । ते चक्षुस्समारोहन् । तेषां चक्षुः पर्य्यादत्त । तस्मात्पर्यात्तं[8] चक्षुः । दर्शनीयं च ह्येनेन पश्यत्यदर्शनीयं च ॥७॥

---

६ स.म्नः, क्साम्नः ।

१ स । २-षा । ३ मदु । ४ नास्ति । ५ पति । ६ मेवा । ७ 'उदेवानाम' पूर्व से पुनः है । ८ पर्य्यत्तं ।

तं श्रोत्रेणोपसमैप्सन् । ते श्रोत्रं समारोहन् । तेषां श्रोत्रम्पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यात्तं[1] श्रोत्रम् । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं च ॥८॥
तमपानेनोपसमैप्सन् । तेऽपानं समारोहन् । तेषामपानम्पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यात्तोऽपानः । सुरभि च ह्येनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥९॥
तम्प्राणेनोपसमैप्सन् । तन्प्राणेनोपसमाप्नुवन् ॥१०॥ अथाऽसुरा
भूतहन आद्रवन्मोहयिष्याम इति मन्यमानाः ॥११॥ स यथा-
ऽश्मानं ऋत्वा लोष्टो विध्वंसेतैवमेवाऽसुरा व्यध्वंसन्त । स एषोऽश्मा-
ऽखणो यत्प्राणः ॥१२॥ स यथाऽश्मानमाखणमृत्वा लोष्टो
विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्वांसमुपवदति॥१३॥ ८।३॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स एष वशी दीप्ताग्र उद्गीथो यत्प्राणः[1] । एष हीदं सर्वं वशेकुरुते
॥१॥ वशी भवति वशे[2] स्वान्कुरुते य एवं वेद । अस्य ह्यसावग्रे
दीप्यते[3] अमुष्य[4] वासः ॥२॥ तं हैतमुद्गीथं शाट्यायनिराचष्टे वशी
दीप्ताग्र इति । दीप्ताग्रा ह वा अस्य कीर्तिर्भवति य एवं वेद ॥३॥
आभूतिरिति कारीरादयः प्राणं वा अनुमजाः पशव आभवन्ति ।
स य एवमेतमाभूतिमित्युपास्त एवं प्राणेन प्रजया पशुभिर्भवति॥४॥

१ पर्यात्त, पर्य्याप्त ।

१ एषा ह्येदं सर्वं वशीकुरुते ऐसा पाठ देते हैं । २–शो ।
३ ऽमुष्य– । ४ मतः ।

सम्भूतिरिति[5] सात्ययज्ञयः। प्राणं वा अनु प्रजाः पशवस्सम्भवन्ति।
स य एवमेतं सम्भूतिरित्युपास्ते सम्भ [व] प्राणेन प्रजया पशुभि-
र्भवति ॥५॥ प्रभूतिरिति शैलनः[6]। प्राणं वा अनु प्रजाः पशवः
प्रभवन्ति। स य एवमेतं प्रभूतिरित्युपास्ते प्रैव प्राणेन[7] प्रजया
पशुभिर्भवति ॥६॥ भूतिरिति प्राचीनयोग्यः। प्राणं वा अनु प्रजाः
पशवो भवन्ति। स य एवमेतं भूतिरित्युपास्ते भवत्येव प्राणेन
प्रजया पशुभिः ॥७॥ आरोधो[9]ऽनपरुद्ध इति पार्ष्णिश्शैलनः।
एष ह्यनपरुणद्धि[10] नैतमन्यः[11]। एष ह वाऽस्य द्विषन्तम्[12] भ्रातृव्यम-
परुणद्धि य एवं वेद ॥८॥ ॥२॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

एकवीर[1] इत्यारुणे[2]यः[3]। एको ह्येष वीरो यत्प्राणः। आ हा-
ऽस्यैको वीरो वीर्यवानायते य एवं वेद ॥१॥ एकपुत्र इति चैकितानेयः।
एको ह्येष पुत्रो यत्प्राणः ॥२॥ स उ एव द्विपुत्र इति। द्वौ हि
प्राणापानौ ॥३॥ स उ एव त्रिपुत्र[5] इति। त्रयो हि प्राणोऽपानो
व्यानः ॥४॥ स उ एव चतुष्पुत्र इति। चत्वारो हि प्राणोऽपानो

५-भूर्। ६ शालि-। ७ 'प्रजया' अधिक है। ८ भूर्। ९ अवरोद्धा।
१०-णाद्धि। ११ से। १२-त। १३-र्ब.नू-।

१-ह। २ स्यू। ३-णय, 'एकं' के स्थान में सर्वत्र 'एका'। ४-र।
५ द्वि-।

ऽव्यानस्समानः ॥५॥ स उ एव पञ्चपुत्र इति। पञ्च हि प्राणो[6]ऽपानो व्यानस्समानोऽवानः ॥६॥ स उ एव षट्पुत्र इति। षड्ढि[7] प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवान उदानः ॥७॥ स उ एव सप्तपुत्र इति सप्त हीमे शीर्षण्याः प्राणाः ॥८॥ स उ एव नवपुत्र इति सप्त हि शीर्षण्याः[8] प्राणा द्वाववाञ्चौ ॥९॥ स उ एव दशपुत्र इति। सप्तशीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दशमः ॥१०॥ स उ एव बहुपुत्र[9] इति। एतस्य[10] हीयं सर्वाः प्रजाः ॥११॥ एतं ह स्म वैतदुद्गीथं विद्वांसः पूर्वे ब्राह्मणाः कामागायिन[11] आहुः कति ते पुत्रानागास्याम इति ॥१२॥२५॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः।

स यदि[1] ब्रूयादेकम्म आगायेति प्राण उद्गीथ इति विद्वानेकम्मनसा ध्यायेत्। एको हि प्राणः। एकोहाऽस्याऽऽजायते ॥१॥ स यदि ब्रूयाद्वौ म आगायेति प्राणउद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत्। द्वौ[2] हि प्राणापानौ[3] द्वौ[2] हेवाऽस्याऽऽजायेते[4]॥२॥ स यदि ब्रूयात्त्रीन्म[5] आगायेति प्राणउद्गीथ इत्येव विद्वांस्त्रीन्मनसा ध्यायेत्। त्रयो हि प्राणो

६–णा। ७ षडि। ८–ण्यां। ९ बहुपुत्र। १० यस्य, दशम।
११–गेन॥

१ येक्‌न्‌ २ द्वयो। ३ 'व्यानः' अधिक है। ४ 'स हैवाऽस्याऽऽजायन्ते' अधिक है। ५ मन।

ऽपानो व्यानः। अथो[5] हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥३॥ स यदि ब्रूयाच्चतुरो म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वाँश्चतुरो मनसा ध्यायेत्। चत्वारो हि प्राणो[6]ऽपानो व्यानस्समानः। चत्वारो हैवास्याऽऽजायन्ते ॥४॥ स यदि ब्रूयात्पञ्च म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्पञ्च मनसा ध्यायेत्। पञ्च हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवानः। पञ्च हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥५॥ स यदि ब्रूयात् षण्म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान् षण्मनसा ध्यायेत्। षड्[7] प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवान उदानः। षड्[8]ढैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥६॥ स यदि ब्रूयात्सप्त म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान् सप्त मनसा ध्यायेत्। सप्त हीमे शीर्षण्याः प्राणाः। सप्त हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥७॥ स यदि ब्रूयान्नव म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्नव मनसा ध्यायेत्। सप्त शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ। नव हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥८॥ स यदि ब्रूयाद्दश म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्दश[9] मनसा ध्यायेत्। सप्त शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दशमः। दश हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥९॥ स यदि ब्रूयात्सहस्रम्म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान् सहस्रम्मनसा ध्यायेत। सहस्रं हैत आदित्यरश्मयः। ते[10]ऽस्य पुत्रः। सहस्रं हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥१०॥ एवं ह[11]वैतमुद्गीथ-

---

६ नास्ति। स यदि......व्यानश्च। ७ भि। ८ हे। ९ श। १० स। ११ ह।

न्तर आद्णारः कक्षीवाँस्त्रसदस्युरिति पूर्वे महाराजा[12] श्रियास्सह-स्रपुत्रमुपनिषेदुः। ते ह सर्व एव सहस्रपुत्रा आसुः ॥१.१॥ स य[13] एवं वेद सहस्रं हैवाऽस्य पुत्रा भवन्ति ॥१.२॥ २।६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः। द्वितीयेऽनुवाकः समाप्तः।

शर्यातो[1] वै मानवः प्राच्यां स्थल्यामयजत[2]। तस्मिन् ह भृगा-[3]न्युद्गीथेऽपित्वमापेरे[4][5] ॥१॥ तं देवा बृहस्पतिनोद्गात्रा दीक्षामहा इति पुरस्तादागच्छन्नयं त उद्गायत्विति। यम्वेनाऽऽजद्विषेण[6] पितरो दक्षिणतो[7]ऽयं त उद्गायत्वित्युशनसा काव्येना[8]ऽसुराः[9] पश्चादयं[10] त उद्गायत्विति अयास्येनाऽऽङ्गिरसेन[11] मनुष्या उत्तरतो-ऽयं त उद्गायत्विति ॥२॥ स हैतांश्चके[12] ह्नोतान् पृच्छानि कियतो[13] वा एक ईशे कियत एकः कियत एक इति ॥३॥ स होवाच बृहस्पतिं[13] यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति[14] ॥४॥ स होवाच[15] देवे-ष्वेव श्रीस्स्यादेवेष्वीशा स्वर्गमुत्वां लोकं गमयेयमिति ॥५॥ अथ होवाच इत्थमाजद्विषं यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥६॥ स

१२ ऊँत्र। १३ यद्।

१ धोत्रा- २ स्थालयाम्। ३ भजेरान। ४ ऽसिसमम्। ५ पेजिरे। ६ त्रिकर-। ७ दक्षिणतो। ८ काहेना। ९ न्नां १० इचातः। ११ य गांसहरेन, य गंहिम्येना १२ किय। १३ नि:। १४ अयम्'अधिक है। १५ गास्ति, स होवाच ....;.........ततस्स्यादि.त।

होवाच पितृष्वेव श्रीस्स्यात्पितृष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं गमयेयामिति ॥७॥ अथ होवाचोशनसं काव्यं[16] यन्मे[17] त्वमुदगायेः किं ततस्स्यादिति ॥८॥ स होवाचाऽसुरेष्वेव श्रीस्स्यादसुरेष्वीशा स्वर्गमु[18] त्वां लोकं गमयेयमिति ॥९॥ अथ होवाचाऽयास्यमाङ्गिरसं यन्मे त्वमुद्गायेः[19] किं ततस्स्यादिति ॥१०॥ स होवाच देवानेव देवलोके दध्याम्[20]मनुष्या-न्मनुष्यलोके पितॄन्[21] पितृलोके नुदेयाऽस्माल्लोकादसुरान्[22] स्वर्गमु त्वां लोकं गमयेयामिति ॥११॥२।७॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच त्वं मे भगव उद्गाय य एतस्य सर्वस्य यशो[1][ऽसी]ति ॥१॥ तस्य हाऽयास्य एवोज्जगौ । तस्मादुद्गाता हत उत्तरतो निवेशनं लिप्सेत । एतद्ध नाऽऽरुद्ध निवेशनं यदुत्तरतः ॥२॥ उत्तरत आगतो यास्य आङ्गिरसश्शर्यातस्य[4] मानवस्योज्जगौ । स प्राणेन देवान्देवलोके ऽदधादपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन पितॄन्[2] पितृलोके हिङ्कारेण वज्रेणाऽस्माल्लोकादसुराननुदत ॥३॥ तान् होवाच दूरं गच्छतेति । स दूरो ह नाम लोकः। तं ह जग्मुः। त एतेऽसुरा असम्भाव्यम्[3]पराभूताः ॥४॥ छन्दोभिरेव वाचा

---

१६ य । १७ जे । १८–थाः । १९ र्थ्य । २०–ध्यात् । २१–तॄन् ।
२२ 'ड' अधिक है । २३ है ॥

१–शस । २–तृन् । ३ असंहोयन–

अथ[४] तिम्मानवं स्वर्गं लोकं गमयांचकार ॥५॥ ते होचुरसुरा एत तं वेदाम यो नोऽयामित्थमधत्तेति । तत[५] आगच्छन्[६] । तमेषाऽपश्यन् ॥६॥ तेऽब्रुवन्नयं वा आस्य इति । यदब्रुवन्नयं वा आस्य इति तस्मादयमास्यः । अयमास्यो[७] ह वै नामैषः । तमयास्य इति परोक्षमाचक्षते ॥७॥ स प्राणो वा अयास्यः । प्राणो ह वा एनान् स नुनुदे ॥८॥ स य एवं विद्वानुद्गायति प्राणेनैव देवान्देवलोके दधात्यपानेन[८] मनुष्यान्मनुष्यलोके[१०] व्यानेन पितॄन्[२] पितृलोके हिङ्कारेणैव[९] वज्रेणाऽस्माल्लोकाद्द्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते ॥९॥२।८॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्ड ।

तं ह ब्रूयाद्दूरं गच्छेति । स यमेव लोकमसुरा अगच्छंस्तं हैव[१] गच्छति ॥१॥ छन्दोभिरेव वाचा यजमानं स्वर्गं लोकं गमयति ॥२॥ ता एता व्याहृतयः[२] । प्रेसोति वाग्[इति]भूर्भुवस्स्वारित्य[उदिति]॥३॥ तद्यत्प्रेति[३] तत्प्राणस्तदयं लोकस्तदिमं लोकमस्मिँलोक आभजति ॥४॥ एत्यपानस्तदसौ लोकस्तदमुं लोकममुष्मिँलोक आभजति ॥५॥ वागिति तद्ब्रह्म तादिदमन्तारिक्षम् ॥६॥ भूर्भुवस्स्वरिति सा त्रयीविद्या ॥७॥ उदिति सोऽसावादित्यः । तद्यदुदित्युदिव श्लेष-

---

४ शॅय्या- । ५ त । ६-क्स् । ७-प्रसो । ८ पान्- । ९ पहिङ्- । १०-धान् ॥

१-भा । २ स्या- । ३ सत् ।

यति[४] ॥८॥ तद्यदेकमेवाऽभिसम्पद्यते तस्मादेकवीरः । एको ह तु
सन्वीरो वीर्यवान् भवति । आह्याऽस्यैको[५] वीरो वीर्यवान्[६] जायते
य एवं वेद ॥९॥ तदु होवाच शाट्यायनिर्बहुपुत्र एष उद्गीथ[७] इत्ये-
वोपासितव्यम् । बहवो ह्येत आदित्य[८] रश्मयस्ते[९]ऽस्य पुत्राः । तस्मा-
द्बहुपुत्र एष उद्गीथ इत्येवोपासितव्यमिति ॥१०॥२॥९॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवासुरास्समयतन्तेत्याहुः । न ह वै तद्देवासुरास्सम्येतिरे ।
प्रजापतिश्च ह वै तन्मृत्युश्च सम्येताते ॥१॥ तस्य ह प्रजापतेर्देवाः
प्रियाः[१] पुत्रा अन्त आसुः । तेऽध्रियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येना-
ऽपहत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्वा-
चोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥३॥ ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य[२]
इदं वागागायद्यदिदं वाचा वदति यदिदं वाचा भुञ्जते ॥४॥
ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स पाप्मा ॥५॥
तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम्मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत्[३] । मनसोद्गात्रा
दीक्षामहा इति ॥६॥ ते मनसोद्गात्रा दीक्षन्त । तेभ्य इदम्मन

---

४ इत्येष्—। ५—ए। ६—यावान्। ७—ए (इत्य)। ८ आदित्यस्य। ९ त ॥

१—याय। २ ' नोद्गात्रा दीक्षामहा इति ' अधिक है पर ' ते '
और ' भ्य ' के बीच लाल रङ्ग से काटा गया है। ३ अवत्य्—।

आगायद्यदिदम्मनसा ध्यायति यदिदम्मनसा भुङ्क्ते ॥७॥ तत्पा-
प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स
पाप्मा ॥८॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत् ।
चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥९॥ ते चक्षुषोद्गात्राऽदीक्षन्त ।
तेभ्य इदं चक्षुरागायद्यदिदं चक्षुषा पश्यति यदिदं चक्षुषा
भुङ्क्ते ॥१०॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापम्पश्यति
स एव स पाप्मा ॥११॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयम्मृत्युं न पाप्मा-
नमत्यवाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१२॥ ते श्रोत्रेणो-
द्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं श्रोत्रमागायद्यदिदं श्रोत्रेण शृणोति
यदिदं श्रोत्रेण भुङ्क्ते ॥१३॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१४॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव
नोऽयं मृत्युं[४] न पाप्मानमत्यवाक्षीत्[५] । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा
इति ॥१५॥ ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं प्राण आगाय-
द्यदिदं प्राणेन प्राणिति यदिदं प्राणेन भुङ्क्ते ॥१६॥ तम्पाप्मा-
ऽन्वसृज्यत । स यदेव प्राणेन[पापं]प्राणिति स एव स
पाप्मा ॥१७॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नो[६]ऽयं मृत्युं न पाप्मानमत्यवाक्षीत्।
अनेन मुख्येन प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१८॥ तेऽनेन

४—त्यु । ५ 'स' अधिक है । ६ मे ।

मुख्येन प्राणेनोद्गाताऽऽदीत्सन्त ॥१९॥ सोऽब्रवीन्मृत्युरेष एषां स उद्गाता येन मृत्युमत्येष्यन्तीति[७] ॥२०॥ न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं शृणोति न पापं गन्धमपानिति ॥२१॥ तेनाऽपहत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन्[८] । अपहत्य हैव मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥२२॥२।१०॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यथा हत्वा प्रमृध्याऽतीयादेवमेवैतम्मृत्युमत्यायन्[१] ॥१॥ स वाचम्प्रथमामत्यवहत् । ताम्परेण मृत्युं[२] न्यदधात् । सोऽग्निरभवत् ॥२॥ अथ मनोऽत्यवहत्[३] । तत्परेण मृत्युं[२] न्यदधात् । स चन्द्रमा अभवत् ॥३॥ अथ चक्षुरत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं[२] न्यदधात् । स आदित्योऽभवत् ॥४॥ अथ श्रोत्रमत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं[२] न्यदधात् । ता इमा दिशोऽभवन् । ता उ एव विश्वे देवाः ॥५॥ अथ प्राणमत्यवहत् । तम्परेण मृत्युं[२] न्यदधात् । स वायुरभवत् ॥६॥ अथाऽऽत्मने[४] केवलमेवाऽऽद्यमागायत् ॥७॥ स एष

७—षम । ८ गमयन् ।

१ स अधिक है, 'अत्यायन्' के स्थान में—यत् । २—यु । ३—ह । ४ हया ।

एवाऽयास्यः । आस्ये[5] धीयते[6] । तस्मद्यास्यः । यद्वेवा[7] [ऽयम्] आस्य[8] रमते तस्माद्वेवाऽयास्यः[9] ॥८॥ स एष एवाऽऽङ्गिरसः । अतो हीमान्यङ्गानि[10] रसं लभन्ते । तस्मादाङ्गिरसः । यद्वेवैषा-मङ्गानां रसस्तस्मा द्वेवाऽऽङ्गिरसः ॥९॥ तं देवा अब्रुवन् केवलं वा आत्मनेऽन्नाद्यमागासीः । अनु न एतास्मिन्ननाद्य आभज[11] । एतदस्याऽनामयत्व[12]मस्तीति[13] ॥१०॥ तं वै प्रविशतेति । स वा आकाशान्[14] कुरुष्वेति । स इमान् प्राणानाकाशान[15]कुरुत[16] ॥११॥ तं वागेव भूत्वाऽग्निः प्राविशन्[18]मनो भूत्वा चन्द्रमाश्चक्षुर्भूत्वा ऽऽदित्यश्श्रोत्रम्भूत्वा दिशः प्राणो भूत्वा वायुः ॥१२॥ एषा वै दैवी परिषद्दैवी सभा दैवी संसत् ॥१३॥ गच्छति ह वा एतां[17] दैवीम्परिषदं दैवीं सभां दैवीं[17] संसदं य एवं वेद ॥१४॥२॥११॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

यत्रो ह वैक चैता[1] देवता निस्पृशन्ति न हैव तत्र कश्चन पाप्मान्यङ्गः परिशिष्यते ॥१॥ स विद्यान्नेह कश्चन पाप्मान्यङ्गः परिशेक्ष्यते[2] सर्वमेवैता[3][4] देवताः पाप्मानं निधक्ष्यन्तीति । तथा हैव

---

५ आसे । ६ ध्यति । ७ एगं । ८ स्ये । ९–ंऽयास्यः । १० अङ्ग– । ११ अः । १२ आमयत्वम् । १३ असी । १४ आकाशात् । १५ आशासनम् । १६ कुरुत । १७ '–ं' नास्ति । १८ प्रेत्री–॥

१ चे । २ चते । ३ एवम् । ४ एता ।

भवति ॥२॥ य उ ह वा एवंविद[५]मृच्छति[६] यथैतां देवता ऋत्वा
नीयादेवं न्येति[७]। एतासु ह्येवेनं देवतासु प्रपन्नमेतासु वसन्तमुप-
वदति ॥३॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽऽर्तिरस्ति[८] य एवं वेद। य
एवैनमुपवदति स आर्तिमार्च्छति[९] ॥४॥ स य एनमृच्छादेव[१०] ता देवता
उपसृत्य ब्रूयादयम्माऽऽरत्[११] स इमामार्ति[१२] न्येत्विति। तां हैवाऽऽर्ति
न्येति ॥५॥ यावदावासा[१३] उ हाऽस्येमे प्राणा अस्मिँल्लोक एतावदा-
वासा[१३] उ हाऽस्यैता देवता अमुष्मिँल्लोके भवन्ति ॥६॥ तस्मादु
हैवं विद्वान्नवाऽगृहतायै[१४] बिभीयान्नाऽलोकतायै। एता मे देवता
अस्मिँल्लोके गृहान् करिष्यन्ति। एता अमुष्मिँल्लोके[१५] भवन्ति।
तस्मादु लोकम्प्रदास्यन्तीति[१६] ॥७॥ तस्मादु हैवं विद्वान्नैवाऽगृहतायै
बिभीयान्नाऽलोकतायै। एता मे देवता अस्मिँल्लोके गृहेभ्यो
गृहान् करिष्यन्ति स्वेभ्य[१७] आयतनेभ्य इति हैव विद्याद् [एता]
देवता[१८] अमुष्मिँल्लोके लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥८॥ तस्मादु हैवं

५–विदू वा विद। ६ दुच्छति। ७ नेति। ८–तीर्। ९ भाच्छति।
१० एम। ११ रात्। १२ भर्त्ति। १३–दावशा। १४ भ्रह–। १५ भस्मिल्।
१६ प्रवदा–। १७ 'भायतनेभ्य' भधिक है। १८ एव ता॥

विद्वाशैवाऽहृतायै विभीषायाऽलोकतायै एता म एतदुभयं संनंस्यन्तीति हैव विद्यात् । तथा हैव भवति ॥६॥२।१२॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै ब्रह्मणो वत्सेन[1] वाचमदुहन् । अग्निर्ह वै ब्रह्मणो वत्सः ॥१॥ सा या सावाग्ब्रह्मैव तत् । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥२॥ तामेतां वाचं यथा धेनुं वत्सेनोपसृज्य[2] प्रत्तां दुहीतैवमेव देवा वाचं सर्वान्कामानदुहन्[3] ॥३॥ दुह्रे[4] ह वै वाचं सर्वान्कामान्य एवं वेद । स हैषोऽनानृतो वाचं देवीमुदिन्धे[5] वद वद वदेति ॥४॥ तद्यदिह[6] पुरुषस्य पापं कृतम्भवति तदाविष्करोति । यदिहैनदपि रहसीव कुर्वन्मन्यते[7]ऽथ[8] हैनदाविरेव करोति । तस्माद्वाव पापं न कुर्यात्[9] ॥५॥२।१३॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानां नेदिष्ठमुपचर्यो यदग्निः ॥१॥ तं साधूपचरेत् । य एनमस्मिँल्लोके साधूपचरति[1] तमेषोऽमुष्मिँल्लोके

---

१ वत्सेन, वत्सेन । २ वसृ- । ३-र । ४ अहे । ५ उदिन्धे । ६ अमिह । ७-त । ८ अथ्- । ९ 'एष उ ह वा' दूसरे अनुवाक का यहां अधिक है ॥

१ चरति ।

साधूपचरति । अथ य एनमस्मिँल्लोके नाऽऽद्रियते कमेषोऽमुष्मिँ-
ल्लोके नाऽऽद्रियते । तस्माद्वा अग्निं साधूपचरेत् ॥२॥ तं नैव
हस्ताभ्यां स्पृशेन्न पादाभ्यां न दण्डेन[२] ॥३॥ हस्ताभ्यां स्पृशति
यदस्याऽन्तिकमवनेनिक्ते । अथ यदभिप्रसारयति तत्पादा-
भ्याम् ॥४॥ स एनमास्पृष्ट ईश्वरो दुर्धायां धातोः । तस्माद्वा
अग्निं साधूपचरति । सुधायां हैवैनं दधाति ॥६॥२।१।४॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानाम्महाशनतमो यदग्निः ॥१॥ तस्मा-
त्यम[१]ददानो[२]ऽश्नीयात् । यो वै महाशनेऽनश्नत्यश्नातीश्वरो हैनम-
भिषक्तोः[३] । पूति[४]मिव[५] हाऽश्नीयात्[६] ॥२॥ अथो ह प्रोक्तेऽशने ब्रूयात्
समिन्त्स्वाग्निमिति । स यथा प्रोक्तेऽशने श्रेयाँसम्परिवेष्टवै
ब्रूयात्तादृक्[७] तत् ॥३॥ एतद्ध ह वाव साम यद्वाक् । यो वै चक्षु-
स्साम श्रोत्रं सामेत्युपास्ते न[८] ह तेन करोति ॥४॥ अथ य[९]
आदित्यस्साम चन्द्रमास्सामेत्युपास्ते न[८] हैव तेन करोति ॥५॥
अथ यो वाक् सामेत्युपास्ते स एवाऽनुष्टुपा साम वेद । वाचा हि

२ तदण्डेनम, तदण्डनम ।

१ प्र- । २ ददासीनो । ३ अभिष(म)क्तोः ।
४-दद । ५ इवमिव । ६ श्नी- । ७ तद । ८ न । ९ यद् ।

साम्नाऽऽर्त्विज्यं क्रियते ॥६॥ स यो वाचस्स्वरो जायते सोऽ-
ग्निर्वाग्वेव वाक् । तदेत्रैकधा साम भवति ॥७॥ स य एवमेतदे-
कधा साम भवद्वेदैवं हैतदेकधा साम भवतीत्येकधैव श्रेष्ठस्स्वा-
नाम्भवति ॥८॥ तस्मादु हैवंविदमेव साम्नाऽऽर्त्विज्यं कारयेत ।
स ह वाव साम वेद य एवं वेद ॥९॥२।१५॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

---

१० पत्र—।

[तृतीयोऽध्यायः।]

एका ह वाव कृत्स्ना देवताऽर्धदेवता एवाऽन्याः। अयमेव योऽयम्पवते ॥१॥ एष एव सर्वेषां देवानां ग्रहः ॥२॥ स हैषो-ऽस्तं नाम। अस्तमिति हेह पश्चाद्[1]ग्रहानाचक्षते॥३॥ स यदादित्यो-ऽस्तमगादिति ग्रहानगादिति हैतत्। तेन सोऽसर्वः। स एतमेवा-ऽप्येति ॥४॥ अस्तं चन्द्रमा एति। तेन सोऽसर्वः। स एतमेवाऽप्येति ॥५॥ अस्तं नक्षत्राणि यन्ति। तेन तान्यसर्वाणि। तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥६॥ अन्वग्निर्गच्छति। तेन सोऽसर्वः। स एतमेवाऽप्येति ॥७॥ एत्यहः। एति रात्रिः[2]। तेन ते असर्वे। ते एतमेवाऽपीतः[3] ॥८॥ मुह्यन्ति दिशो न वै ता[4] रात्रिम्प्रज्ञायन्ते। तेन ता असर्वाः। ता एतमेवाऽपियन्ति ॥९॥ वर्षति च पर्जन्य उच्च गृह्णाति[5]। तेन सोऽसर्वः। स एतमेवाऽप्याति ॥१०॥ क्षीयन्त आप एवमोषधय[6] एवं वनस्पतयः। तेन तान्यसर्वाणि। तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥११॥ तद्यदेतत्सर्वं वायुमेवाऽप्येति तस्माद्वा-

---

१ पँचा। २-त्रः। ३-ताः। ४ तां। ५ 'स साम वेद' अधिक है। ६ एवम्-, ओषा-।

चुरेव साम ॥१२॥ स ह वै सामवित्स [कृत्स्नं] साम वेद य एवं वेद ॥१३॥ अथाऽध्यात्मम् । न वै स्वपन् वाचा वदति । सेयमेव प्राणमप्येति ॥१४॥ न मनसा ध्यायति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१५॥ न चक्षुषा पश्यति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१६॥ न श्रोत्रेण शृणोति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१७॥ तद्यदेतत्सर्वं प्राणमेवाऽभिसमेति तस्मात्प्राण एव साम ॥१८॥ स ह वै सामवित्स कृत्स्नं साम वेद य एवं वेद ॥१९॥ तद्यदिदमाहुर्न वताऽद्य[7] वातीति[8][स] हैतत्पुरुषेऽन्तर्निरमते[9] स पूर्णस्स्वेदमान[10] आस्ते ॥२०॥ तद्ध शौनकं[11] च कापेयमभिप्रतारिणं च[काक्षसेनिम्] ब्राह्मणः परिवेविष्यमाणा[12] उपावव्राज[13] ॥२१॥३।१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तौ ह विभिक्षे[1] । तं ह नाऽऽददाते[2] को वा कोवेति मन्यमानौ ॥१॥ तौ होपजगौ ।

महात्मनश्चतुरो देव एकः कस्स[3] जगार भुवनस्य गोपाः ।
तं कापेय[4] न विजानन्त्यकेऽभिप्रतारिन्[5] बहुधा निविष्टम् ॥

---

७ प्राण । ८–यति । ९–मिते । १०–स्व । ११–काप्य १२ विष्या– । १३–व्राजा ॥

१ भि.....२ ददाते । ३ स्तो । ४ कालपेय । ५ निविशन्त ।

इति ॥२॥ स होवाचाऽभिप्रतारी[6]मं वाव[7] प्रपद्य प्रतिब्रूहीति। त्वया[8] वा[9] अयम्प्रत्युच्य[10] इति[11] ॥३॥ तं ह प्रत्युवाच[12]—

> आत्मा देवानामुत मर्त्यानां[13] हिरण्यदन्तो रपसो[14] न सूनुः[15]।
> महान्तमस्य[16] महिमानमाहुरनद्यमानो[17] यद[18]दन्तमत्ति[19] ॥

इति ॥४॥ महात्मनश्चतुरो [देव] एक इति। वाग्[20]वा[21] अग्निः। स महात्मा देवः। स यत्र स्वपिति[22] तद्वाचम्प्राणो गिरति ॥५॥ मनश्चन्द्रमास्स महात्मा देवः। स यत्र स्वपिति तन्मनः[23] प्राणो गिरति ॥६॥ चक्षुरादित्य[24]स्स महात्मा देवः। स यत्र स्वपिति तच्चक्षुः प्राणो गिरति ॥७॥ श्रोत्रं दिशस्ता[25] महात्मानो देवाः। स यत्र स्वपिति तच्छ्रोत्रं प्राणो गिरति ॥८॥ तद्यन्महात्मनश्चतुरो देव एक इत्येतद् तत् ॥९॥ कस्स[26] जगारे[27]ति[28]। प्रजापतिर्वै कः। स हैतज्जगार ॥१०॥ भुवनस्य गोपा इति। स उ वाव भुवनस्य गोपाः ॥११॥ तं कापेय[29] न विजानन्त्येक इति। न ह्येतमेके विजानन्ति ॥१२॥ अभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टमिति। बहुधा ह्येष निविष्टो ॥१३॥ आत्मा देवानामुत[30] मर्त्यानामिति। आत्मा ह्येष देवाना-

---

६ प्र(प्र)म, मा। ७ वच्या, वच्या। ८ प्रपा। ९ वाव। १०—त्युचे। ११ प्रति। १२—याव। १३ मत्यू—। १४ परसो। १५ नु। १६ मभि—। १७ यदि। १८ दन्तम, दैंतम। १९ मँति। २०. पाए, वा। २१ वा। २२ स्वपितिपिति। २३—न, इस के पश्चात् प्रा। २४—त्यद्। २५ महात्मा अधिक है। २६ क। २७ सो। २८ जगार—। २९—पेय। ३०—ताो।

मुत मर्त्यानाम् ॥१४॥ हिरण्यदन्तो रपसो[31] न[15] सूनुरिति । न ह्येष सूनुः[36] । सूनुरूपो ह्येष[32] सन्न सूनुः ॥१५॥ महान्तमस्य महिमानमाहुरिति । महान्तं[33] ह्येतस्य महिमानमाहुः[34] ॥१६॥ अनद्यमानो यददन्तमत्तीति[35] । अनद्यमानो ह्येषोऽदन्तमत्ति ॥१७॥३।२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

तस्यैष श्रीरात्मा समुद्रूढो[1] यदसावादित्यः । तस्माद्गायत्रस्य स्तोत्रेणाऽवान्याभेच्छ्रिया अवछिद्या[2] इति ॥१॥ स एष एवोक्थम् । यत्पुरस्तादवानिति[3] तदेतदुक्थस्य शिरो यद्दक्षिणतस्स[4] दक्षिणः पक्षो यदुत्तरतस्स[5] उत्तरः पक्षो यत्पश्चात्[तत]पुच्छम् ॥२॥ अयमेव प्राणा उक्थस्याऽऽत्मा । स य एवमेतमुक्थस्याऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं[6] वेद स हाऽमुष्मिँ[7] लोके साङ्गस्सतनुस्[सर्वस्]सम्भवाति ॥३॥ शश्वद्ध वा अमुष्मिँल्लोके यदिदम्पुरुषस्याऽऽण्डौ शिश्नं कर्णौ नासिके यत्किं चाऽनस्थिकं न सम्भवाति ॥४॥ अथ य एवमेतमुक्थस्या[8]ऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं[9] वेद स हैवाऽमुष्मिँल्लोके साङ्गस्सतनुस्सर्वस्सम्भवाति॥५॥ तदेतद्वैश्वामित्रमुक्थम् । तदन्नं वै विश्वम्प्राणा ।मत्रम्

३१–से । ३२ सन् । ३३ म् । ३४ आहुर् । और 'इति महान्तं ह्येतस्य महिमाहुः' अधिक है । ३५ अन्तम । ३६ सुनुर–॥

१ समाद्रू– । २ वकृच– । ३ वा इति । ४–दयाः । ५ सतु । ६ त्मक् । ७ सांमन्त । ८–सतु । ९ प्रष्यु– ।

॥६॥ तद्ध विश्वामित्रश्श्रमेण तपसा व्रतचर्येणेन्द्रस्य[10] प्रियं धामो-पजगाम ॥७॥ तस्मा उ हैतत्प्रोवाच[11] यदिदम्मनुष्यानागतम् ॥८॥ तद्ध स उपनिषसाद ज्योतिरेतदुक्थमिति[12] ॥९॥ ज्योतिरिति द्वे अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे। तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितम् ॥१०॥ अथ हैनं जमदग्निरुपनिषसादाऽऽयुरेतदुक्थमिति[13] ॥११॥ आयुरिति द्वे अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे। तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितं ॥१२॥ अथ हैनं[14] वासिष्ठ उपनिषसाद गौरेतदुक्थमिति। तदेतदन्नमेव[15]। अन्नं हि गौः ॥१३॥ तदाहुर्यदस्य प्राणस्य पुरुषश्शरीरमथ केना-ऽन्ये[16] प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१४॥ स ब्रूयाद्यद्वाचा वदति तद्वाचश्शरीरं यन्मनसा ध्यायति तन्मनसश्शरीरं यच्चक्षुषा पश्यति तच्चक्षुषश्शरीरं यच्छ्रोत्रेण शृणोति तच्छ्रोत्रस्य शरीरम्। एवमु हाऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१५॥३।३॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः।

तदेतदुक्थं सप्तविधम्। शस्यते स्तोत्रियो[1]ऽनुरूपो धाय्या प्रगाथस्सूक्तं निवित्परिधानीया[2] ॥ १ ॥ इयमेव[3] स्तोत्रियो

१० प्र-। ११ तदु। १२ उत्थ-। १३ (-साद) गौद्, आयुगौद्। १४-दू। १५ उ.तेदू। १६ ऽन्येन।

१ ऽतिशद् ऽधिक है। २-नीयम्। ३ नास्ति।

अग्निरनुरूपो वायुर्धाय्या[४]ऽन्तरिक्षम्प्रगाथो[५] द्यौस्सूक्तमादित्यो निविद्। तस्मादहरहर्वा उदिते निविदमधीयन्ते । आदित्यो हि निविद् । दिशः परिधानीयेत्यधिदैवतम् ॥२॥ अथाध्यात्मम् । आत्मैव स्तोत्रियः प्रजाऽनुरूपः प्राणो धाय्या[६] मनः प्रगाथश्शिर[७]स्सूक्तं चक्षुर्निविच्छ्रोत्रम्परिधानीया[८] ॥३॥ तदेतदेके त्रिष्टुभा परिदधत्यनुष्टुभैके । त्रिष्टुभात्वेव परिदध्यात् ॥४॥ तदेतदेक एता व्याहृतीरभिव्याहृत्य शंसन्ति[९] महान्मह्या[९] समधत्त देवो देव्या समधत्त ब्रह्म ब्राह्मण्या[१०] समधत्त । तद्यत्समधत्त समधत्तेति ॥५॥ तस्मादिदानीम्[११]पुरुषस्य शरीराणि मातिसंहितानि । पुरुषो ह्येतदुक्थम् ॥६॥ महान्मह्या समधत्तेति । अग्निर्वै महान्पृथिव्येव मही ॥७॥ देवो देव्या समधत्तेति । वायुर्वै देवोऽन्तरिक्षं देवी[१२] ॥८॥ ब्रह्म ब्राह्मण्या समधत्तेति । आदित्यो वै ब्रह्म द्यौर्ब्राह्मणी[१३] ॥९॥ तासां वा एतासां देवतानां द्वयोर्द्वयोर्[१४]देवतयोर्नव-नवाऽक्षराणि सम्पद्यन्ते । एतद्वै[१५] लोकास्त्रि[१६]णवा भवन्ति ॥१०॥ सहस्रं वै त्रिवृत् । सहस्राऽभिव्याहृत्य शंसन्ति । एष उ एव स्तोमस्सो[१८]ऽनुचरः॥११॥

---

४ धाय्या, धाय्यां । ५ प्राग्- । ६ धाय्यां । ७-प्रगाथी- । ८ तदुक्थम् अधिक है (हाशिये में) । ९-स । १०-ब्राह्म । ११ इदानीं । १२-वा । १३-सौ । १४-यो । १५-वौ । १६-वौ । १७ स । १८ स्त ।

यदिममाहुरेकस्तोम इत्ययमेव योऽयम्पवते । एषोऽधिदेवतम् ।
प्राणोऽध्यात्मम् । तस्य शरीरमनुचरः[१९] ॥१२॥ तद्यथा ह वै मणौ
मणिसूत्रं सम्प्रोतं स्याद्—॥१३॥४॥

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

[१]—एवं हैतस्मिन्सर्वमिदं सम्प्रोतं गन्धर्वाप्सरसः पशवो
मनुष्याः ॥१॥ तद्ध मुञ्ज[२]स्सामश्रवसः[३] प्रययौ । तस्मै[४] ह प्राजानिर्वे-
श्यः प्रेयाय[५] ॥२॥ तस्य हाऽन्तरिक्षात्पतित्वा नवनीतपिण्ड उरसि
निपपात । तं हाऽऽदायाऽनुदर्शौ ॥३॥ ततो[६] हैव स्तोमं[७] ददर्शाऽन्तरिक्षे
विततम्बहुशोभमानम् । तस्यो ह युक्तिं[८] ददर्श ॥४॥ बहिष्पवमान-
मासद्य टीत्र[९] विथि भारय इति कुर्यात् टीत्र[९] गृहित्र[१०] अपान्य इति
वाचा । दिदृक्षेतैवाऽक्षिभ्यं शुश्रूषेतैव कर्णाभ्याम् । स्वयामिदम्म-
नोयुक्तम् ॥५॥ तद्यत्र वा इषुरत्यग्रो भवति न वै स ततो
हिनस्ति[११] तदु[१२] वा एतं नोपाप्नुयात् । प इत्येवाऽपान्यात् । तद्यथा
बिम्बेन मृगमानयेदेवमेवैनमेतया देवतयाऽऽनयति । स युक्तः
करोति । एष[१३] एवापि युक्तः[१४] ॥६॥३॥५॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१९–रन्तम् ॥

१ पवम् (पवा) के पहले पञ्चम कं० का द्वि० वाक्य । २ मौञ्ज्—। ३ साहश्र्—। ४ तमस्मै । ५ प्रोयाय । ६ तेतो ७–म्म । ८–इ । ९ टीत्व, पहला अक्षर ळ भी हो । १० गृहित्व । ११ अस्ति । हनस्ति । १२ यद् । १३–षो । १४–ति ॥

कोऽसौ साम्नः प्रार्चिं[1] वेद य हास्मै दीयत इति ॥१॥ दन्ता[2] इति ह वा प्रत्यमाहुर्दीप्यते यथेति वायुः पचते हन्तेति चन्द्रमा ओमित्या-दित्यः ॥२॥ एषा ह वै साम्नः प्रार्चिः[3]। एतां ह वै साम्नः प्रार्चि[4]मुदालिगयः चैमिविदां चकार ॥३॥ तां हैतां होतुर्वाऽऽज्ये गायेन्मै-त्रावरुणस्य वा तां[5] ददा३[6] तथा३ हन्ता३[7] हिम्भा ओवा इति। य ह वा अस्मै दीयते ॥४॥ [सो] ऽप्यन्यान्[8] बहूनु[9]पर्युपरि[10] य एवमेतां साम्नः प्रार्चिं वेद ॥५॥ य उ ह वा अबन्धुर्बन्धुमत्साम[11] वेद यत्र हाऽप्येनं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीवचक्षते तद्धाऽपि श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्यैति[12] ॥६॥ आग्निर्हैं वा अबन्धुर्बन्धुमत्साम[11]। कस्माद्धा ह्येनं दार्वोः कस्माद्वा पर्याहृत्य मन्थन्ति स श्रैष्ठ्याया[13]ऽऽधिपत्यायाऽन्नाद्याय पुरोधायै[14] जायते ॥७॥ स यत्र ह वा अप्येवंविदं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीव[15]-चक्षते तद्धाऽपि श्रैष्ठ्यमाधि[16]पत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्यैति ॥८॥३।६॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः।

स्वयमु तत्र यत्रैनं विदुः ॥१॥ सुदालिसो ह वै चैमिः प्राचीनशा-लिर्जाबालो[1] ते ह सब्रह्मचारिण आसतुः ॥२॥ ते हे[2]मे बहु जप्यस्य

---

१ प्रति। २ तदान्, ददान्। ३ प्रक्तिः, प्रवृक्तिः। ५ तौं। ६ 'हन्ता३' अधिक है। ७ नास्ति। ८ अप्यन्। ९-हुन्य। १०-उप। ११-न्धु। १२-धा। १३ श्रेष्ठ्-। १४-आये। १५ परि॥

१-शा:खिर्। २ हैं।

ऽस्मस्य यऽस्मृषिरे[३] प्राचीनशालिश्च[४] जाबाली च ॥३॥ अथ ह स्म सुदक्षिणः[५] क्षैमिर्यदेव यज्ञस्याञ्जो यदुपविदितं तदु हैव पृच्छति ॥४॥ त उ ह स्मापोदिता आक्रोशमानावेके[६]ऽन्वासाते[७] दुरनूचान इति ह[८] स्म सुदक्षिणं क्षैमिमाक्रोशन्ति[९] प्राचीनशालिश्च[१०] जाबाली च ॥५॥ स ह स्माऽऽह सुदक्षिणः क्षैमिर्यन्न सूचिताः कुरुपञ्चालास्समायता भवितारस्तत्र एष संवादो वाऽनुपद्ये सुद्रा इव संवदिष्यामह[११] इति ॥६॥ ता उ ह वै जाबाली दिदीक्षाते[१२] शुक्रश्च गोश्रुश्च[१३]। तयोर्ह प्राचीनशालिर्वृत[१४] उद्गाता ॥७॥ स तद् सुदक्षिणो ऽनुबुबुधे जाबाली हाऽदीक्षिषातामिति[१६]। स ह संग्रहीतारमुवाचा-[१५] ऽनयस्वाऽरे[१७] जाबाली हाऽदीक्षिषातां[१८] तद्गमिष्याव इति ॥८॥३॥७॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

तस्य ह ज्ञातिका अश्रुमुखा इवाऽऽसुरन्यतरां वा अयमुपागादिति[१] ॥१॥ अथ ह स्म वै यः पुरा ब्रह्मवाद्यं वदत्यन्यतरामुपागादिति ह स्मैनम्मन्यन्ते। अथो ह स्मैनम्मृत्यमिवैवोपासते ॥२॥ तं ह संग्रहीतोवाचाऽथ यद्भगवस्ते ताभ्यां न कुशलं

२ है। ३ ऽस्मस्य–। ४–शालाश्। ५–सं। ६ प्य्–।–मा। ७ चोरुश्। ८–मा। ९ याक्रोश्–। १० लीश्। ११–ष्यतिष्य–। १२ ददीं–। १३–श्रष्। १४ प्र–। १५ संसं–। १६ दिदीक्ष–। १७–यास्वा॥

१–म।

कथेत्थमात्थैवि ॥३॥ ओमिति होवाच मन्तव्यम्म आचार्यस्तुय-मानमन्यतेति ॥४॥ स ह रथमास्थाय प्रधावयांचकार । तं ह स्म प्रतीक्षन्ते ॥५॥ कं जानीतेति । सुदक्षिण इति । न वै नूनं स इदयम्भ्यवेत्तादिति । स एवेति ॥६॥ स ह सोपानादेवाऽन्तर्वेद्यव-स्थायोवाचाऽङ्गन्वित्थं गृहपता३ इति । तं ह नाऽनूदतिष्ठा-सत् । स होवाचाऽनूत्थाता म एधि । कृष्णाजिनोऽसी[ति] । तादिमे कुरुपञ्चाला अविदुरनूत्थातैव त इति होचुः ॥७॥ तं ह कनीयान्भ्रातोवाचाऽनुत्तिष्ठ । भगव उद्गातारमिति । तं हाऽनूत्तस्थौ ॥८॥ स होवाच त्रिर्वै गृहपते पुरुषो जायते । पितुरेवाऽग्रेऽधि जायतेऽथ मातुरथ यज्ञात् ॥९॥ त्रिर्वेव म्रियत इति। स यद्ध वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति-॥१०॥३।८।

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—तत्प्रथममभ्म्रियते ॥१॥ अन्धमिव वै तमो योनिः । लोहितस्तोको वा वै स तदाभवत्यपां वा स्तोकः । किं हि स तदाभवति ॥२॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या

---

२ त-। ३ आचार्य-। ४ सूय्-। ५-ष्ठस्-। ६-ऊथा-। ७ म। ८ 'इति' अधिक है। ९ भ्रातो। १० चा। ११ अनुत्तिष्ठ। १२ त्रिव्। १३ अ, ऊ। १४ नास्ति। १५ म्रियत॥

१ अन्ध्-। २ वो। ३ स्।

चैनं[४] तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥३॥ अथ य एनमेतद्दीक्षयन्ति[५] तद्द्वितीयम्म्रियते। वपन्ति केशश्मश्रूणि। निकृन्तन्ति नखान्। मत्यञ्जन्त्यङ्गानि[६]। मत्यचत्यङ्गुलीः[७]। अपहतोऽपवेष्टित[८] आस्ते[८]। न जुहोति। न यजते। न योषितं[९] चरति। अमानुषीं वाचं वदति। मृतस्य वावैष[१०] तदा रूपम्भवति ॥४॥ स यस्तां देवतां वेद यां[११] च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥५॥ अथ य एनमेतदस्माल्लोकात्प्रेतंचित्यामादधाति तद् तृतीयम्म्रियते॥६॥ स यस्तां[१२] देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्मृत्युमतिवहति[१३] स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥७॥ एतावद्धैवोक्त्वा[१४] रथमास्थाय प्रधावयांचकार ॥८॥ तं ह जाबालम्प्रत्येतं कनीयान् भ्रातोवाच काम्भवाञ्[१५]छूद्रको[१६] वाचमवादीति। हस्तिना गाथमैषीरिति॥९॥ प्र हैवैनं तच्छशंस यः कथमवोचद्भगव इति। यस्त्रयाणाम्मृत्यूनां साम्नाऽतिवाहं वेद स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥१०॥३।९॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः।

---

४ चे। ५ दि-। ६-अजत्य्। ७ यज्-। ८ अव-। ९ योष्-। १० स। ११ 'का' अधिक है। १२ यन्तस्। १३-तीति। १४ वा। १५ वहतीति' अधिक है। १६-वच्॥

ते वाव मन्यन्ते पितो[1]द्गातारममन्यतेति होवाच । तदु ह प्राचीनशाला वि[2]दुर्य एषामयं द्वत उद्गाताऽऽस[3] । तस्मिन् ह नाऽनुविदुः ॥१॥ ते होचुरनुधावत काण्ड्विया[4]मिति । तं हाऽनुदद्रुः[5] । ते ह काण्ड्वियमुद्गातारं चक्रिरे प्राचीनशा[6]लाः प्राचीनशालिम ॥२॥ तं हाऽभ्यवेक्ष्यो[7]वाचैवमेव ब्राह्मणो मोघाय नादाय नाऽस्नायत । स नाऽग्नु सा[8]म्नोऽन्विच्छतीति । अति हैवैनं तच्चक्रे ॥३॥ स यद्[9] वा एन[10]मेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चत्यादित्यो हैवं तद्योन्यां रेतो भूतं[11] सिञ्चति । स हाऽस्य तत्र मृत्योरीशे[12] ॥४॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति[13] तद् वाव स ततोऽनुसम्भवति प्राणं च । यदा ह्येव रेतस्सिक्तं प्राण आविशत्यथ तत्सम्भवति[14] ॥५॥ अथो यदेवैनमेतद्दीक्षयन्त्यग्निर्हैवैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स हैवाऽस्य तत्र मृत्योरीशे[15] ॥६॥ अथो यामेवैतां वैसर्जनीयामाहुतिमध्वर्युर्जुहोति तामेव स ततोऽनुसम्भवति छन्दांसि[16] चैव ॥७॥ अथ य एनमे-

---

१–प । २ विधुर् । ३ सः । ४ कान्त्यावयम् । ५–न्नः । ६ ब्राह्मणम् । ७–पेदया । ८ न्वीच्– । ९ र्णम् । १० नास्ति । ११ रत्– । १२–शी । १३ 'अथोवाच' अधिक है । १४ 'अथो य एनमेतद्दी-क्षयन्त्य……तत्रमृत्योरीशे' अधिक है । १५ 'अथो यदेवैनमे-तद्दीक्षयन्ति' अधिक है । १६ आसि ।

तदस्माल्लोकात्[17]मेतं चित्यामादधाति चन्द्रमा हैवैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स उ हैवाऽस्य तत्र मृत्योरीशे ॥८॥ अथो यद्वैनमेतदस्माल्लोकात्[17] [17]मेतं चित्यामादधत्यथो या एवैता अन्तोषधी- या आपस्ता एव स ततोऽनुसम्भवाति[18] प्राणम्नेव । प्राणो ह्यापः ॥९॥ तं ह वा एवंविदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यम्मृत्यु- मतिवहति वामित्यग्निं हुमिति वायुम्भा इति चन्द्रमसम् ॥१०॥ तान्[19] वा एतान्मृत्यून् साम्नोद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं चाऽति- वहत्योमित्येतेनाक्षरेण प्राणेनाऽमुनाऽऽदित्येन ॥११॥

तस्यैष श्लोकः—

उतैषां ज्येष्ठ[20] उत वा किनष्ठ उतैषाम्पुत्र उत वा पितैषाम् ।
एको ह देवो मनसि प्रविष्टः पूर्वो ह जज्ञे स उ गर्भेऽन्तः—

इति ॥१२॥ तद्यदेशोऽभ्युक्त[21] इममेव पुरुषं योऽयमाक्षणो[22]ऽन्तरोमित्येतेनैवाक्षरेण प्राणेनैवाऽमुनैवाऽऽदित्येन[...]॥१३॥३।१०

द्वितीयेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

त्रिर्ह[1] वै पुरुषो म्रियते त्रिर्जायते[2] ॥१॥ स हैतदेव प्रथमम्म्रियते यद्रेतस्सिक्तं सम्भूतम्भवाति[3] । स प्राणमेवाऽभिसम्भवति । आकाश-

---

१७-आत् । १८-बन्तोति । १९ ता । २० जेष्ठ । २१ ल्यु- । २२ अक्षरात् ॥
१ हे । २ 'स हैतदेव प्रथमम्म्रियते त्रिर्जायते' अधिक है । ३ सभ- ।

भिजायते ॥२॥ अथैतद्द्वितीयम्म्रियते यदीक्षते । स छन्दांस्येवा-
ऽभिसम्भवति । दक्षिणामभिजायते ॥३॥ अथैतत् तृतीयम्म्रियते
[५]यन्म्रियते । स श्रद्धामेवाऽभिसम्भवति । लोकमभिजायते ॥४॥
तदेतत् [६]प्याव्द्रायत्रं [७]गायति । तस्य प्रथमया[८]ऽऽस्तृतेममेव लोकं जयति
यदु चाऽस्मिँल्लोके । तदेतेन चैनम्प्राणेन सम[९]र्धयति यमभिसम्भवत्येतां
चाऽस्मा [१०]आशाम् प्रयच्छति यामभिजायते ॥५॥ अथ द्वितीययाऽऽस्तृते-
दमेवाऽन्तरिक्षं जयति यदु चान्तरिक्षे । तदेतै[११]श्चैनं छन्दोभिस्स-
म[१]र्धयति यान्यभिसम्भवति । एतां चास्मै दक्षिणाम्प्रयच्छति याम-
भिजायते ॥६॥ अथ तृतीययाऽऽस्तृताऽमुमेव लोकम् जयति यदु
चाऽमुष्मिँल्लोके । तदेतया चैनं श्रद्धया सम[१]र्धयति यये[९]वैनमेतच्छ्रद्ध-
[१२]याऽभ्यावृत्याऽदधाति समयामितो भविष्यतीति । एतं चास्मै लो-
[१३]कम्प्रयच्छति यमभिजायते ॥७॥३।१।१॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतद्वै तिसृभिरावृद्भिरिमाँश्च लोकाञ्जयत्येतै[१]श्चैनम्भूतैस्समर्धय-
ति [२]यान्यभिसम्भवति ॥१॥ अथ वा अतो हिङ्कारस्यैव । तं ह [३]स्वर्गे
लोके सन्तम्[४]मृत्युर[५]न्वेयाशनया ॥२॥ श्री[६]र्वा एषा प्रजापतिस्साम्नो

४ लोव । ५-मू । ६ श्रिय्- । ७-अन्ति । ८ इम्-(!) । ९-मृथ- ।
१० 'न्यभिसम्भवति' अधिक है लाल रंग से कटा हुआ । ११ च ।
१२ ऽभ्याव् । १३-म्रा ।
१ लोक्- । २-मृघ्- ३ नास्ति । ४ सितम् । ५ अनेति । ६ श्री ।

यद्धिङ्कारः । तमिदुद्गाता श्रिया प्रजापतिना हिङ्कारेण मृत्युमपसेध-ति ॥३॥ हुम्भेसिाह माऽत्र नु गा यत्रैतद्यजमान इति हैतत् ॥४॥ स यथा श्रेयसा सिद्धः पापीयान् प्रतिविजत एवं हैवाऽस्मान्मृत्युः पाप्मा प्रतिविजते ॥५॥ यन्मेत्याह चन्द्रमा वै मा मासः । एष ह वै मा मासः। तस्मान्मेसाह । भा इति हैतत्परोक्षेणेव । यस्माद्धेव मेसाह यद्वेव मेसाहेतानि त्रीणि । तस्मान्मेति ब्रूयात् ॥६॥३।१२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

हुम्भा इति ब्रह्मवर्चसकामस्य। भातीव हि ब्रह्मवर्चसम् ॥१॥ हुम्वो इति पशुकामस्य । वो इति ह पशवो वाश्यन्ते ॥२॥ हुम् वागिति श्रीकामस्य । वगिति ह श्रियम्पणायन्ति ॥३॥ हुम् भा ओवा इत्येतद्वेषोपगीतम् ॥४॥ महदिवाऽभिपरिवर्तयन् गाये-दिति ह स्माऽऽह नाको महाग्रामो महानिवेशो भवतीति । स यथा स्थाणुमर्पयित्वेतरेण वेतरेण वा परियायात् तादृक्तत् ॥५॥ तदु होवाच शाट्यायनिः कस्मै कामाय स्थाणुमर्पयेत् । अथोपगीतमे-वैतत् । नैवैतदाद्रियेतेति ॥६॥ [इति] नु हिङ्काराणाम् । अथ वा

७ एद् । ८ 'इति' अधिक है । ९—विच— १० ए एवम् । ११ भाग । १२ वेव ॥

१ वो । २ श्रिक्–,–सु । ३–वा, अयित्वा । ४–रेव । ५ पर्य्या– ६ प्रैद्र् । ७ यौद्र्– । ८ हिङ्काक्–।

अन्तो निधनमेव । ओवा इति द्वे अक्षरे । अन्तो वै साम्नो निधन-मन्तस्स्वर्गो लोकानामन्तो ब्रध्नस्य विष्टपम् ॥७॥ तमेतदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणान्ते स्वर्गे लोके दधाति ॥८॥ य उ ह वा अपक्षो वृक्षाग्रं गच्छत्येव वै स ततः पद्यते । अथ यद्ध पक्षी वृक्षाग्रे यदसिधारायां यत्क्षुरधारायामास्ते न वै स ततोऽवपद्यते । पक्षाभ्यां हि संयत[9] आस्ते ॥९॥ तमेतदुद्गाता यजमा-नमोमित्येतेनाक्षरेण स्वरपक्षं कृत्वाऽन्ते स्वर्गे लोके दधाति । स यथा पक्ष्यविभ्यदासीतैवमेव स्वर्गे लोकेऽविभ्यदास्ते[10]ऽथाऽऽचरति ॥१०॥ ते ह वा एते अक्षरे देवलोकश्चैव मनुष्यलोकश्च । आदि-त्यश्च ह वा एते अक्षरे चन्द्रमाश्च ॥११॥ आदित्य एव देवलोक-श्चन्द्रमा मनुष्यलोकः । ओमित्यादित्यो[11] वागिति चन्द्रमाः ॥१२॥ तमेतदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमय-ति ॥१३॥३॥१३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं हाऽऽगतम्पृच्छति कस्त्वमसीति । स यो ह नाम्ना वा गोत्रेण वा प्रब्रूते तं हाऽऽह यस्तेऽयम्[1]मय्यात्माऽभूदेष ते स इति ॥१॥

---

९ हि संयत्त । १०-ज्ञो । ११-च ॥

१-भ्य ।

तास्येनम् हाऽऽत्मन् प्रतिपद्य । तमृतवस्सम्पदार्यपदूरहीतमपकर्षन्ति[2] ।
तस्य हाऽहोरात्रे लोकमाप्नुतः ॥२॥ तस्मा उ हैतेन[3] प्रब्रुवीत[4] को-
ऽहमस्मि सुवस्त्वम् । स त्वां स्वर्ग्यं[5] स्वरगामिति ॥३॥ को ह वै
प्रजापतिरथ हैवंविदेव सुवर्गः[6] । स हि सुवर्गश्छति ॥४॥ तं हा-
ऽऽह यस्त्वमसि सोऽहमस्मि योऽहमस्मि स त्वमस्येहीति ॥५॥
स एतमेव सुकृतरसम्प्रविशति । यद्वु ह वा अस्मिँल्लोके मनुष्या
यजन्ते[7] यत्साधु कुर्वन्ति[8] तदेषामूर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति । तदमुं
चन्द्रमसम्मनुष्यलोकम्प्रविशति[9] ॥६॥ तस्येदम्मानुषानिकाशन-
मण्डमुदरे[10]ऽन्तस्सम्भवति[11] । तस्योर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति[12] स्तनावभि[13] ।
स यदाजायतेऽथाऽस्मै माता स्तनमन्नाद्यम्प्रयच्छति ॥७॥ अजातो
ह वै तावत्पुरुषो यावन्न यजते[14] स यज्ञेनैव जायते । स यथाऽण्ड
म्प्रथमनिर्भिन्नमेवमेव ॥८॥ तदा तं ह वा एवंविदुद्गाता यज-
मानमोमित्येतेनाऽक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमयति । वागि-
त्यस्मा उत्तरेणाऽक्षरेण[15] चन्द्रमसमन्नाद्यमत्तितिम्प्रयच्छति[16] ॥९॥
अथ यस्यैतदविद्वानुद्गायति[17] न हैवैनं देवलोकं गमयति नो

---

२ स । ३ मेव । ४-प्रब्रू-, -वीत् । ५-गम । ६ सुस्वर्-, -स
७ आयन्ते । ८ सं- । ९-वी । १०-यँ-विन्दु-हस्व के पश्चात 'इकवा' । ११ ...के ।
१२ ...- । १३-भाष् । १४ जायते । १५-स । १६-यच्छि । १७ ना ।

एनमन्नाद्येन समर्धयति[18] ॥१०॥ स यथाऽनड्वान् विदिग्धं[19] शयीता-
ऽन्नाद्यमलभमानमेवमेव विदिग्धश्शेतेऽन्नाद्यमलभमानः[20] ॥११॥
तस्मादु हैवंविदमेवोद्गापयेत । एवंविदिहैवोद्गातारिति हूतः
प्रतिगृणुयात्[21] ॥१२॥३॥१४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

-:०:-

वागिति हैन्द्रो[1] विश्वामित्रायोक्थमुवाच[2] । तदेतद्विश्वामित्रा उपासते वाचमेव ॥१॥ मनुर्ह वासिष्ठाय ब्रह्मत्वमुवाच । तस्मादाहुर्वासिष्ठमेव ब्रह्मेति ॥२॥ तदु वा आहुरेवंविदेव ब्रह्मा । क उ एवंविदं वासिष्ठमर्हतीति ॥३॥ प्रजापतिः प्राजिजनिषत । स तपोऽतप्यत । स ऐक्षत हन्त नु प्रतिष्ठां जनयै[3] ततो याः प्रजास्स्रक्ष्ये[4] ता[5] एतदेव प्रतिष्ठास्यन्ति नाऽप्रतिष्ठाश्चरन्तीः प्रदाघिष्यन्त इति ॥४॥ स इमं लोकमजनयदन्तरिक्षलोकममुं[6] लोकमिति । तानिमाँस्त्रीँ-ल्लोकाञ्जनयित्वाऽभ्यश्राम्यत् ॥५॥ तान् समतपत्[7] । तेभ्यस्संतप्तेभ्यस्त्रीणि शुक्राण्युदायन्नग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षादादित्यो दिवः ॥६॥ स[8] एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत्[9] । तेभ्यस्संतप्तेभ्य

१८—मृध्—। १९—न्ना । २०—न्नाः । २१—१
१ है । २ उत्थ्— । ३ जाये, जनये । ४ स्रक्— । ५ ताम् । ६—मु ।
७ समभवन् । ८ स्स । ९—न् ।

नीरयेव शुक्राण्युदायन्नृग्वेद एवाऽग्नेर्यजुर्वेदो वायोस्सामवेद आदित्यात् ॥७॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्यैवाऽतपत् । तेभ्य-स्संतप्तेभ्यस्त्रीण्येव शुक्राण्युदायन्भूरित्यृग्वेदाद्भुव इति यजुर्वेदा-त्स्वरिति सामवेदात्तदेव[10] ॥८॥ तद्ध वै त्रय्यै विद्यायै शुक्रम् । एतावदिदं सर्वम् । स यो वै त्रयीं विद्यां विदुषो लोकस्सोऽस्य लोको भवति य एवं वेद ॥९॥३।१।५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अयं वाव यज्ञो योऽयम्पवते । तस्य वाक् च मनश्च वर्तन्यौ । वाचा च ह्येष एतन्मनसा च वर्तते ॥१॥ तस्य होताऽध्वर्युरुद्गाते-त्यन्यतरां वाचा वर्तनिं संस्कुर्वन्ति । तस्मात्ते वाचा कुर्वन्ति । ब्रह्मैव[1] मनसाऽन्यतराम् । तस्मात्स तूष्णीमास्ते ॥२॥ स यद्ध सो-ऽपि स्तूयमाने वा शस्यमाने वा वावद्यमान आसीताऽन्यतरामेवा-ऽस्यापि तर्हि स वाचा वर्तनिं संस्कुर्यात् ॥३॥ स यथा पुरुष एकपाद्यन् भ्रेषन्नेति[2] रथो वैकचक्रो वर्तमान[3] एवमेव तर्हि यज्ञो भ्रेषन्नेति[4] ॥४॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण उवाच ब्रह्माणम्प्रातरनु-

१०—म ॥

१-माव । २ भ्र- । ३-नो । ४ स ।

वाक उपाकृते[५] वा वज्यमानमासीनमर्धं[६] वा[७] इमे तर्हि यज्ञस्याऽन्वर-गुरिति[८]। अर्धं हि ते तर्हि यज्ञस्याऽन्तरीयुः[९] ॥५॥ तस्माद्ब्रह्मा प्रातरनुवाक उपाकृते वाचंयम आसीताऽऽपरिधानीयाया आ वषट्कारादितरेषां स्तुतशस्त्राणामेवाऽऽसंस्थायै[१०] पवमानानाम् ॥६॥ स यथा पुरुष उभया[११] पाद्यन्[१२] भ्रेषं[१३] न न्येति रथो वोभयाचक्रो वर्तमान एवमेतर्हि यज्ञो भ्रेषं न न्येति ॥७॥३।१.६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

स यदि यज्ञ ऋक्तो भ्रेषमियाद्ब्रह्मणे[१] प्रब्रूतेत्याहुः। अथ यदि यजुष्टो[२] ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः। अथ यदि सामतो ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः। अथ[३] यद्यनुपस्मृतात् कुत इदमजनीति ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्येवाऽऽहुः[२०] ॥१॥ स ब्रह्मा प्राङ्[४] उदेत्य स्रुवेणाऽऽग्नीध्र आज्यं जुहुयाद्भूर्भुवस्स्वरित्येताभिर्व्याहृतिभिः ॥२॥ एता वै व्याहृतयस्सर्वप्रायश्चित्तयः। तद्यथा लवणेन[५] सुवर्णं संदध्यात् सुवर्णेन रजतं रजतेन[६] त्रपु त्रपुणा लोहायसं लोहायसेन कार्ष्णायसं[७] कार्ष्णायसेन दारु दारु च चर्म

५—ब्रो। ६ 'आसू—' द्विवार पढ़ा गया है। ७—न्। ८—गु-कर्। ९ अन्तर्यु:। १०—थै। ११—पाद्। १२ यद्। १३ षैं॥

१ ईं—। २—षो। ३ एव। ४ प्रान्, प्रा। ५ विदध—। ६—पुं ७ काद्—।

य श्लेष्मयैवमेवैवं[8] विद्वाँस्तत्सर्वं भिषज्यति ॥३॥ तदाहुर्यदहौषीन्मे प्रहान्मेऽग्रहीदित्यध्वर्यवे दक्षिणानयन्त्यशंसीन्मे[21] वषट्[9] अकर्म[10] इति[11] होत्र उदगासीन्म इत्युद्गात्रेऽथ किं चक्रुषे ब्रह्मणे तूष्णीमासीनाय समावतीरेवेतरैर्ऋत्विग्भिर्दक्षिणा[12] नयन्तीति ॥४॥ स ब्रूयादर्ध-भाग्घ[13] वै[14] स[15] यज्ञस्यार्ध[16] ह्येष यज्ञस्य वहतीति । अर्धा ह स्म वै पुरा ब्रह्मणे दक्षिणा नयन्तीति । अर्धा इतरेभ्य ऋत्विग्भ्यः ॥५॥ तस्यैष श्लोको—

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वम्, मयि लोका मयि दिशश्चतस्रः ।
मयीदम्मन्ये[17] निमिषद्यदेजति, मय्याप ओषधयश्च सर्वा, इति ॥६॥

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वमित्येवंविदं ह वावेदं सर्वम्भुवनमन्वा-यत्तम् ॥७॥ मयि लोका मयि दिशश्चतस्र इत्येवंविदि ह वाव लोका एवंविदि दिशश्चतस्रः ॥८॥ मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति मय्याप ओषधयश्च सर्वा इत्येवंविदि[18] ह वावेदं सर्वम्भुवनम्प्रतिष्ठितम् ॥९॥ तस्मादु हैवंविदमेव ब्रह्माणं कुर्वीत । स ह वाव[19] ब्रह्मा य एवं वेद ॥१०॥३॥१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

---

८ श्लेष्म (सद्ध्यात्) या कोष्ठ लाल रंग में कटा हुआ। ९—वष् । १० अकृयम् । ११ मय् । २० 'पव' नास्ति । २१ आशांसीन् । १२—रेद् । १३—भाग् । १४ नास्ति । १५ यै । १६ प । १७ मतिही । १८—दे । १९ [illegible] ।

अथ वा प्रतस्तोमभागानामेवाऽनुमन्त्राः ॥१॥ तद्धैतदेके स्तोमभागैरेवाऽनुमन्त्रयन्ते । तत्तथा न कुर्यात् ॥२॥ देवेन सवित्रा प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्येत्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्ते सविता वै देवानाम्प्रसविता सवित्रा प्रसूता इदमनु मन्त्रयामह इति वदन्तः। तदु तथा न कुर्यात् ॥३॥ भूर्भुवस्स्वरित्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्त एषा वै त्रयीविद्या त्रय्यै वेदं विद्ययाऽनुमन्त्रयामह इति वदन्तः। तदु तथा नो एव कुर्यात् ॥४॥ ओमित्येवानुमन्त्रयेत ॥५॥ अथैष वसिष्ठस्यैकस्तोमभागानुमन्त्रः। तेन हैतेन वसिष्ठः प्रजातिकामोऽनुमन्त्रयां चक्रे देवेन सवित्रा प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्य भूर्भुवस्स्वरोमिति। ततो वै स बहुः प्रजया पशुभिः प्राजायत ॥६॥ स एव तेन वसिष्ठस्यैकस्तोम भागानुमन्त्रेणाऽनुमन्त्रयेत बहुरेव प्रजया पशुभिः प्रजायते। इयं त्वेवस्थितिरोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत ॥७॥३।१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः।

---

१ स्तोमा- । २ तु । ३ कुर्वाद् । ४ र्द । ५ मे 'प' खाल में कटा, प । ६-ई । ७ त्रेय्ये । ८ ऽव । ९-याया । १०-हु । ११-जाया । १२ प्राज्-। १३ तस्तोम-। १४-येते । १५ इय । १६ पञ्चमः । १७-स्ता ॥

अथैव वाचा वज्रमुदूगृह्णाति। यदाह सोमः पवत इति वोपावर्त-ध्वमिति वा वाचैव तद्वाचो वज्रं विगृह्णते वाचस्सत्येनातिमुच्यते। तस्मादोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत ॥१॥ देवा वा अनया त्रय्या [विद्यया] सरसयोर्ध्वास्स्वर्गं लोकमुदक्रामन्। ते मनुष्याणामन्वागमाद्बिभ्यतस्त्रयं वेदमपीलयन् ॥२॥ तस्य पीलयन्त एकमेवाक्षरं नाऽशक्नुवन्पीलयितुमोमिति यदेतत् ॥३॥ एष उ ह वाव सरसः। सरसा ह वा एवंविदस्त्रयी विद्या भवति ॥४॥ स यां ह वै त्रय्या विद्यया सरसया जितिं जयति यामृद्धिमृध्नोति जयति तां जितिमृध्नोति तामृद्धिं य एवं वेद ॥५॥ एतद्ध वा अक्षरं त्रय्यै विद्यायै प्रतिष्ठा। ओमिति वै होता प्रतिष्ठित ओमित्य-ध्वर्युरोमित्युद्गाता ॥६॥ एतद्ध वा अक्षरं वेदानां त्रिविष्टपम्। एतस्मिन्वा अक्षर ऋत्विजो यजमानमाधाय स्वर्गे लोके समुदूहन्ति तस्मादोमित्येवानुमन्त्रयेत ॥७।३।१९॥

चतुर्थेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः। चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः।

———:०:

गुहासि देवोऽस्युपवास्युप तं वायस्व योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥१॥ महिनासि बहुलासि बृहत्यासि रोहिण्यस्यपभाऽसि ॥२॥

---

१ य। २-र्भ। ३ चिम्- ४ चैयू- ५ प्रतिष्ठे। ६-प।

१ देवास्मि। २ प्य्। ३ वॅयस्थि। ४ महिका।

सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्या[५]भूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते ता दिशामि ॥४॥ नाम मे शरीरम्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इतीमाम्पृथिवीमवोचत् ॥५॥ तामियमागतम्पृथिवी प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह[६] नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयी[७]ति । नाम[८] मे शरीरम्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मा[१४] इयम्पृथिवी पुनर्ददाति ॥८॥ तामाह प्र मा वहेति । किमभीति । अग्निमिति तमग्निमभिप्रवह[९]ति ॥९॥ सोऽग्निमाहा-ऽभिजिदस्या[१०]भिजय्यासम्[११] । लोकजिदसि लोकं जय्यासम् । आचिरस्यन्नमद्यासम् । अन्नादो भवति यस्त्वैवं वेद ॥१०॥ सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥११॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते ता दिशामि ॥१२॥ तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाक् मे । तन्मे त्वयि । तन्मे मोऽपहृथा[१२] इत्यग्निमवोचत् ॥१३॥ तं तथैवाऽऽगत-

५ आभूतिरिति । ६ स । ७ मयी । ८ म । ९—हन्ति । १० 'अभिजिदस्य' दो बार आया है । ११ अभ्ये— । १२—थाय् । १३ तस्मा । १४ अस्माय् ॥

माग्नेः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकस्सह नावयं लोक इति ॥१४॥ यद्वाव मे त्वयीत्याहु तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१५॥ किं नु ते मयीति । तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाङ् मे । तन्मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । [तद्] अस्मा[12] अग्निर्पुनर्ददाति ॥१६॥ तमाह प्र मा वहेति ॥१७॥३॥२०॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

किमभीति । वायुमिति । तं वायुमभिप्रवहति ॥१॥ स वायुमाह यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रो राजा भूतो वासि । यद्दक्षिणतो वासीशानो भूतो वासि । यत्पश्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि । यदुत्तरतो वासि सोमो राजा भूतो वासि । यदुपरिष्टादववासि प्रजापतिर्भूतोऽववासि[1] ॥२॥ प्रासोऽ[2]स्येकव्रात्योऽनव[3]सृष्टो देवानामिवलमप्यधा[4] ॥३॥ तव प्रजास्तवौषधयस्तवाऽऽपो विचलितमनुविचलन्ति ॥४॥ सम्भूर्देवोऽ[5]सि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥५॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टानाऽहं तव ताः पर्येमि । उप ते ता दिशामि ॥६॥ प्राणापानौ[6] मे श्रुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे मोऽपहृथा इति वायुमवोचत् ॥७॥ तं तथैवागतं वायुः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥८॥ यद्वाव मे त्वयी[7]-

---

१ऽप-। २ प्र-। ३-क्तो। ४ (अ) वधिः। ५ संर्भूद। ६ प्राणापानौ। ७ त्वयी॥

आह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥९॥ किं नु ते मयीति । आख्यापनौ मे श्रुतस्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै वायुः पुनर्ददाति ॥१०॥ तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । अन्तरिक्षलोकमिति । तमन्तरिक्षलोकमभिप्रवहति ॥११॥ तं तथैवाऽऽगतमन्तरिक्ष लोकः प्रति नन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥१२॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१३॥ किं नु ते मयीति । अयमम आकाशः स मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तमस्मा आकाशमन्तरिक्ष लोकः पुनर्ददाति ॥१४॥ तमाह प्र मा वहेति ॥१५॥३२१॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

किमभीति । दिश इति । तं[1] दिशोऽभिप्रवहति ॥१॥ तं तथैवागतं दिशः प्रतिनन्दत्ययं[2] ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । श्रोत्रमिति । तदस्मै श्रोत्रं दिशः पुनर्ददति ॥४॥ तमाह प्र मा वहतेति । किमभीति । अहोरात्रयोर्लोकमिति । तमहोरात्रयोर्लोकमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतमहोरात्रे प्रतिनन्दतोऽयं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव

१—तू । २—दति ॥

मे युवयोरित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तमिति ॥७॥ किं नु त आवयोरिति । अक्षितिरिति । तामस्मा अक्षितिमहोरात्रे पुनर्दत्तः ॥८॥ ते आह प्र मा वहतमिति ॥९॥३।२२॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

किमभीति । अर्धमासानिति । तमर्धमासानभिप्रवहतः ॥१॥ तं तथैवागतमर्धमासाः प्रतिनन्द[२]न्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि क्षुद्राणि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे प्रति संधत्तेति । तान्यस्यार्धमासाः पुनः प्रति संद[३]धाति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । मासानिति । तम्मासानभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतम्मासाः प्रतिनन्द[२]न्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि स्थूलानि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे प्रति संधत्तेति । तान्यस्य मासाः पुनः प्रति संदधाति ॥८॥ तानाह प्र मा वहतेति ॥९॥३।२३॥

पञ्चमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

---

१ ज्ञास्ति । २–न्दति । ३–धाति, लाल रंग से शोधा हुआ है॥

किमभीति । ऋतूनिति । तमृतूनभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतमृतवः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि ज्यायांसि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु तानि मे प्रतिसंधत्तेति । तान्यस्यर्तवः पुनः प्रतिसंदधति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । संवत्सरमिति । तं संवत्सरमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं संवत्सरः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति । अयमम्म आत्मा । स मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति । तमस्मा आत्मानं संवत्सरः पुनर्ददाति ॥८॥ तमाह प्र मा वहेति ॥९॥३।२४॥

पञ्चमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

किमभीति । दिव्यान् गन्धर्वानिति तं दिव्यान् गन्धर्वानभिप्रवहंति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतं दिव्या गन्धर्वाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति ।

---

१ तै । २ त्वची । ३ वहते ॥

१ त ।

गन्धो[२] मे मोदो मे प्रमोदो मे । तन्मे युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति तदस्मै दिव्या गन्धर्वाः पुनर्ददति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । अप्सरस इति । तमप्सरसोऽभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतमप्सरसः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्भाव[३] मे युष्मास्वित्याह तद्भाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । हसो मे क्रीळा मे मिथुनम्मे । तन्मे युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति । तदस्मा अप्सरसः पुनर्ददति ॥८॥ ता आह प्र मा वहतेति ॥९॥३।२५॥

पञ्चमेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

किमभीति । दिवमिति । तं दिवमभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतं द्यौः[१] प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥२॥ यद्भाव मे त्वयीत्याह तद्भाव मे पुनर्देहीति ॥३॥ किं नु ते मयीति । तृप्तिरिति । सकृत्तृप्तेव ह्येषा । तामस्मै तृप्तिं द्यौः पुनर्ददाति ॥४॥ तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । देवानिति । तं देवानभिप्रवहति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं देवाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्भाव मे युष्मास्वि-

२ गन्धर्वो । ३ युयद्‌ ॥

१ द्यौ ।

त्वाह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । अमृतमिति ।
तदस्मा अमृतं देवाः पुनर्ददति[२] ॥८॥ तानाह प्र मा वहतेति ॥९॥ १२९ ॥

पञ्चमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

किमभीति । आदित्यमिति । तमादित्यमभिप्रवहन्ति ॥१॥ स
आदित्यमाह विभूः पुरस्तात्सम्पत्[१] पश्चात् । सम्यङ्[२] त्वमसि ।
समीचो मनुष्यानरोचिषी[३] रुपतस्त आपिः पाप्मानं हन्ति । अपहत-
पाप्मा भवति यस्त्वै[४]वं[५] वेद ॥२॥ सम्भूर्दे[६]वोऽसि समहम्भूयासम् ।
आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि[७] भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा
उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते ता दिशामि ॥४॥ ओजो
मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इत्यादित्यमवोचत् ॥५॥
तं तथैवाऽऽगत[८]मादित्यः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह
नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देही-
ति ॥७॥ किं नु ते मयीति[९] । ओजो मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे
त्वयि[१०] । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मा आदित्यः पुनर्ददाति ॥८॥
तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । चन्द्रमसमिति[११] । तं चन्द्रमसमभि-

---

२–ददाति ॥

१–सत् । २ सम्यर्ङ् । ३ अरोतिषि 'ति' काट से कटा हुआ है, ।
। ४ त्व । ५ एवम । ६–भूतिर् । ७ भूतिइ । ८ ऽऽगता । ९ नास्ति ।
१० त्वीयी, त्वी यीति । ११ चंद्र–

प्रवहति ॥९॥ स चन्द्रमसमाह सत्यस्य पन्था न त्वा[12] जहाति[13]।
अमृतस्य[14] पन्था न त्वा जहाति ॥१०॥ नवो नवो भवसि जाय-
मानो भरो नाम ब्राह्मण उपास्से। तस्मात्ते सत्या उभये देवमनुष्या
अन्नाद्यम्भरन्ति। अन्नादो भवति यस्त्वेवं वेद ॥११॥ सम्भूर्देवो-
ऽसि समहम्भूयासम्। आभूतिरस्याभूयासम्। भूतिरसि
भूयासम् ॥१२॥ यास्ते प्रजा उपादिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि।
उप ते ता दिशामि ॥१३॥ मनो मे रेतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भू-
तिर्मे[15][16] तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इति चन्द्रमसमवोचत् ॥१४॥ तं
तथैवाऽऽगतं चन्द्रमाः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः। सह नावयं
लोक इति॥१५॥यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति॥१६॥
किं नु ते मयीति। मनो[17] मे रेतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भूतिर्मे[18]। तन्मे
त्वयि। तन्मे पुनर्देहीति। तदस्मै चन्द्रमाः पुनर्ददाति ॥१७॥
तमाह प्र मा वहेति ॥१८॥३२७॥

पञ्चमेऽनुवाके ऽष्टमः खण्डः।

किमभीति। ब्रह्मणो[1] लोकमिति। तमादित्यमभिप्रवहति ॥१॥
स आदित्यमाह प्र मा वहेति। किमभीति। ब्रह्मणो[2] लोकमिति।

---

११ चैन्नू-। १२ वा। १३-त्स। १४ नास्ति, अमृतस्य पन्था
...........देवोऽसि समहम्। १५-ति। १६ मे, म। १७ किं नु॥
१ प्रथमो। २ ब्राह्-।

पुम[6] आस । स तस्या एतत् सामाब्रवीत् । तेन स ऋषीणामुद्-
गायत् । त एत[7] ऋषयो धूतशरीरा इति ॥३॥ एतेनो एव
साम्नेति होवाच प्रजापतिर्देवानामुदगायत् । त एत उपरि देवा
धूतशरीरा इति ॥४॥ तस्मिन् हैनमनुशशास । तं हानुशिष्यो-
वाच[8] यस्स्मैवैतत् साम विद्यात् स स्मैव त उद्गायत्विति ॥५॥ स
हानुशिष्ट[9] आजगाम । स ह स्म कुरुपञ्चालानां[10] ब्राह्मणाननुपपृ-
च्छमानश्चरति ॥६॥३॥३०॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

व्यूढच्छन्दसा वै द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि[1] । स यो[2]
वस्तत्[3]साम वेद[4] यदहं वेद स एव म उद्गास्यति । मीमांसध्वमिति
॥१॥ तस्मै ह मीमांसमानानामेकश्चन [न] सम्प्रत्यभिदधाति
॥२॥ स ह तथैव पल्ययमानश्[5]श्मशाने[6] वा वने[7] वाऽऽहृतशिया[8]-
नमुपाधावयांचकार । तं ह धायमानः प्रजहौ ॥३॥ तं हो-
वाच कोऽसीति । ब्राह्मणोऽस्मि प्रातृदो भाल्ल इति ॥४॥ स किं
वेत्थेति । सामेति ॥५॥ ओमिति होवाच । व्यूढच्छन्दसा वै
द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि[10] । स यदि तत्साम वेत्थ यदहं वेद[11] त्व-

---

६ भा । ७ ते । ८ चे । ९–ष्टा । १०–पाञ्चे–।

१–क्ष्यम–। २ यदि । ३ त्वम । ४ नेत्थ । ५ श्मश्मनाम । ६ धात्र;माध । ७ न ।
८ तव,उप । ९–नाय,न, आयान । १०–क्ष्यम–। ११ 'यदहं वेत्थ' अधिक है ।

मेव म[12] उद्गास्यासि । मीमांसस्वेति ॥६॥ तस्मै ह मीमांसमानस्त-
देव[13] सम्मत्याभिदधौ ॥७॥ तं होवाचाऽयम्म उद्गास्यतीति[14] ॥८॥
तस्मै ह कुरुपञ्चालानाम्[15] ब्राह्मणा असूयन्त[16] आहुरेषु ह वा अयं
कुल्येषु[17] सत्सूद्गास्यति[18] । कस्मा अयमलमिति[19] ॥ ९ ॥ अलम्[20] न्वै
मह्यमिति हस्माऽह । सैवाऽलम्मस्याऽलम् मतायैद्गतस्य ह्याऽल-
मेवो[21]ज्जगौ[22] । तस्मादालम्यैलाजोद्गातेत्याख्यापयन्ति ॥१०॥३।३१॥

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तद्ध सात्यकीर्ता आहुर्या वयं देवतामुपास्महएकमेव वयं तस्यै देवतायै रूपं गव्यादिशाम एकं वाहन एकं हस्तिन्येकम्पुरुष एकं सर्वेषु भूतेषु । तस्या एवेदं देवतायै सर्वं रूपमिति ॥१॥ तदेतदेकमेव रूपम्प्राण एव । यावद्ध्येव प्राणेन प्राणिति तावद्रूपम्भवति तद्रू[1]-पम्भवति ॥२॥ तदथ यदा प्राण उत्क्रामति दार्वेवेव[2] भूतो[3]ऽनर्थ्यः[4] परिशिष्यते न किंचन रूपम् ॥३॥ तस्यान्तरात्मा तपः । तस्मा-त्तप्यमानस्योष्णतरः प्राणो भवति ॥४॥ तपसोऽन्तरात्माग्निः । स निरुक्तः । तस्मात्स दहति[5] ॥५॥ अथाधिदेवतम्[6] । इयमेवैषा

१२–ति से ठीक किया हुआ । १३ 'स' अधिक है । १४ नास्ति 'इति' ।
१५–पाञ्च– । १६ आसू– १७ कुलेषु । १८ ऽगास– । १९ अर्णम । २० न्वै इसके आगे 'म' लाल रंग में कटा हुआ है । २१ 'म' अधिक है । २२ एवौ ॥
१ पद्रू । २ एवो । ३–प । ४–थः । ५ दति । ६–दैव– । ७–पु–

देवता योऽयम्पवते। तस्मिन्नेतस्मिन्नापोऽन्तः। तद्भ्रम। सोऽस्त्र उपासितव्यः। यदस्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽस्त्रः ॥६॥ तस्यान्तरात्मा तपस्। तस्मादेष आतपत्युष्णतरः पवते ॥७॥ तपसोऽन्तरात्मा विद्युत्। स निरुक्तः। तस्मात्सोऽपि दहति ॥८॥ तानि वा एतानि चत्वारि साम प्राणो वाङ्मनस्स्वरः। स एष प्राणो वाचा करोति मनो नेत्रः। तस्य स्वर एव प्रजाः। प्रजावान् भवति य एवं वेद ॥९॥३।३२॥

षष्ठेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः।

स यो वायुः प्राण एव सः। योऽग्निर्वागेव सा। यश्चन्द्रमा मन एव तद्। य[1] आदित्यस्स्वर एव सः। तस्मादेतमादित्यमाहुस्स्वर एतीति ॥१॥ स यो ह वा अमूर्देवता उपास्ते या अमूरधिदेवतं दूरूपा[2] वा एता दुरनुसम्प्राप्या[3] इव। कस्तद्वेद यद्येता अनु वा सम्प्राप्नुयान्न वा ॥२॥ अथ य एना अध्यात्ममुपास्ते स हाऽन्तिदेवो भवति। निर्जीर्यन्तीव वा[4] इत एता। [त] अस्य वा एतास्शरीरस्य सह प्राणेन निर्जीर्यन्ति। क उ एव तद्वेद यद्येता अनु वा सम्प्राप्नुयान्न वा[5] ॥३॥ अथ य एना उभयीरेकधा[6] भव-

---

* 'उपासितव्यो (!) यदस्मिन्नापोऽन्तम्—तस्मात्सोऽपि दहति' छोड़ना पड़ा है॥

१ यदा। २–रूपं। ३–आपा। ४ वा। ५ वं। ६ उभेधीर्।

र्वेद स एवामुष्या साम वेद स आत्मानं वेद स ब्रह्मवेद ॥४॥ तदाहुः प्रादेशमात्राद्वा इत एता एकम्भवन्ति । अतो ह्ययम्प्राणस्स्वर्य्य उपर्युपरि वर्तन इति ॥५॥ अथ हैक आहुश्चतुरंगुलाद्वा इत एता एकम्भवन्तीति । अतो ह्येवायम्प्राणस्स्वर्य्य उपर्युपरि वर्तत इति ॥६॥ स एष ब्राह्मण आवर्तः । स य एवमेतम्ब्रह्मण आवर्तं वेदाऽभ्येनम्प्रजाः पशव आवर्तन्ते सर्वमायुरेति ॥७॥ स यो हैवं विद्वान्प्राणेन प्राण्याऽपानेनाऽपान्य मनसैता उभयोर्देवता आत्मन्येत्य मुख आधत्ते तस्य सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितम्। न हास्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥८॥३॥३॥

षष्ठेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

तदेतन्मिथुनं यद्वाक्च प्राणश्च । मिथुनमृक्सामे । आचतुरं वाव मिथुनम्प्रजननम् ॥१॥ तद्यत्राऽद आह सोमः पवत इति वीपावर्तध्वमिति वा तत्सहैव वाचा मनसा प्राणेन स्वरेण हिङ्कुर्वन्ति । तद् हिङ्कारेण मिथुनं क्रियते ॥२॥ सहैव वाचा मनसा प्राणेन स्वरेण निधनमुपयन्ति । तन्निधनेन मिथुनं क्रियते ॥३॥ तत्सप्तविधं साम्नः । सप्तकृत्व उद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं च शरीरात्प्रजनयति ॥४॥ यादृशस्यो ह वै रेतो भवति तादृशं

७-म । ८ स्वर्य्य । ९-रि (!) । १०-र्त्ते इदृ । ११ ब्राह्मण ॥
१ पाप । २-कार । ३-त्वा ।

सम्भवति यदि वै पुरुषस्य पुरुष एव यदि गोर्गौरेव यद्यश्वस्याश्व एव यदि मृगस्य मृग एव । यस्यैव रेतो भवति तदेव सम्भवति ॥५॥ तद्यथा ह वै सुवर्णं हिरण्यमग्नौ प्रास्यमानं[५] कल्याणतरं कल्याणतरम्भवति एवमेव कल्याणतरेण कल्याणतरेणात्मना सम्भवति य एवं वेद ॥६॥ तदेतदृचाभ्यनूच्यते[४] ॥७॥३॥२५॥

षष्ठेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चितः । समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ॥१॥ पतङ्गमक्तमिति । प्राणो वै पतङ्गः । पतन्निव ह्येष्वङ्गेष्वेति रथमुदीक्षते[२] । पतङ्ग इत्याचक्षते ॥२॥ असुरस्य माययेति । मनो वा असुरम् । तद्ध्यसुषु रमते । तस्यैष माययाक्तः ॥३॥ हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चित इति । हृदैव[५] ह्येतं[६] पश्यन्ति यन्मनसा विपश्चितः ॥४॥ समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षत इति । पुरुषो वै समुद्र एवंविद उ कवयः । त[७] इमम्पुरुषेऽन्तर्वाचं विचक्षते ॥५॥ मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति । मरीच्य इव वा एता देवता यदग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥६॥ न ह

---

४ ऋच्या । ५-स्या-॥

१ प्रक्तम । २-नाः । ३-प । ४ त । ५ हृ । ६ एवं । ७ स।

या एतासां देवतानाम्पदमस्ति । पदेनो ह वै[8] पुनर्मृत्युरन्वेति ॥७॥ तदेतदनन्वितं साम पुनर्मृत्युना । अति पुनर्मृत्युं तरति य एवं वेद ॥८॥३।३५॥

षष्ठेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

पतङ्गो वाचम्मनसा बिभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे[1] अन्तः । तां द्योतमानां[2] स्वर्यम्मनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति इति ॥१॥ पतङ्गो वाचम्मनसा बिभर्तीति । प्राणो वै पतङ्गः । स इमां वाचम्मनसा बिभर्ति ॥२॥ तां गन्धर्वोऽवदद्[3]गर्भे अन्तरिति । प्राणो वै गन्धर्वः पुरुष उ गर्भः । स इमाम्पुरुषेऽन्त[4]र्वाचं वदति ॥३॥ तां द्योतमानां स्वर्यम्मनीषामिति । स्वर्या ह्येषा मनीषा यद्वाक् ॥४॥ ऋतस्य पदे कवयो निपान्तीति । मनो वा ऋतमेवंविद उ कवयः । ओमित्येतदेवाक्षरमृतम्[6] । तेन यद्वचम्मीमाँसन्ते यथाजुर्वत्साम तदेनां निपान्ति ॥५॥३।३६॥

षष्ठेऽनुवाकेऽष्टमः खण्डः ।

---

८ वे ।

१—णो । २—प्रा । ३ वदति । ४ अन्त— । ५—ऋ । ६ 'चरमृतम्' के आगे 'ओमित्ये—मृतम्' है ॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम् ।

स[1] सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान आ वरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तर् इति ॥१॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमिति । प्राणो वै गोपाः । स हीदं सर्वमनिपद्यमानो गोपायति ॥२॥ आ च परा च पथिभिश्चरन्तमिति । तद्ये च ह वा इमे प्राणा अमी च रश्मय एतैर्ह वा एष एतदा च परा च पथिभिश्चरति ॥३॥ स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान इति । सध्रीचीश्च ह्येष एतद्विषूचीश्च प्रजा वस्ते[2] ॥४॥ आ वरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तरिति । एष ह्येवैषु भुवनेष्वन्तरावरीवर्त्ति ॥५॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति नैवोद्गातुश्चोपगातॄणां[3] च विज्ञायते । इत एवोर्ध्वे[4]स्वरन्देति । स उपरि मूर्ध्नो लेलायति ॥६॥ स विद्यादागमादिन्द्रो[5] नेह कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशेक्ष्यत[6] इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशिष्यते ॥७॥ तदेतदभ्रातृव्यं[7] साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव [न] कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते[8] य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥८॥३॥३७॥

षष्ठेऽनुवाके नवमः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१—रीच्–इस पाद के प्रारम्भ में 'प्रति' ऐसा अधिक है। २ वस्ते। ३—तॄणा–। ४—र्ध्व । ५ आगाद् । ६ परिषे–। ७ पल । ८ भ्र–॥

प्रजापतिर्ब्रह्माऽसृजत । तमपश्यमभुखमसृजत ॥१॥ तमप्रपश्यमभुखं शयानम्ब्रह्माऽऽविशत् । पुरुष्यं तत् । प्राणो वै ब्रह्म । प्राणो वावैनं तदाविशत् ॥२॥ स उदतिष्ठत् प्रजानां जनयिता । तं रक्षांस्यन्वसचन्त ॥३॥ तमेतदेव साम गायत्रत्रायत । यद्गायत्रत्रायत तद्गायत्रस्य गायत्रत्वम् ॥४॥ त्रायत एनं सर्वस्मात्पाप्मनो मुच्यते य एवं वेद ॥५॥ तमुपाऽस्मै गायता नर इत्यृचाऽऽश्रवणीयेनोपागायन् ॥६॥ यदुपाऽस्मै गायता नर इति तेन गायत्रमभवत् । तस्मादेषैव प्रतिपत्कार्या ॥७॥ पवमानायेन्दावा अभि देवमिया-हुम-भाह्वाता इति षोडशाक्षराण्यभ्यगायन्त । षोडशकलं वै ब्रह्म । कलाश एवैनं तद्ब्रह्माऽऽविशत् ॥८॥ तदेतच्चतुर्विंशत्यक्षरं गायत्रम् । अष्टाक्षरः प्रस्तावः । षोडशाक्षरं गीतं तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यर्धमासस्संवत्सरः । संवत्सरस्साम ॥९॥ ता ऋचश्शरीरेण मृत्युरन्वैतत् । तद्यच्छरीरवत्तन्मृत्योराप्तम् । अथ यदशरीरं तदमृतम् । तस्याऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोत ॥१०॥ ३।३८॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ मुख-। २ अप्रव्-। ३-षं । ४-आस्य् । ५ अनुसच्-। ६ गायत्रैन । ७ अवसीय्-। ८ ऽपेगा-। १०-साम । ११ प्रास्त्-। १२ सद्य । १३-पत । १४-सास् ॥

ओवा३योवा३योवा३ष् हुम्भा ओवा इति षोडशाक्षरा-
क्षरम्यगायत । षोडशकलो वै पुरुषः । कलाश्च एवास्य तत्करी-
रायषनुवोद ॥१॥ स एषोऽपहतपाप्मा धूतशरीरः । तदेनिरुक्ता-
क्षरेणिदुदासंगायतो इत्युदास । आ इति आदधाद् । वागिति
तद्ब्रह्म । तदिदन्तरिक्षं सोऽयं वायुः पवते । हुमिति चन्द्रमाः ।
भा इत्यादित्यः ॥२॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भातीत्याच-
क्षते ॥३॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोरभ्रमित्याचक्षते ॥४॥
एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोः कुभ्रमित्याचक्षते ॥५॥ एतस्य
ह वा इदमक्षरस्य क्रतोश्शुभ्रमित्याचक्षते ॥६॥ एतस्य ह वा
इदमक्षरस्य क्रतोर्दृषभ इत्याचक्षते ॥७॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य
क्रतोर्दर्भ इत्याचक्षते ॥८॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्यो
यावीत्याचक्षते ॥९॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोस्सम्भवतो-
त्याचक्षते ॥१०॥ यदस्ति च आ३ इति च आ३ इति स तदेव
मिथुनं वाकस्य । स मिथुनेन जायते य एवं वेद ॥११॥
३।१२॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

१—भा । २ क्रतु—३ सर्वत्र येस्य पाठ । ४—भा । ५ हुषभ—६ दूभ, सम्भवती । ७ य भेती । ८ भ्र ॥

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन देवा एतेनर्षयः ॥१॥ तदेतद्ब्रह्म प्रजापतयेऽब्रवीत् प्रजापतिः परमेष्ठिने प्राजापत्याय परमेष्ठी प्राजापत्यो देवाय सवित्रे देवस्सविताऽग्नयेऽग्निरिन्द्रायेन्द्रः काश्यपाय काश्यप ऋश्यशृङ्गाय काश्यपाय ऋश्यशृङ्गः काश्यपो देवतरसे श्यावसायनाय[2] काश्यपाय देवतराः श्याव-सायनः काश्यपश्शुषाय वाह्नेयाय[3] काश्यपाय शुषो वाह्नेयः[4] काश्यप इन्द्रोताय[5] दैवापाय शौनकायेन्द्रोतो दैवापश्शौनको[6] दृतय ऐन्द्रोतये शौनकाय दृतिरैन्द्रोतिश्शौनकः पुलुषाय प्राचीनयोग्याय पुलुषः प्राचीनयोग्यस्सत्ययज्ञाय पौलुषये प्राचीनयोग्याय सत्य-यज्ञः पौलुषिः प्राचीनयोग्यस्सोमशुष्माय सात्ययज्ञाय प्राचीन-योग्याय सोमशुष्मस्सात्ययज्ञिः प्राचीनयोग्यो हृत्स्वाशयायाल्ल[7]-केयाय माहावृषाय राज्ञे हृत्स्वाशय आल्लकेयो माहावृषो राजा जनश्रुताय[8] काण्ड्विय्याय जनश्रुतः काण्ड्वियस्सायकाय जानश्रुते-याय काण्ड्विय्याय सायको जानश्रुतेयः काण्ड्वियो नगरिणे जानश्रुतेयाय काण्ड्विय्याय नगरी जानश्रुतेयः काण्ड्विय[10]...

---

१ 'काश्यपो' अधिक है । २ श्यावसाय । ३ शूषो, शुषो । ४, आह्ने । ५ इन्द्रात- । ६-पिश । ७ आक्रू- । ८ तु 'सत्वाचकि प्राचीनयग्यो हृत्स्वा' अधिक है । ९ जानुश्रु-, आनश्रु- । १० धिरा- ।

श्राव्यायनय[११] आत्रेयाय शङ्खश्शाव्यायनिरात्रेयो रामाय क्रातुजाते-
याय वैयाघ्रपद्याय रामः क्रातुजातेयो वैयाघ्रपद्यः—॥२॥३।४०॥

सप्तमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—शङ्खाय बाभ्रव्याय शङ्खो बाभ्रव्यो दत्ताय कासायनय[१]
आत्रेयाय दत्तः कासायनिरात्रेयः कँसाय वारकये कँसो वारकिः
प्रोष्ठपादाय[२] वारक्याय प्रोष्ठपादो वारक्यः कँसाय वारक्याय[३]
कँसो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यः कुबेराय
वारक्याय कुबेरो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो
जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय[४] पाराशर्याय
सुदत्तः पाराशर्योऽषाढायोत्तराय[५] पाराशर्यायाऽषाढ[५] उत्तरः पारा-
शर्यो विपश्चिते शकुनिमित्राय पाराशर्याय विपश्चिच्छकुनिमित्रः
पाराशर्यो जयन्ताय पाराशर्याय जयन्तः पाराशर्यः—॥१॥३।४१॥

सप्तमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

—श्यामजयन्ताय लौहित्याय श्यामजयन्तो लौहित्यः पञ्जि-
गुप्ताय लौहित्याय पञ्जिगुप्तो लौहित्यस्सत्यश्रवसे लौहित्याय[१] सत्य-

---

११—नाय ।

१—नाय, कात्याजय—। २ वर—। ३ प—। ४ सुदत्ता, सुदत्ताय ।
५ सम् (?), षाढ्—॥

१ लोह—।

श्रवा लौहित्यः कृष्णधृतये सातकये कृष्णधृतस्सातकश्श्याम-सुजयन्ताय लौहित्याय श्यामसुजयन्तो लौहित्यः कृष्णदत्ताय लौहित्याय कृष्णदत्तो लौहित्यो मित्रभूतये लौहित्याय मित्रभूति[2] लौहित्यश्श्यामजयन्ताय लौहित्याय श्यामजयन्तो लौहित्यस्त्रि-वेदाय कृष्णराताय लौहित्याय त्रिवेदः कृष्णरातो लौहित्यो यशस्विने जयन्ताय लौहित्याय[3] यशस्वी जयन्तो लौहित्यो जयकाय लौहित्याय जयको लौहित्यः कृष्णराताय लौहित्याय कृष्णरातो लौहित्यो दक्षजयन्ताय लौहित्याय दक्षजयन्तो लौहित्यो विपश्चिते दृढजयन्ताय लौहित्याय विपश्चिद्दृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्चिताय[4] दार्ढजयन्तये दृढजयन्ताय लौहित्याय वैपश्चितो दार्ढ-जयन्तिर्[5]दृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये गुप्ताय लौहित्याय ॥१॥ तदेतदमृतं गायत्रमथ यान्यन्यानि गीतानि काम्यान्येव तानि काम्यान्येव तानि ॥२॥३।४२॥

सप्तमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः। सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः॥

२–ति। ३ 'श्यामजयन्तो लौहित्याय' अधिक है। ४ वैपिप्–।
५–दृ॥

[चतुर्थोऽध्यायः]

श्वेताश्वो दर्शतो हरिनीलोऽसि हरितस्पृशस्समानबुद्धो मा हिंसीः । न मां त्वं वेत्थ मद्रुच ॥१॥ यदभ्यवचरणो[1]ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदमश्ममयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥२॥ यदभ्यवचरणो[1]ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमको विदमयस्मयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥३॥ यदभ्यवचरणो[3]ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं लोहमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥४॥ यदभ्यवचरणो[3]ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं[4] रजतमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥५॥ यदभ्यवचरणो[1]ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं सुवर्णमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥६॥

आयुर्माता[5] मतिः पिता नमस्त आविशोपण ।

अंहो नामाऽसि विश्वायुस्तस्मै ते विश्वाहा[6] नमो

नमस्ताभाय नमो वरुणाय[7] नमो जिघांसते ॥७॥ यक्ष्म राजन्मा[8] मां हिंसीः । राजन् यक्ष्म मा हिंसीः । तयोस्संविदानयोस्सर्वमायुर-[1]वान्वहम ॥८॥४।१॥

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

१–वा । २ इति अश्ममयेन । ३ यथायथ । ४ संक्षेप है । ५ मातम । ६–वाहाय । ७ रुणाय । ८ मं ॥

पुरुषो वै यज्ञः ॥१॥ तस्य यानि चतुर्विंशतिवर्षाणि[1] तत्प्रात-
स्सवनम् । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री । गायत्रम्प्रातस्सवनम् ॥२॥
तद्वसूनाम् । प्राणा[2] वै वसवः । प्राणा हीदं सर्वं वस्वाददते ॥३॥
स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत्स[3] ब्रूयात्प्राणा वसव इदम्मे
प्रातस्सवनं माध्यन्दिनेन सवनेनानुसंतनुतेति । अगदो हैव
भवति ॥४॥ अथ यानि चतुश्चत्वारिंशतं वर्षाणि[4] तन्माध्यन्दिनं
सवनम् । चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् । त्रैष्टुभं माध्यन्दिनं
सवनम् ॥५॥ तद्रुद्राणाम् । प्राणा वै रुद्राः । प्राणा हीदं सर्वं
रोदयन्ति ॥६॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत स
ब्रूयात्प्राणा रुद्रा इदम्मे माध्यन्दिनं सवनं तृतीयसवनेनानुसंत-
नुतेति । अगदो हैव भवति ॥७॥ अथ यान्यष्टाचत्वारिंशतं
वर्षाणि तत् तृतीयसवनम् । अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती । जागतं
तृतीयसवनम् ॥८॥ तदादित्यानाम् । प्राणा वा आदित्याः ।
प्राणा हीदं सर्वमाददते ॥९॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदु-
पद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा आदित्या इदम्मे तृतीयसवनमायुषानु-
संतनुतेति । अगदो हैव भवति ॥१०॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण

१–ति । २–णा । ३ वे अधिक है । ४ वर्षाणि ।

उवाच महिदास ऐतरेय उपतपाति किमिदमुपतपासि योऽहमनेनो-
पतपता न प्रेष्यामीति । स ह षोडशशतं वर्षाणि जिजीव । प्र ह
षोडशशतं वर्षाणि जीवति नैनम्प्राणस्साम्यायुषो जहाति य एवं
वेद ॥२१॥४।२॥

द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

त्र्यायुषं कश्यपस्य जमदग्नेस्त्र्यायुषम् ।
त्रीण्यमृतस्य पुष्पाणि त्रीण्यायूंषि मेऽकृणोः ॥१॥
स नो मयोभूः पितवाविशस्व शान्तिको यस्तनुवे स्योनः ॥२॥
येऽग्नयः पुरीष्याः प्रविष्टाः पृथिवीमनु ।
तेषां त्वमस्युत्तमः प्र णो जीवातवे सुव ॥३।४।३॥

तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

अरण्यस्य वत्सोऽसि विश्वनामा विश्वाभिरत्त्वणोऽपाम्पक्वो-
ऽसि वरुणस्य दूतोऽन्तर्धिनाम ॥१॥ यथा त्वममृतोमर्त्येभ्योऽन्तर्हितो-
ऽस्येवं त्वमस्मानघायुभ्योऽन्तर्धेहि । अन्तर्धिरसि स्तेनेभ्यः ॥२॥४।४॥

चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

५ सम्य् ॥
१ त्रियायु- । २ त्रीणो । ३ ण्यायुंषि । ४-तो । ५ न्तोका ।
६ य । ७-षां । ८ प्रा ।
१ विश्वोन्-र्षे । २-त्त्वमा । ३ ऽदूर्धँनाम । ४ त । ५ मर्त्तेभ्यो ॥

ब्युषि सविता भवस्युदेष्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुष उदितो बृहस्पति-रभिप्रयन्मघवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह्ण[2] उग्रो देवो लो-हितायन्नस्तमिते यमो भवसि ॥१॥ अभ्रस्तु सोमो राजा निशाया-म्पितृराजस्स्वप्ने[3] मनुष्यान्प्रविशसि पयसा पशून् ॥२॥ विरात्रे भवो भवस्यपररात्रेऽङ्गिरा अग्निहोत्रवेलायाम्भृगुः ॥३॥ तस्य[4] तदे-तदेव मण्डलमूधः । तस्यैतौ स्तनौ यद्वाक् च प्राणश्च । ताभ्या-म्मेधुक्त्वाऽध्यायम्ब्रह्मचर्यम्प्रजाम्पशून्[5] स्वर्गं लोकं सजातवन-स्याम् ॥४॥ एता आशिष[6] आशासे । भूर्भुवस्स्वः । उदिते शुक्रमा-दिश[7] । तदात्मन्दधे ॥५॥४।५॥

पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

भगेरथो हैक्ष्वाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाण आस ॥१॥ तदु[1] ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा ऊचुर्भगेरथो ह वा अयमैक्ष्वाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाणः[2] । एतेन[3] कथां वादिष्याम इति ॥२॥ तं हाऽभ्येयुः[4] । तेभ्यो हाऽभ्यागतेभ्योऽपचितीश्चकार ॥३॥ अथ हैषां स भाग आवव्राजोप्त्वा[5] केशश्मश्रूणि नखान्निकृत्याऽऽज्ये-

---

१–श्रो । २ पराह्णे । ३–ज । ४ त । ५–य । ६ आसिष । ७ आदिष ॥

१–पाञ्च–। २ यक्ष्म–। ३ एततेन । ४ 'भा' अधिक है । ५ उपत्वा

नाऽभ्यस्य दण्डोघानहम्भिभ्रत् ॥४॥ तान् होवाच ब्राह्मणा भगवन्तः कतमो वस्तद्वेद यथाऽऽश्रावितमत्याश्राविते देवान् गच्छत इति ॥५॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यद्विदुषस्सूद्गाता सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति ॥६॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यच्छन्दाँसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि संस्तुतान्यभि-सम्पद्यन्त इति ॥७॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥८॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति ॥९॥४।६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतान् हैनान् पञ्च प्रश्नान् पप्रच्छ ॥१॥ तेषां ह कुरुपञ्चा-लानाम्बको[1] दाल्भ्योऽनूचान आस ॥२॥ स होवाच यथाऽऽश्रा-वितमत्याश्राविते देवान् गच्छत इति प्राच्यां[६] वै राजन् दिश्या-श्रावितमत्याश्राविते देवान् गच्छतः । तस्मात्प्राङ्[2]तिष्ठन्नाश्रावयति प्राङ् तिष्ठन्प्रत्याश्रावयतीति ॥३॥ अथ होवाच यद्विदुषस्सूद्गाता सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत[3] इति यो वै मनुष्यस्य सम्भूतिं वेदेति होवाच तस्य सूद्गाता सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषवि-

६ ज्या ॥
१—पाञ्च—। २ प्रत्यम—। ३ सम—। ६ प्रँच्—।

राजायत इति प्राणा उ ह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतिरेवेति[4] ॥४॥ अथ होवाच यच्छन्दांसि प्रयुज्यन्ते यतानि सर्वाणि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति गायत्रीमु ह वाव राजन् सर्वाणि छन्दांसि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति ॥५॥ अथ होवाच यथा गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति वषट्कारेणो ह वाव राजन गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥६॥ अथ होवाच[5] यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति–॥७॥४॥७॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

–यो वै गायत्र्यै मुखं वेदेति होवाच तं दक्षिणा प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति ॥१॥ अग्निर्ह वाव राजन् गायत्रीमुखम्। तस्माद्यदग्नाव[1]भ्यादधाति भूयानेव[2] स तेन भवति वर्धते। एवमेवैवं विद्वान्ब्राह्मणः प्रतिगृह्णन्भूयानेव भवति वर्धत उ एवेति ॥२॥ स होवाचाऽनूचानो वै किलाऽयम्ब्राह्मण आस। त्वामहमनेन यज्ञेनैमीति ॥३॥ तस्य वै ते तथोद्गास्यामीति होवाच यथैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेष्यसीति ॥४॥ तस्मा एतेन गायत्रेणो[3]द्गीथेनोज्जगौ। स हैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमियाय।

४ सम्भूतिवृघुर, सम्भूतिर्बर। ५ हे॥
१ अग्न्–। २–येन्। ३ गायत्र स्तो।

तेन[4] हैतेनैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेति [य एवं वेद] ॥५॥ ओं वा इति द्वे अक्षरे । ओं वा इति चतुर्थे । ओं वा इति षष्ठे । हुम्भा ओं वागित्यष्टमे ॥६॥ तेन हैतेन प्रतीदर्शो[5]ऽस्य भयदस्याऽऽसमात्यस्योज्जगौ ॥७॥ तं होवाच किं त आगास्यामीति । स होवाच हरीमे देवाश्वा वागायेति । तथेति । तौ हास्मा आजगौ । तौ हैनमाजग्मतुः ॥८॥ स वा एष उद्गीथः कामानां सम्पदों[6] वा३चों वा३चों वा३च् हुम् भा ओं वागिति । साङ्गो हैव स तनुरमृतस्सम्भवति य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥९॥४।८॥

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषो ह्युद्गीथः । अथैत एव मृत्यवो यदग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥१॥ ते ह पुरुषं जायमानमेव मृत्युपाशैरभिदधाति । तस्य वाचमेवाग्निरभिदधाति[1] प्राणं वायुश्चक्षुरादित्यश्श्रोत्रं चन्द्रमाः ॥२॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य[2] प्राणेभ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चतीति[3] ॥३॥ तद्यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य एवास्य वाचि मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥४॥ अथ यस्यैवं

४ लोक । ५—शो । ६ सम्पद् ॥

१ प्राणं । २ यजा—। ३ उन्मुञ्—।

विद्वानुद्गायति[४] य एवास्य प्राणे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥५॥
अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहराति[५] य एवास्य चक्षुषि[६] मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्निधनमुपैति[७][८] य एवास्य श्रोत्रे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणेभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुञ्चति[३] ॥८॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणेभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृणातीति ॥९॥४।९॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तद्यस्यैवं विद्वान्हिङ्करोति य एवास्य लोमसु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥१॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य एवास्य त्वचि[१] मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥२॥ अथ यस्यैवं विद्वानादिमादत्ते[२] य एवास्य माँसेषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥३॥ अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य स्नावसु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥४॥ अथ यस्यैवं विद्वान्प्रतिहरति य एवास्यास्थिषु[?] मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य एवास्यास्थिषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥६॥ अथ यस्यैवं

४–द्गा । ५ उद्गायति । ६ प्राणे । ७ नास्ति । ८ प्रतिहरति ॥
१ त्वच्–। २ या ।

विद्वान् निधनमुपैति य एवास्य मज्जसु मृत्युपाशस्स तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणेभ्योऽधि-मृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृणाति ॥८॥ तद्वा-वुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणेभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा दधातीति ॥९॥

स वा एष इन्द्रो वैमृध उद्यन् भवति सवितोदितो मित्रस्संगवकाले[३] इन्द्रो वैकुण्ठो मध्यन्दिने समावर्तमानश्शर्व उग्रो देवो लोहितायन् प्रजापतिरेव संवेशो[४]ऽस्तमितः ॥१०॥ तद्यस्यैवं विद्वान् हिङ्करोति य एवास्योद्यत[५]स्स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥११॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य एवास्योदितः स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१२॥ अथ यस्यैवं विद्वानादिमादत्ते य एवास्य संगवकाले[३] स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१३॥ अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य मध्यन्दिने[६] स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१४॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्यापराह्णे स्वर्गो लोकस्तस्मिन्ने-वैनं दधाति ॥१५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति[७] य[८] एवास्यास्तं-यत[५]स्स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्नि-

---

३ सङ्गमवकृ- । ४—५, -ओजमाकं गमा । ५ -मि । ६ माध्य- । ७ स । ८ ऐवा ।

जनमुपैति य एवास्यास्तमिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणेभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा[१] दधाति ॥१८॥४।१०॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

षड्[१] ह[२] वै देवतास्स्वयम्भुवोऽग्निर्वायुरसावादित्यः[३] प्राणोऽन्नं वाक् ॥१॥ ताश्श्रैष्ठ्ये[३][४] व्यवदन्ता[५]ऽहं[६] श्रेष्ठाऽस्म्यहं श्रेष्ठाऽस्म्य्[६]? [स्मि] मां श्रियमुपाध्वमिति ॥२॥ ता अन्योन्यस्यै[७] श्रेष्ठतायै नाऽतिष्ठन्त । ता अब्रुवन्न वा अन्योन्यस्यै[७] श्रेष्ठतायै तिष्ठामहे[८] एता[९] सम्प्रब्रवामहै यथा श्रेष्ठास्सम[६] इति ॥३॥ ता अग्निमब्रुवन्कथं त्वं[१०] श्रेष्ठोऽसीति ॥४॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्मुखमस्म्यहमन्यासाम्प्रजानाम् । मयाऽऽहुतयो हूयन्ते । अहं देवानामन्नं विकरो[११]म्यहम्मनुष्याणाम् ॥५॥ स यन्न[१२] स्यामसुखा एव देवास्स्युरमुखा अन्याः प्रजाः । नाऽऽहुतयो हूयेरन्[१३] । न देवानामन्नं विक्रियेत[१४] न मनुष्याणाम् ॥६॥ तत इदं सर्वम्परा-

---

१ सप्त ॥

१ षड्ढ । २ ह । ३-श्रा । ४-ठे । ५ व्यवदू- । ६ श्रेष्- । ७ आन्या- । ८-हे । ९ एत । १० त्वा । ११-कार- । १२ स्म । १३ हूयन्ते (!) चिह्न कर हुयरन् (!) किया गया । १४-य ।

भवेत्ततो न किंचन परिशिष्येतेति[15] ॥७॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह[18] किंचन परिशिष्येत यत्[16] त्वं न स्या इति ॥८॥ अथ वायुमब्रुवन्कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥९॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्प्राणोऽस्म्यह[17]मन्यासाम्प्रजानाम् । यस्मादहमुत्क्रामामि ततस्स प्रप्लवते ॥१०॥ स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किंचन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह किंचन परिशिष्येत[16] यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥४।१।॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथादित्यमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥१॥ सोऽब्रवीदहमेवोद्यन्नहर्भवाम्यहमस्तंयन्रात्रिः । मया चक्षुषा कर्माणि क्रियन्ते । स यदहं न स्यां नैवाहस्स्यान्न[1] रात्रिः । न कर्माणि क्रियेरन् ॥२॥ तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किंचन परिशिष्येतेति ॥३॥ एवमेवेति[2] होचुर्नैवेह किंचन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥४॥ अथ प्राणमब्रुवन् कथमु[3] त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥५॥ सोऽब्रवीत्प्राणो भूत्वाऽग्निर्दीप्यते । प्राणो भूत्वा वायुराकाशमनुभवति[4] । प्राणो भूत्वाऽऽदित्य उदेति । प्राणादन्नम्प्राणाद्वाक् ॥६॥ स यदहं न स्यां तत[5]

१५–ष्ये । १६ य । १७ अहहम् । १८ ऽव ह ॥
१ हंन । २ प । ३ उक् । ४ शंक– । ५ तत् (।) ।

इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किंचन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह किंचन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथाग्नि-मब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठमसीति ॥९॥ तदब्रवीन्मयि प्रतिष्ठायाग्निर्दी-प्यते। मयि प्रतिष्ठाय वायुराकाशमनुविभवाति। मयि प्रतिष्ठाया-दित्य उदेति। मदेव प्राणो मद्वाक ॥१०॥ स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किंचन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह किंचन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥ अथ वाचमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठासीति॥१३॥ साब्रवीन्मयैवेदं विज्ञायते मयाऽदः। स यदहं न स्यां नैवेदं विज्ञायेत नाऽदः ॥१४॥ तत इदं सर्वम्पराभवेन् नैवेह किंचन परिशिष्येतेति ॥१५॥ एवमेवे-ति होचुर्नैवेह किंचन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१६॥४।१२॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः।

ता अब्रुवन्नेता वै किल सर्वा देवताः। एकैकामेवानुस्मः। स यन्नु नस्सर्वासां देवतानामेकाचन न स्यात्त इदं सर्वम्परा-भवेत्ततो न किंचन परिशिष्येत। हन्त सार्धं समेत्य यच्छ्रेष्ठं

६ संक्षेप करते हैं। 'स (! न के स्थान में) स्या इति' यहां तक छोड़ दिया है। ७ इ-,त्य् (!) संक्षिप्त दिया है। ८-शिष्य। ९ तुर ॥

१-श्र। २ साम-।

तदसामेति ॥१॥ ता एतस्मिन् प्राण[3] ओकारे वाच्य[4]कारे समायन् ।
तद्यत्समायन् तत्साम्नस्सामत्वम् ॥२॥ ता अब्रुवन् यानि नो
मर्त्यान्यनपहतपाप्मान्यक्षराणि तान्युद्धृत्या[5]मृतेष्व[6]पहतपाप्मसु शुद्धे-
ष्वक्षरेषु गायत्रं गायामाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणेऽन्ने वाचि ।
तेनापहत्य[7] मृत्युमपहत्य[8] पाप्मानं[9] स्वर्गं लोकमियामेति ॥३॥ एषाग्नेर-
मृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । ग्निरित्यस्य मर्त्यमनपहतपाप्मा-
ऽक्षरम् ॥४॥ वेति वायोरमृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । युरित्यस्य
मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥५॥ एत्यादित्यस्याऽमृतमपहतपाप्म
शुद्धमक्षरम् । त्येत्यस्य[10] मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥६॥ प्रेति
प्राणस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम्[11] । णेत्यस्य[12] मर्त्यमनपहत
पाप्माक्षरम् ॥७॥ एत्यन्नस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । नमित्यस्य
मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥८॥ वेति वाचोऽमृतमपहतपाप्म शुद्ध-
मक्षरम् । गित्यस्यै मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥९॥ ता एतानि
मर्त्यान्यनपहतपाप्मान्यक्षराण्युद्धृत्याऽमृतेष्वपहतपाप्मसु[13] शुद्धेष्व-
क्षरेषु गायत्रमागायन्नग्नौ वायावादित्ये प्राणेऽन्ने वाचि । तेनाप-

---

३-णे । ४ वाच्य् । ५-र्त्ये । ६ अम-(!) । ७ येन । ८-त । ९-न । १० त्व इत्य् । ११ 'वेदिषाक्षो मृत' अधिक है पर लाल रङ्ग से काटा गया है । १२ ण इत्य् । १३-मासु ॥

हत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् ॥१०॥ अपहत्य मृत्यु-मपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥११॥४।१३॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ता अग्नाऽब्रुवन्त्वयि प्रतिष्ठायैतमुद्गच्छामेति । ता अग्नाऽब्रवी-दास्येन[1] प्राणेन युष्मानास्येन[2] प्राणेन मामुपागवायेति ॥१॥ ता एतेन प्राणेनौकारेण वाच्यकारमभिनिमेष्यन्त्यो[10] हिङ्काराद्धका-रमोकारेण वाचमनुस्वरन्त्य उभाभ्याम्प्राणाभ्यां गायत्रमगायन्नो-वा३चोवा३चोवा३च् हुम् भा वो वा इति ॥२॥ स यथोभया-पदी प्रतितिष्ठत्येवमेव[3] स्वर्गे लोके प्रत्यातिष्ठन् । प्रति स्वर्गे लोके तिष्ठति य एवं वेद ॥३॥ य उ ह वा एवं विदस्माल्लोकात्प्रैति स प्राण एव भूत्वा वायुमप्येति वायोरध्यभ्राण्यभ्रेभ्योऽधि वृष्टिं[4] वृष्ट्यै[4]वेमं लोकमनुविभवाति ॥४॥ ऋषयो ह सत्रमासां[5] चक्रिरे । ते पुनः पुनर्बह्वीभिर्बह्वीभिः प्रतिपाद्भिस्स्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचन बुबुधिरे ॥५॥ त उ श्रमेण तपसा व्रतचर्येणेन्द्रमवरुरु-धिरे ॥६॥ तं होचुस्स्वर्गं वै लोकमैप्सिष्म[6] । ते पुनः पुनर्बह्वीभि-र्बह्वीभिः[7] प्रतिपद्भिस्स्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचनाऽभुत्स्महि[8] ।

---

१ आस्येनेन । २–त्मा,–आँन् । ३–मत् । ४ पृ– । ५–त्र्– । ६ ऐप्सिष्ठ । ७ 'बह्वीभिर्' अधिक है । ८ ऽभुत्– । १० मेषन्त– ।

तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्स्वस्ति संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमियामेति ॥७॥ तान् होवाच को वस्स्थविरतम इति[1] ॥८॥४।१.४॥

अष्टमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अहमित्यगस्त्यः ॥१॥ स वा एहीति होवाच तस्मै[1] वै तेऽहं तद्वक्ष्यामि[2] यद्विद्वाँसस्स्वर्गस्य लोकस्य[3] द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्स्वस्ति संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमेष्यथेति ॥२॥ तस्मा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमुवाचाऽग्नौ वायावा[4]दित्ये प्राणेऽन्ने वाचि ॥३॥ ततो वै ते स्वगस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्स्वस्ति संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमायन् ॥४॥ एवमेवैवं विद्वान् स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तस्स्वस्ति संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमेति ॥५॥४।१.५॥

अष्टमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

एवं वा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमिन्द्रोऽगस्त्यायो-वाचाऽगस्त्य इषाय श्यावाश्वय इषश्श्यावाश्विर्गौषूक्तये गौषूक्ति-

१ 'अहमित्य्' (!) अधिक है ॥
१ नास्ति । २–क्षामि । ३ 'द्वारमवेत्ये' अधिक है । ४ वाय् ॥
१–गीत्–। २–प्रावो ।

र्ज्वालायनाय[3] ज्वालायनश्शाट्यायनये[4] शाट्यायनी रामाय क्रातु-
जातेयाय[5] वैयाघ्रपद्याय रामः क्रातुजातेयो वैयाघ्रपद्यः—॥१॥४।१६॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

—शङ्खाय बाभ्रव्याय शङ्खो बाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनाय[1]
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय[2] वारक्याय कँसो वार-
क्यस्सुयज्ञाय शाण्डिल्याय सुयज्ञश्शाण्डिल्योऽग्निदत्ताय शाण्डि-
ल्यायाऽग्निदत्तश्शाण्डिल्यस्सुयज्ञाय शाण्डिल्याय सुयज्ञश्शाण्डि-
ल्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो जनश्रुताय वारक्याय
जनश्रुतो[3] वारक्यस्सुदत्ताय पाराशर्याय[4] ॥१॥ सैषा शाट्यायनी
गायत्रस्योपनिषदेवमुपासितव्या ॥२॥४।१७॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

केनेषितम्पतति प्रेषितम्मनः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः ।
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुश्श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति ॥१॥
श्रोत्रस्य श्रोत्रम्मनसो मनो यद् वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः ।
चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेत्याऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥२॥

३ ज्वा—। ४—आये। ५ वाघ्या—॥

१—आय । २ पृ—। ३—ओ, और 'जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुते (!) वारक्यस् ' अधिक है । ४—ओ ।

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ।
न विद्म[1] न विजानीमो[2] यथैतद्[3]नुशिष्याद्[4] ॥३॥

अन्यदेव तद् विदितादथो अविदितादधि ।
इति शुश्रुम[5] पूर्वेषां ये नस्तद्व्याचचक्षिरे ॥४॥

यद् वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥५॥

यन्मनसा न मनुते येनाऽऽहुर्मनो[6] मतम् ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥६॥

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥७॥

यच्छ्रोत्रेण न[8] शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् ।
तदेव[9] ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥८॥

यत् प्राणेन न प्राणिति[10] येन प्राणः प्रणीयते ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥९॥४१८॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदि मन्यसे सुवेदेति दहमेवाऽपि नूनं त्वं वेत्थ ब्रह्मणो रूपं यदस्य त्व यदस्य देवेषु । अथ नु मीमांस्यमेव ते मन्येऽविदितम् ॥ १ ॥

---

१ विद्मु । २–म । ३ ऽथै अधिक है । ४–शिषु– । ५–श्रु– । ६ मन्यो । ७ मतेम । ८ मत् । ९ उपानुक है । १०–णीति ॥

नाऽहम्मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च ।

यो नस्तद् वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च ॥२॥

यस्याऽमतं तस्य मतम्मतं[1] यस्य न वेद सः ।

अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥३॥

प्रतिबोधविदितम्[2]मतममृतत्वं हि विन्दते ।

आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥४॥

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति । न चेदिहाऽवेदीन्महतीविनष्टिः ।

भूतेषु-भूतेषु विविच्य धीराः प्रेत्याऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति॥५॥४।१.६

दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये । तस्य ह ब्रह्मणो विजये देवा अमहीयन्त ।

त ऐक्षन्ताऽस्माकमेवाऽयं विजयः । अस्माकमेवाऽयं महिमेति ॥१॥

तद्धैषां विजज्ञौ । तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव । तन्न व्यजानन्त[1] किमिदं

यक्षमिति ॥२॥ तेऽग्निमब्रुवञ्जातवेद एतद् विजानीहि किमेतद्

यक्षमिति । तथेति ॥३॥ तद[2]भ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति ।

अग्निर्वा[3] अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥४॥ तस्मिँ-

१ अम्-। २-वित्-॥

१-अत । २-म् । ३ ऽहम्

स्त्वयि किं वीर्यमिति । अपीदं सर्वं दहेयम् यदिदम्पृथिव्यामिति ॥५॥

तस्मै तृणं निदधावेतद्दहेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाक दग्धुम् ।

स तत एव निववृते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यक्षमिति ॥६॥ अथ

वायुमब्रुवन् वायवेतद् विजानीहि किमेतद् यक्षमिति । तथेति ॥७॥

[४] तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति । वायुर्वा अहमस्मीत्यब्रवी-

न्मातरिश्वा वा अहमस्मीति[३] ॥८॥ तस्मिँस्त्वयि किं वीर्यमिति ।

अपीदं सर्वमाददीय यदिदम्पृथिव्यामिति ॥९॥ तस्मै तृणं

निदधावेतदादत्स्वेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाका-

ऽऽदातुम् । स तत एव निववृते[५] नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यक्षमिति ॥१०॥

अथेन्द्रमब्रुवन् मघवन्नेतद् विजानीहि किमेतद् यक्षमिति । तथेति ।

[६] तदभ्यद्रवत् । तस्मात् तिरोदधे ॥११॥ स तस्मिन्नेवाऽऽकाशे

स्त्रियमाजगाम बहु शोभमानामुमां हैमवतीम् । तां होवाच किमेतद्

यक्षमिति ॥१२॥४।२०॥

दशमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ब्रह्मेति होवाच ब्रह्मणो वा एतद् विजये महीयध्व इति । ततो

हैव विदांचकार ब्रह्मेति ॥१॥ तस्माद्वा एते देवा अतितरामि-

४–म । ५ निववृँन । ६ म (!) ।

वान्यान् देवान् यदग्निर्वायुरिन्द्रः । ते ह्येनन्नेदिष्ठम्[1]पस्पृशुस्[2]स ह्येनत्[3]
प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति ॥२॥ तस्माद् वा इन्द्रोऽतितरामिवा-
ऽन्यान् देवान् । स ह्येनन्नेदिष्ठम्पस्पर्श स ह्येनत् प्रथमो विदांचकार
ब्रह्मेति ॥३॥ तस्यैष आदेशो यदेतद् विद्युतो[4] व्यद्युतदा३ इति[5] ।
न्यमीमिषदा३[6] । इत्यधिदैवतम् ॥४॥ अथाऽध्यात्मम् । यदेतद्
गच्छतीव च मनोऽनेन चैतदुपस्मरत्यभीक्ष्णं[7] संकल्पः ॥५॥ तद्ध
तद्वनं नाम । तद्वनमित्युपासितव्यम् । स य एतदेवं वेदाऽभिहैनं
सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति[8] ॥६॥ उपनिषदम्भो ब्रूहीति । उक्ता
त उपनिषत् । ब्राह्मीं वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥७॥ तस्यै तपो
दमः कर्मेति प्रतिष्ठा[9] वेदास्सर्वाङ्गानि सत्यमायतनम् ॥८॥
यो[10] वा एतामेवं वेदाऽपहत्य पाप्मानमनन्ते स्वर्गे लोकेऽज्येये
प्रतितिष्ठति ॥९॥४।२१।

दशमेऽनुवाके चतुर्थःखण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१ नेदिष्मा,नेदिष्ठुम् । २ ते । ३ प्रन् । ४ विद्यु । ५ इती३ । ६ मीष् ।
७ सुक् । ८ सम्वँछन्ति । ९ प्रो । १०—प ॥

आशा वा[1] इदमग्र आसीद्भविष्यदे[2]व । तदभवत् । ता आपो-ऽभवन् ॥१॥ तास्तपोऽतप्यन्त । तास्तपस्तेपाना हुस्सिसेव प्राचीः प्राश्वसन् । स वाव प्राणोऽभवत् ॥२॥ ताः प्राण्याऽपानन् । स वा अपानोऽभवत् ॥३॥ ता अपान्य[3] व्यानन्[4] । स वाव व्यानो-ऽभवत् ॥४॥ ता व्यान्य समानन् । स वाव समानोऽभवत् ॥५॥ तास्समान्योदानन् । स वा उदानोऽभवत् ॥६॥ तदिदमेकमेव सधमाद्य[5]मासीदविविक्त[6]म् ॥७॥ स नामरूपमकुरुत । तेनैनद्व्य-विनक्[7] । वि ह पाप्मनो विच्यते य एवं वेद ॥८॥ तदसौ वा आदित्यः प्राणोऽग्नि[8]रपान[9] आपो व्यानो दिशस्समानश्चन्द्रमा उदानः ॥९॥ तद्वा एतदेकमभवत्प्राण एव । स य एवमेतदेकम्भ-वद्वेदैवं हैतदेकधा भवतीसैकधैव श्रे[10]ष्ठस्स्वानाम्भवति ॥१०॥ तदग्निर्वै प्राणो वागिति पृथिवी वायुर्वै प्राणो वागित्यन्तरिक्षमा-दित्यो वै प्राणो वागिति द्यौर्दिशो वै प्राणो वागिति श्रोत्रं चन्द्रमा वै प्राणो वागिति मनः पुमान्वै प्राणो वागिति स्त्री॥११॥ तस्येदं सृष्टं शिथिलम्भुवनमासीदपर्याप्तम् ॥१२॥ स मनोरूपमकुरुत ।

---

१ 'आशा वा' का पुनः पाठ है । २ येवू । ३ अपान । ४ प्-। ५-मावम् । ६-रैपम् । ७-विनोत् । ८-ह्म् । ९ उपा-।१० सॅ-॥

तेन तत्पर्याप्नोत्। इदं ह वा अस्येदं सृष्टमशिथिलम्भुवनम्पर्याप्तम्भवति य एवं वेद ॥१.३॥४।२२॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः।

सैषा[1] चतुर्धा विहिता[2] श्रीरुद्गीथस्सामार्क्यं ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥१॥ प्राणो वावोद्वाग्गी[3] स उद्गीथः ॥२॥ प्राणो वावामो वाक् सा तत्साम ॥३॥ प्राणो वाव को वागृक् तदर्क्यम् ॥४॥ प्राणो वाव ज्येष्ठो वाग्ब्राह्मणं तज्ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥५॥ उपनिषदम्भो ब्रूहीति[4]। उक्ता त उपनिषद्यस्य ते धातव उक्ताः[5]। त्रिधातु विषु वाव त उपनिषदमब्रूमेति[6] ॥ ६ ॥ एतच्छुक्लं कृष्णं ताम्रं सामवर्णं इति ह स्माह यदेव[7][8] शुक्लकृष्णो ताम्रो वर्णोऽभ्यवैति स वै ते वृद्धे[9] दशम[10] मानुषमिति त्रिधातु। स ऐक्षत क नु म उत्तानाय[11] शयानायेमा देवता बलिं हरेयुरिति ॥७।४।२३॥

एकादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः॥

स पुरुषमेव प्रपदनायाऽवृणीत ॥१॥ तम्पुरस्तात्प्रसन्नम्पा-

१ ऽसाश्। २ विहीता। ३ वगीः, गीः। ४ ब्रू।५–वः। ६–षद्। ७–दा। ८ वे। ९–त। १० दइश्; श् के पूर्व एक अक्षर पढ़ा नहीं जाता, कदाचित कटा है। ११ उक्तानाय॥

विशत् । तस्मा उरुरभवत । तदुरस उरस्त्वम् ॥२॥ तस्मा अत्रसद एता देवता बलिं हरन्ति ॥३॥ वाचमनुहरन्तीमग्निरस्मै बलिं हरति ॥४॥ मनोऽनुहरच्चन्द्रमा अस्मै बलिं हरति ॥५॥ चक्षुरनुहरदादित्योऽस्मै बलिं हरति ॥६॥ श्रोत्रमनुहराद्दिशोऽस्मै बलिं हरन्ति ॥७॥ प्राणमनुहरन्तं वायुरस्मै बलिं हरति ॥८॥ तस्यैते निष्खाताः[२] पन्था बलिवाहना[३] इमे प्राणाः । एवं हैतं निष्खाताः पन्था बलिवाहनास्सर्वतोऽपियन्ति[४] प्राणा य एवं वेद ॥९॥ सा हैषा ब्रह्मासन्दीमारूढा । आ हास्मै ब्रह्मासन्दीं हरन्त्यधि[५] ह ब्रह्मासन्दीं रोहति य एवं वेद ॥१०॥ तदेतद् ब्रह्मयशश्[६] श्रिया परिवृढम् । ब्रह्म ह तु सम् यशसा श्रिया परिवृढो भवति य एवं वेद ॥११॥ तस्यैष आदेशो[७] योऽयं दक्षिणोऽक्षन्नन्तः । तस्य यच्छुक्लं तदृचां रूपं यत्कृष्णं तत्साम्नां यदेव ताम्रमिव बभ्रुरिव[८] तद्यजुषाम्[७] ॥१२॥ य एवायं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजापतिस्समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवा समस्सर्वेण भूतेन । एष परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासितव्यम् ॥१३।४।२४॥

एकादशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

---

१ अदित्य् । २ खा । ३ बलि वाह । ४ ऽपय् । ५ हर ति । ६-श । ७ आ । ८-ऊर् ॥

सत्यञ्चाऽसत्यञ्चाऽसच्च सच्च वाक् च मनश्च [मनश्च] वाक् च चक्षुश्च[1] श्रोत्रं च श्रोत्रं च चक्षुश्च श्रद्धा च तपश्च तपश्च श्रद्धा च तानि षोडश ॥१॥ षोडशकलम्ब्रह्म । स य एवमेतत् षोडशकलम्ब्रह्म वेद तमेवैतत् षोडशकलम्ब्रह्माऽप्येति ॥२॥ वेदो ब्रह्म तस्य सत्यमायतनं शमः प्रतिष्ठा दमश्च ॥३॥ तद्यथा श्वः प्रैष्यन् पापात्कर्मणो जुगुप्सेतैवमेवाऽहरहः पापात्कर्मणो जुगुप्सेताऽऽकालात् ॥४॥ अथैषां दशपदी विराट् ॥५॥ दश पुरुषे स्वर्गनरकाणि । तान्येनं स्वर्गं गतानि स्वर्गं गमयन्ति नरकं गतानि नरकं गमयन्ति ॥६।४।२५॥

एकादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

मनो नरको वाङ् नरकः प्राणो नरकश्च चक्षुर्नरकश्श्रोत्रं नरकस्त्वङ्नरको हस्तौ नरको गुदं नरकश्शिश्नं नरकः पादौ नरकः ॥१॥ मनसा परीक्ष्याणि[1] वेदेति वेद ॥२॥ वाचा रसान्वेदेति वेद ॥३॥ प्राणेन गन्धान्वेदेति वेद ॥४॥ चक्षुषा रूपाणि वेदेति वेद ॥५॥ श्रोत्रेण शब्दान्वेदेति वेद ॥६॥ त्वचा संस्पर्शान्वेदेति वेद ॥७॥ हस्ताभ्यां कर्म्माणि वेदेति वेद ॥८॥ उदरेणा-

१--क्षश् ॥

१--क्षा ॥

ऽशनयां वेदेति वेद ॥९॥ शिश्नेन रामान्वेदेति वेद ॥१०॥ पादाभ्यामध्वनो वेदेति वेद ॥११॥ प्लक्षस्य प्राास्रवणस्य प्रादेशमात्रादुदक् तत्पृथिव्यै मध्यम् । अथ यत्रैते सप्तर्षयस्तद्दिवो मध्यम् ॥१२॥ अथ यत्रैत ऊषास्तत्पृथिव्यै हृदयम् । अथ यदे-तत्कृष्णं चन्द्रमासि तद्दिवो हृदयम् ॥१३॥ स य एवमेते द्यावा-पृथिव्योर्मध्ये च हृदये च वेद ना[2]ऽका[3]मोऽस्माल्लोकात्प्रैति ॥१४॥ नमोऽतिसामा[4]यैऽतु[5]रेताय धृतराष्ट्राय पार्थुश्रवसाय[6] ये च प्राणं रक्षन्ति ते मा रक्षन्तु । स्वस्ति । कर्मेति गार्हपत्यश्श[7]म इत्याह-वनीयोदम इत्यन्वाहार्यपचनः ॥१५॥४।२६॥

एकादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

कस्सविता । का सावित्री । अग्निरेव सविता । पृथिवी सावित्री ॥१॥ स यत्राऽग्निस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदाग्निः । ते द्वे योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥२॥ कस्सविता । का सावित्री । वरुण एव सविता । आपस्सावित्री ॥३॥ स यत्र वरुणस्तदापो यत्र वा[1]ऽऽपस्तद्वरुणः । ते द्वेयोनी । [तदेकम्मिथुनम्] ॥४॥

२–वद । ३–कामो । ४–सामय–सामाय । ५ एतुर । ६ पार्थुश्र–से ठीक किया हुआ है । ७–मश ॥

कस्सविता[1] । का सावित्री । वायुरेव सविता । आकाशस्सावित्री ॥५॥ स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तद्वायुः । ते द्वे[2] योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥६॥ कस्सविता[1] । का सावित्री । यज्ञ एव सविता । छन्दांसि सावित्री ॥७॥ स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र वा छन्दांसि तद्यज्ञः । ते द्वे[2] योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥८॥ कस्सविता[1] । का सावित्री । स्तनयित्नुरेव सविता । विद्युत् सावित्री ॥९॥ स यत्र स्तनयित्नुस्तद्विद्युद्यत्र वा विद्युत्[3] तत्स्तनयित्नुः । ते द्वे[2] योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥१०॥ कस्सविता[1] । का सावित्री । आदित्य एव सविता । द्यौस्सावित्री ॥११॥ स यत्राऽऽदित्यस्तद्द्यौर्यत्र वा द्यौस्तदादित्यः । ते द्वे[2] योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥१२॥ कस्सविता[1] । का सावित्री । चन्द्र एव सविता । नक्षत्राणि सावित्री ॥१३॥ स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः । ते द्वे[2] योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥१४॥ कस्सविता[1] । का सावित्री । मन एव सविता । वाक् सावित्री ॥१५॥ स यत्र मनस्तद्वाग्यत्र [वा] वाक् तन्मनः । ते द्वे[2] योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥१६॥ कस्सविता[1] । का सावित्री । पुरुष [एव] सविता । स्त्री सावित्री । स यत्र पुरुषस्तत् स्त्री[4] यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः । ते द्वे योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥१७॥४॥२७॥

द्वादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

---

१ स्स— २ प्रक्षेप किया गया है । ३—उत् । ४—ई: (!)

तस्या एष प्रथमः पादो भूस्तत्सवितुर्वरेण्यमिति । अग्निर्वै वरेण्यम् । आपो वै वरेण्यम् । चन्द्रमा वै वरेण्यम् ॥१॥ तस्या एष द्वितीयः पादो भर्गमयो भुवो भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥२॥ तस्या एष तृतीयः पादस्स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री[1] च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥३॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥४॥ स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥५॥ भूर्भुवस्स्वस्तत् सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयादित[2] । यो वा एतां सावित्री-मेवं वेदाऽप पुनर्मृत्युं तरति सावित्र्या एव सलोकतां जयति सावित्र्या एव सलोकतां जयति ॥६॥४॥२८॥

द्वादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

इत्युपनिषद्ब्राह्मणं समाप्तम् ॥

१—स्त्रैं । २ 'यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयत:' अधिक करो ॥

१—ऋषि—नामों की सूची।

वं० से वंश का अभिप्राय है।

अगस्त्य, ४।१५।१॥१६।१॥ वं० ।

अतिसाम पतुरेत, ४।२६।१५॥

अनुवक्ता सात्यकीर्त, १।५।४॥

अभयद् आसमात्य, ४।८।७॥

अभिप्रतारी, ३।१।२१॥२।२,३,१३॥

अभिप्रतारी काक्षसेनि १।५६।१॥३।१।२१॥

अयास्य, २।८।७,८॥११।८॥

अयास्य आङ्गिरस, २।७।२,६॥८।३॥

अषाढ उत्तर पाराशर्य ३।४१।१॥ वं०

आङ्गिरस, २।२।६॥ देखो अयास्य आं० ।

आजकेशी, १।६।३॥

आजद्विश, देखो बभ्र आ० ।

आट्णार, देखो पार आ० ।

आत्रेय, देखो दक्ष कात्यायनि आ०, शङ्ख शाट्यायनि आ० ।

आरुणि, १।४२।१॥

आरुणेय, २।५।१॥

आर्त्ताकायण, देखो गलूनस आ० ।

आह्लकेय, देखो हृत्स्वाशय आ० ।

आसमात्य, देखो अभयद आ० ।

इन्द्रोत दैवाप शौनक, ३।४०।१॥ वं० ।

इष श्यावाश्वि, ४।१६।१॥ वं०।

उच्चैःश्रवस कौपयेय, ३।२९।१,२,३॥

उत्तर, देखो आषाढ उ० पाराशर्य ।

उमा हैमवती, ४।२०।११॥

उलुक्य (!) जानश्रुतेय, १।६।३॥

उशनः काव्य, २।७।२,६॥

ऋष्यशृङ्ग काश्यप, ३।४०।१॥ वं० ।

एतुरेत (?), देखो अतिसाम ए० ।

ऐक्ष्वाक, देखो भगेरथ ऐ० ।

ऐक्ष्वाक वार्ष्णि, १।५।४॥

ऐतरेय, देखो महिदास ।

ऐन्द्रोति, देखो दृति ऐ० शौनक।

कंस वारकि, ३।४१।१॥ वं० ।

कंस वारक्य, ३।४१।१॥ वं० ।४।१७।१॥ वं० ।

कक्षीवन्त, २।५।११॥

कश्यप, ४।३।१॥

काक्षसेनि, देखो अभिप्रतारी का० ।

काण्ड्विय, ३।१०।२॥ देखो जनश्रुत का० । नगरी जानश्रुतेय का० ।
सायक जानश्रुतेय का० ।

कात्यायनि, देखो दत्त का० आत्रेय ।

कापेय, ३।२।२,१२॥ देखो शौनक का० ।

कारीरादि, २।४।४॥

काव्य, देखो उशनः का० ।

काश्यप, ३।४०।२॥ वं०। देखो ऋष्यशृङ्ग का०। देवतरः श्यावसायन
का० । शुष वाह्णेय का० ।

कुबेर वारक्य, ३।४१।१॥ वं० ।

कुरु, (एकव०) २।५६।१।(बहुव०)१।३८।१॥ देखो कौरव ।

कुरुपञ्चालाः, ३।७।६॥८।७॥३०।६,९॥४।६।२॥७।२॥

कृष्णदत्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० । देखो त्रिवेद कृ० लौहित्य।

कृष्णधृति सात्यकि, ३।४२।१॥ वं०।
कृष्णरात लौहित्य, ३।४२।१॥ वं०। देखो त्रिवेद कृ० लौहित्य।
केशी दार्भ्य, ३।२९।१,२॥
कौपयेय, देखो उच्चैश्श्रवः।
क्रातुजातेय, देखो राम क्रा० वैयाघ्रपद्य।
क्षैमि, देखो सुदक्षिण क्षै०।
गाश्रुनस प्राशीकायणा, १।६८।४॥
गन्धर्वाप्सरसः, १।४१।१॥५५।१०,११॥३।५।१॥
गुप्त, देखो वैपश्चित दार्ढजयन्ति गु० लौहित्य।
गोबल वार्ष्ण, १।६।१॥
गोश्रु (जाबाल), ३।७।७॥
गौतम (आरुणि) १।४२।१॥
गौश्रुक्ति, ४।१६।१॥ वं०।
चैकितानेय, १।३७।७॥२।५।२॥ (बहुव०) १।४१।१॥
देखो ब्रह्मदत्त चै०। वासिष्ठ चै०।
चैत्ररथि, देखो सत्याधिवाक चै०।
जनश्रुत काण्डविय, ३।४०।२॥ वं०।
जनश्रुत वारक्य, ३।४१।१॥ वं०।४।१७।१॥ वं०।
जमदग्नि, ३।३।११॥४।३।१॥
जयक लौहित्य, ३।४२।१॥ वं०।
जयन्त, देखो यशस्वी ज० लौहित्य।
जयन्त पाराशर्य, ३।४१।१॥ वं०।
जयन्त वारक्य, ३।४१।१॥ वं०। (इस नाम के दो व्यक्ति) ४।१७।१॥ वं०।
जानश्रुत, देखो नगरी जा० काण्डविय।
जानश्रुतेय, देखो उलुक्य जा०। सायक जा० काण्डविय।
जाबाल, ३।९।९॥ (द्विव०) ३।७।२,३,५,७,८॥ देखो गोश्रु शुक्र।

जैवलि, १।३८।४॥

ज्वालायन, ४।१६।१॥ वं० ।

त्रसदस्यु, २।५।११॥

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

दक्ष कात्यायनि आत्रेय, ३।४१।१॥ वं० ।

दृढजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

दार्ढजयन्ति, देखो वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य, वैपश्चित दा० दृढजयन्त लौहित्य ।

दाल्भ्य, देखो केशी दा० ।

दाल्भ्य (ब्रह्मदत्त चैकितानेय), १।३८।१॥५९।२॥

दाल्भ्य, देखो बक दा० ।

दृढजयन्त, देखो विपश्चित दा० लौहित्य, वैपश्चित दार्ढजयन्त दृ० लौहित्य ।

धृति ऐन्द्रोति शौनक, ३।४०।२॥ वं० ।

देवतरस् श्यावसायन काश्यप, ३।४०।२॥ वं० ।

देवाप, देखो इन्द्रोत दै० शौनक ।

धृतराष्ट्र, ४।२६।१५॥

नगरी जानश्रुतेय काण्ड्विय, ३।४०।१॥ वं० ।

नाक, ३।१३।५॥

पतङ्ग प्राजापत्य, ३।३०।३॥

परमेष्ठी प्राजापत्य, ३।४०।२॥ वं० ।

पलिगुप्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

पाराशर्य, देखो आषाढ उत्तर पा० । जयन्त पा० । वैपश्चित शकुनिमित्र पा० । सुदत्त पा० ।

पार्थश्रवस , ४।२६।१५॥

पाष्ण्यो शेखन, २।७।८॥

पुलुष प्राचीनयोग्य, ३।४०।२॥ वं०।

पृथु वैन्य, १।१०।९॥३४।६॥४५।१॥

पौलुषि, देखो सत्ययज्ञ पौ० प्राचीनयोग्य।

पौलुषित, देखो सत्ययज्ञ पौ०।

प्रतीदर्श, ४।८।७॥

प्राचीनयोग्य, १।३९।१॥ देखो पुलुष प्रा०। सत्ययज्ञ पौलुषि प्रा०। सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्रा०।

प्राचीनशाल (बहुव०), ३।१०।१॥

प्राचीनशालि, ३।७।२,३,५,७॥१०।१॥

प्राजापत्य, देखो परमेष्ठी प्रा०।

प्रातृद भाल्ल, ३।३१।४॥

प्रास्रवण, देखो प्लक्ष प्रा०।

प्रोष्ठपाद वारक्य, ३।४१।१॥ वं०।

प्लक्ष प्रास्रवण, ४।२६।१२॥

बक दाल्भ्य, १।९।३॥४।७।२॥

बभ्र आजद्विष, २।७।२,६॥

बाभ्रव्य, देखो शङ्ख बा०।

ब्रह्मदत्त चैकितानेय, १।३८।१॥५९।१॥

भगेरथ ऐक्ष्वाक, ४।६।१,२॥

भाल्ल, देखो प्रातृद भा०।

माल्लविन (बहुव०), २।४।७॥

मनु, ३।१५।२॥

महिदास ऐतरेय, ४।२।११॥

मातरिश्वन्, ४।२०।८॥

मानव, देखो शर्याति मा०।

मित्रभूति लौहित्य, ३।४२।१॥ वं०

सुश्रुत सामश्रवस, ३।१।८॥
यशस्वी जयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।
राम क्रातुजातेय वैयाघ्रपद्य, ३।४०।२॥ वं० । ४।१६।१॥ वं०
लौहित्या, १।५६।७,१०॥
लौहित्य, देखो कृष्णदत्त लौ०, कृष्णरात लौ०, जयक लौ०, त्रिवेद कृष्णरात लौ०, दक्ष जयन्त लौ०, पल्लिगुप्त लौ, मित्रभूति लौ०, यशस्वी जयन्त लौ०, विपश्चित् दृढजयन्त लौ०, वैपश्चित दार्ढजयन्ति गुप्त लौ०, वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौ०, श्यामजयन्त लौ०, श्यामसुजयन्त लौ०, सत्यश्रवस् लौ० ।
वसिष्ठ, ३।२।१३॥१५।२॥१८।६,७॥ तुल० वासिष्ठ ।
वारकि, देखो कंस वा० ।
वारक्य, देखो कंस वा०, कुबेर वा०, जनश्रुत वा०, जयन्त वा०, प्रोष्ठपाद वा० ।
वार्ष्ण, देखो ऐन्द्वाक वा०, गोबल वा० ।
वासिष्ठ चैकितानेय, १।४२।१॥
वाहेय, देखो श्रुष वा० काश्यप ।
विपश्चित् दृढजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।
विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य, ३।४१।१॥ वं० ।
विश्वामित्र, ३।३।७॥१५।१॥ (बहुव०) ३।१५।१॥ तुल० वैश्वामित्र ।
वैकुण्ठ (इन्द्र), ४।५।१॥१०।१०॥
वैन्य, १।४५।८॥ देखो पृथु वै० ।
वैपश्चित दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।
वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।
वैमृध (इन्द्र), ४।१०।१०॥
वैयाघ्रपद्य, देखो राम क्रातुजातेय वै० ।

शकुनिमित्र, देखो विपश्चित् श० पाराशर्य ।

शङ्ख बाभ्रव्य, ३।४१।१॥ वं० । ४।१७।१॥ वं० ।

शङ्ख शाट्यायनि आत्रेय, ३।४०।१॥ वं० ।

शर्व, ४।१०।१०॥

शर्यात मानव, ३।७।१॥८।३,५॥

शाट्यायनि, १।६।२॥३०।१॥२।२।८॥४।३॥६।१०॥३।१,३।६॥२८।५॥
४।१६।१॥ वं० । १७।१॥ वं० । देखो शङ्ख शा० आत्रेय ।

शाण्डिल्य, देखो सुयज्ञ शा० ।

शालावत्य, १।३८।४॥

शुक्र (जाबाल), ३।७।७॥

शैलन (बहुव०),१।२।३॥२।४।६॥ देखो पार्ष्ण शै० सुचित्त शै० ।

शौनक, १।५६।२॥ देखो इन्द्रोत दैवाप शौ०, इति पन्द्रोति शौ० ।

शौनक कापेय, ३।१।२१॥

श्यामजयन्त लौहित्य (इस नाम के दो व्यक्ति), ३।४२।१॥ वं०।

श्यामसुजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

श्यापर्णायन, देखो देवतरस् श्या० काश्यप ।

श्यावाश्वि, देखो इश श्या० ।

श्रुष वाह्नेय काश्यप, ३।४०।१॥ वं० ।

श्वाजनि (एक वैश्य), ३।५।२॥

सत्ययज्ञ पौलुषित, १।३९।१॥

सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचीनयोग्य, ३।४०।१॥ वं० ।

सत्यश्रवस् लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

सत्याधिवाक चैत्ररथि, १।३९।१॥

सात्यकि, देखो कृष्णधृति सा० ।

सात्यकीर्त (बहुव०), ३।३२।१॥ देखो अनुवक्ता सा० ।

सात्ययज्ञि (बहुव०), २।४।५॥ देखो सोमशुष्म सा० प्राचीनयोग्य ।

सामश्रवस, देखो मुञ्ज सा० ।
सायक जानश्रुतेय काण्डविय, ३।४०।२॥ वं० ।
सुचित्त शैलन, १।१४।४॥
सुदक्षिण, ३।७८।८।६। (देखो सुदक्षिण क्षैमि)
सुदक्षिण क्षैमि, ३।६।३॥७।१.४.५.६॥ (देखो सुदक्षिण) ।
सुदत्त पाराशर्य, ३।४१।१॥ वं० ४।१७।१॥ वं० ।
सुयज्ञ शाण्डिल्य, ४।१७।१॥
सोमबृहस्पति (द्विव०), १।५८।९॥
सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोग्य, ३।४०।२॥ वं० ।
हृत्स्वाशय आल्लकेय, ३।४०।२॥ वं०।
हैमवती, देखो उमा है० ।

२—निर्वचनादि सूची ।

अक्षर, १।२४।१॥४३।८।१।२४।२॥ ४३।८॥
अन्तरिक्ष, १।२०।४॥
अयास्य, २।८।७॥११।८॥
अकर्य, ४।२३।४॥
[illegible], १।४०।७॥
असुर, ३।३५।३॥
आङ्गिरस, २।११।९॥
आदि, १।११।७॥१६।२॥
आदित्य, ४।२।९॥
आवर्त्त, ३।३३।७॥
उरस्, ४।२४।२॥
ऋच्, १।१५।६॥
गायत्र, ३।३८।४॥
देवश्रुत, १।१४।३॥
पतङ्ग, ३।३५।२॥
प्रदयत, १।५६।६॥
प्रतिहार, १।११।९॥
प्रसाम, प्रसामि, १।१५।४॥
प्रस्ताव, १।११।६॥
बृहस्पति, २।२।५॥
भीमल, १।५७।१॥
मधुपुत्र, १।५५।१॥
महीया, १।४८।५॥
रुद्र, ४।२।६॥
रोदसी, १।३२।४॥
वसु, ४।२।३॥
वैश्वामित्र, ३।३।६॥

शतसनि, १।५०।४॥

सञात, १।४८।३॥

समुद्र, १।२५।४॥

सोमन्, १।३३।७॥ ४०।९॥४८।७॥ ५१।२॥४।१३।२॥ १।१२।५॥ १।५३।५॥
 ५९।२॥४।२३।१॥

सिन्धु, १।२९।४॥

सुवर्ग, ३।२४।४॥

हरि, १।४४।५॥

३-(क) ऋचादिसूची ।

अदितिर्द्यौरदितिः, १।४१।४॥ ऋ० १।८९।१०॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानाम्, ३।३७।१॥ ऋ०१।१६४।३१॥

आत्मा देवानामुत मर्त्यानाम्, ३।२।४॥ तु०छां० उ० ४।३।७॥

आयुर्माता मतिः पिता, ४।१।७॥

इन्द्रमुक्थमृचम्, १।४५।१॥

इमामेषाम्पृथिवीम्, १।२४।७॥ अथ०१०।८।३९॥

उतैषां ज्येष्ठः, ३।१०।१२॥ अथ० १०।८।२८॥

उपाऽस्मै गायत, ३।३८।६,८॥ ऋ० ९।११।१॥

ऋषय एते मन्त्रकृतः, १।४५।२॥

चत्वारि वाक् परिमिता, १।७।३॥४०।१॥ ऋ० १।१६४।४५॥

तत्सवितुर्वरेण्यम्, ४।२८।१॥ ऋ० ३।६२।१०॥

त्र्यायुषं कश्यपस्य, ४।३।१॥ तुल०, अ० ५।२८।७॥

नवो नवो भवसि, ३।२७।११॥ तुल०, ऋ० १०।८४।१९॥

पतङ्गमक्तम्, ३।३५।१॥ ऋ० १०।१७७।१॥

पतङ्गो वाचम्मनसा, ३।३६।२॥ ऋ० १०।१७७।२॥

मयीदं मन्ये भुवनादि, ३।१७।६॥

महात्मनश्चतुरो देवः, ३।२।२॥ तुल० छां० उ० ४।३।६॥

यदूद्यावा इन्द्र ते शतम्, १।३२।१॥ ऋ० ८।७०।५॥
यस्सप्तरश्मिर्वृषभः, १।२६।७॥ ऋ० २।१२।१२॥
येऽग्नयः पुरीष्याः, ४।१।३॥ य० १८।६७॥
येभिर्वात इषितः, १।३४।६॥ अथ० १०।८।३५॥
रूपं-रूपम्प्रतिरूपः, १।४४।१॥ ऋ० ६।४७।१८॥
रूपं-रूपम्मघवा, १।४४।६॥ ऋ० ३।५३।८॥
स नो मयोभूः, ४।३।२॥
स यदा वै म्रियते, १।४।७॥
स्त्री स्मैवाऽग्रे, १।५६।५॥
स्थूणां दिवस्तम्भनीम्, १।१०।६॥

(ख)

अभिजिदस्यभिजय्यास्म, ३।२०।१०॥
अमोऽहमस्मि, (दीर्घपाठ), १।५४।६॥ (संक्षिप्त), ५८
अरययस्य वत्सोऽसि, ४।४।१॥
उपावर्त्तध्वम्, ३।१६।१॥३४।२॥
गुहासि देवोऽसि, ३।२८।१॥
दिशस्था श्रोत्रम्, १।२२।६॥
देवेन सवित्रा, ३।१८।३,६॥
पुरुषः प्रजापतिः, १।४६।३,४॥
प्राणा३ प्राणा३ प्राणा३, २।२।७॥
महाम्महा समभव्त, ३।४।५॥
यत्पुरस्तात्प्रासीन्द्रः, ३।२१।१॥
विभूः पुरस्तात्सम्पत्, ३।२७।१॥
व्युषि सविता भवसि, ४।५।१॥
श्वेताश्वो दृश्यतो, ४।१।१॥
सत्यस्य पन्था, ३।२७।१०॥
सोमः पवते, ३।१६।१॥३४।२॥

DELHI UNIVERSITY
LIBRARY

Ac. No. Date of release for loan
6 MAY 1963

This book should be returned on or before the date last stamped below. An overdue charge of 0.6 nP. will be charged for each day the book is kept overtime.